

नैपाल : अतीत और वर्तमान

लेखक

श्री शकरसहाय सबसेना

डायरेक्टर राजस्थान कालज जमपुर भूतपूर्व प्रिंसिपल वनस्थली
विद्यापीठ तथा प्रिंसिपल महाराणा भूपाल कालेज उदयपुर,
एथ भूतपूर्व शिक्षा सचालक (राजस्थान)

प्रकाशक

नवयुग ग्रन्थ कुटीर
बीकानेर

प्रकाशक
नवयुग ग्रन्थ कुटीर
धीरानेर

प्रथम संस्करण १९६५
मूल्य १० रुपए

मुद्रक
एज्यूकेशनल प्रेस
धीरानेर

भूमिका

नपाल भारतवासियों के लिए अत्यन्त प्राचीन काल से आक्रमण का केंद्र रहा है। उसका कारण यह है कि यद्यपि राजनीतिक दृष्टि से नेपाल एक स्वतंत्र देश था परन्तु नेपालियों में भारतीय रुचि है, वहाँ का धर्म, संस्कृति, रीति रिवाज, कला-कौशल मान्यताएँ भारतीय हैं। हजारों वर्षों से नेपाल और भारत के अटूट संबंध रहे हैं। ब्रिटिश-काल में जब भारत पराधीनता की शृंखला में जकड़ा हुआ था तो भारतीय नेपाल को स्वतंत्र देखकर प्रसन्न होते थे और आत्म-संतोष करते थे। राजवंश वही नहीं नेपाली नागरिकों के विवाह सम्बंध भी भारत से होते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि भारत और नेपाल के सम्बंध इतने दृढ़ और समीप के हैं कि नेपाली जब भारत में आता है तो वह यह नहीं मानता कि वह विदेश में आया है। भौगोलिक दृष्टि से तो नेपाल भारत भूमि का विस्तार मात्र है। पर्वत राज हिमालय के दक्षिण में होने के कारण नेपाल उत्तर भारत के मदानों से मिला है। यदि नेपाल पर शत्रु देश चीन का अधिकार हाजिब जाय अथवा नेपाल उससे प्रभाव में चला जाय तो वह भारत के आंगन में ही आजायगा। वास्तव में बात तो यह है कि भारत की सुरक्षा के लिए भी यह नितान्त आवश्यक है कि नेपाल और भारत एक सूत्र में बंधे रहें। नेपाल के हितों की दृष्टि से तो यह और भी आवश्यक है कि वह भारत से घनिष्ठ सम्बंध रखे नहीं तो उत्तर से उसके अस्तित्व को ही भयकर खतरा है।

भारत के स्वतंत्र हो जाने के उपरान्त हमारी सरकार न इस तथ्य का भुला दिया। नेपाल और भारत की उत्तरी रक्षा पक्षि तिव्वत का जब साम्राज्यवादी और विस्तारवादी चीन ने पदाक्रान्त किया तो हमने विरोध तक न किया। हमने जसा लज्जाजनक व्यवहार तिव्वत के साथ किया वह सदैव के लिए भारत के माथे पर कलक के टीके के समान चमकता रहेगा। विवश होकर नेपाल को भी तिव्वत पर चीन की प्रभुता को मान्यता देनी पड़ी। नेपाल के नेता भारत सरकार की निर्बलता को समझ गए। तभी से उनका भारत

पर स भरोसा उठ गया और वे भारत के शत्रु चीन की ओर झुकने लगे ।

दुर्भाग्यवश यदि कभी चीन तिब्बत की भांति नेपाल, सिक्किम और भूटान का उदरस्य कर सका और लद्दाख तथा नेफा में प्रवेश पा गया तो समस्त उत्तर भारत चीन से पदाक्रान्त होने से नहीं बच सकेगा । नेपाल की सुरक्षा भी भारत से बंधी हुई है । अस्तु भारतीयों और नेपालियों को यह तथ्य न भूल जाना चाहिए कि नेपाल और भारत का भविष्य प्रकृति द्वारा एक ग्रथि में बांध दिया गया है । यदि मूर्खतावश हमने इस ग्रथि को खोल दिया और नेपाल भारत से अलग हो गया तो उमका अस्तित्व तो समाप्त हो ही जायेगा चीन द्वारा पदाक्रान्त नेपाल भारत के लिए भी एक महान् खतरा बन जायेगा । दोनों देशों को इस तथ्य की पृष्ठभूमि को ध्यान में रखकर ही अपने सम्बंधों को निर्धारित करना चाहिए ।

अतएव दोनों देश एक दूसरे को जानें, यह नितान्त आवश्यक है । नेपाल नसर्गिक सौंदर्य का प्रद्वितीय भूखण्ड है वह वीर गोरखों का देश है जिनकी वीरता और गौरव ने दा महायुद्ध में सत्तार के महान् सेनापतिया का चकित कर दिया था जिन्हें आज भी ब्रिटेन अपनी सेना में भर्ती करने के लिए लाचार्यित रहता है । अस्तु अग्रजी में नेपाल के सम्बंध में अनेक सुंदर पुस्तकें लिखी गईं और प्रकाशित हुईं । परंतु हिंदी में नेपाल के सम्बंध में साहित्य लगभग नहीं के बराबर है । लेखक ने इस पुस्तक के द्वारा इस कमी को पूरा करने का प्रयत्न किया है । हिंदी भाषा भाषियों में यदि इस पुस्तक द्वारा नेपाल के सम्बंध में रुचि उत्पन्न हुई और वे नेपाल के महत्त्व को जान सके तो लेखक अपना परिश्रम सफल समझगा । पुस्तक लिखने में यह ध्यान रक्खा गया है कि नेपाल के भूगोल इतिहास राजनीति और आर्थिक समस्याओं के सम्बंध में पर्याप्त जानकारी दी जाय ।

राजस्थान कलिङ्ग, जयपुर

शंकर सहाय सक्सेना

विषय-सूची

अध्याय पहला	नपाल देश	१
अध्याय दूसरा	नपाल का प्राचीन इतिहास	११
अध्याय तीसरा	पाल्पा किराती और छियालीस राज्य	२१
अध्याय चौथा	गुरखा अथवा गोरखाली	२६
अध्याय पांचवां	गोरखा राजा पृथ्वीनारायण	२९
अध्याय छठा	नपाल का विस्तार	४२
अध्याय सातवा	भीमसेन थापा	६०
अध्याय आठवां	नपाल की शोचनीय स्थिति और कोट हत्याकांड	७०
अध्याय नवां	राणाशासन की स्थापना राणा जगबहादुर	८४
अध्याय दसवां	राणा उदीय बीरगमशेर व देवशमशेर	१०६
अध्याय ग्यारहवां	षड्रगमशेर भीमगमशेर जुद्धगमशेर तथा पद्मशमशेर	११५
अध्याय बारहवां	नपाल की जन जागृति	१२७
अध्याय तेरहवां	महाराजाधिराज त्रिभुवनवीरविक्रमशाह	१३७
अध्याय चौदहवां	क्रान्ति की सफलता राणागाही का पतन और जनतंत्र का उदय	१५०
अध्याय पंद्रहवां	प्रथम चुनाव, कोइराला मंत्रिमंडल तथा पचासत राज्य	१६७
अध्याय सोलहवां	महाराजाधिराज महेन्द्रविक्रमदेवशाह	१८०
अध्याय सत्रहवां	भारत और नपाल के सम्बन्ध	१९०
अध्याय अठारहवां	नपाल और चीन के सम्बन्ध	२०६
अध्याय उन्नीसवां	नपाल की आर्थिक समस्याएँ परिणिष्ट	२१५
		२३६

नेपाल : अतीत और वर्तमान

नेपाल देश

नेपाल भारत के उत्तर में तथा तिब्बत (चीन) के दक्षिण में पर्वत राज हिमालय की पर्वतमातृओं से घिरा हुआ देश है। इसके उत्तर में तिब्बत पूर्व में सिक्किम और पश्चिमी बंगाल दक्षिण में उत्तर प्रदेश और पश्चिम में उत्तर प्रदेश का कुमायूँ डिवीजन है। यह देश मोटे रूप से २६ और ३० डिग्री अक्षांश रेखाओं तथा ८० और ८८ डिग्री पूर्वी अक्षांश रेखाओं के बीच स्थित है। इसकी पश्चिम से पूर्व तक लम्बाई ५२० मील और औसत चौड़ाई ९० से १०० मील है। अधिकतम चौड़ाई १४० मील है। नेपाल का क्षेत्रफल ५५ हजार वर्ग मील और जनसंख्या ८५ लाख से अधिक है। प्राकृतिक दृष्टि से नेपाल को तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है।

तराई—नेपाल का दक्षिणी भाग तराई का प्रदेश है तराई की पट्टी पूर्व से पश्चिम तक फैली है। यह वस से सौस मील तक चौड़ी है। तराई में जल बहुत अधिक होने के कारण और भूमि नीची होने के कारण नमी बहुत अधिक है। इस प्रदेश की ऊँचाई केवल एक हजार फीट है भूमि नरम और समतल है वर्षा ९० इंच होती है। इस कारण तराई का प्रदेश अत्यन्त नम और सघन बना है आच्छादित है। मलरिया का जब्र तराई में मयकर प्रकोप है। सारा प्रदेश अस्वास्थ्यकर है। परन्तु तराई के सघन वन सतार में शेर आदि के शिकार के लिए अद्वितीय स्थान हैं। सतार का प्रत्येक महत्वपूर्ण शिकारी नेपाल की तराई में शिकार खेलने का स्वप्न देखता है। जिस शिकारी को नेपाल की तराई के सघन वनों में शिकार खेलने का अवसर मिलता है वह उस अहोमाय्य मानता है। तराई में कहीं कहीं वन को काट कर उपजाऊ मदान तयार किए गये हैं जहाँ खेती होती है। यहाँ की भूमि बहुत उबरा है। महा की मुरय पदावार चावल गन्ना जूट तथा तम्बाकू जो मुख्यतः भारत को निर्यात की जाती हैं। तराई नेपाल की दक्षिणी भूमि की पट्टी को कहते हैं जिसका क्षेत्रफल ८ हजार वर्ग मील है। इसके उत्तर में मगर का प्रदेश है जिसकी ऊँचाई ४ हजार फीट है। इसका क्षेत्रफल ६ हजार वर्ग मील है। यह घने जंगलों से भरा है यहाँ में मुख्यतः लकड़ी मिलती है। जहाँ जंगल साफ किये गये हैं वहाँ खेती होती है। गन्ना तिलहन तथा चावल यहाँ की मुख्य पदावार है। तिलहन का निर्यात होता है।

— मध्यप्रदेश—यह प्रदेश तराई तथा भोतरी हिमालय की आकाश

पृथ्वी पर्वत श्रेणियों के बीच घाटियों और पहाड़ियों का प्रवेश है। इसकी ऊँचाई सर्वत्र एक समान नहीं है। इस प्रदेश की ऊँचाई चार हजार फीट से १५००० फीट तक है। यह प्रदेश नेपाल का सबसे महत्वपूर्ण भाग है। यहाँ की उबरा घाटियों में नेपाल का सर्वोत्तम कृषि प्रदेश है और विस्तृत तथा घास से भरे हुए घनी चरागाह हैं जहाँ अगणित पशु चराए जाते हैं। यहाँ शीतोष्ण और आर्द्र पर्वतीय प्रदेश की जलवायु उपलब्ध होने से उसी प्रकार की पशुचार होती है। यहाँ की औसत वर्षा ४० इंच है।

भीतरी हिमालय—यह प्रदेश नेपाल के उत्तर में उत्तरी सीमा पर एक ऊँची बीवार के समान खड़ा है। यह सारा प्रदेश गगनचुम्बी पर्वत श्रेणियों से भरा है और इसी प्रदेश में ससार के कुछ अत्यन्त महत्वपूर्ण ऊँचे पर्वत शिखर विद्यमान हैं। नेपाल का यह प्रदेश सत्रह हजार फीट से २९ हजार फीट तक ऊँचा है और यह हिम से आच्छादित रहता है। एक प्रकार से यह ऊँचा प्रदेश नेपाल का उत्तर में बड़ा प्रहरी है। अभी तक नेपाल और भारत हिमालय की गगनचुम्बी प्राचीर के कारण अपनी उत्तरी सीमा को सुरक्षित समझते थे परन्तु पिछले वर्षों में चीन ने दक्षिण में जिस प्रकार अपना विस्तार करना आरम्भ किया है उससे यह सुरक्षा समाप्त होगई है। आज नेपाल और भारत को चीन के विरुद्ध अपनी उत्तरी सीमा की रक्षा के लिये सजग और सतक रहना पड़ता है।

पर्वतमालाएँ—नेपाल की उत्तरी सीमा पर गगनचुम्बी हिम आच्छादित पर्वतमालाएँ ससार में सबसे ऊँची हैं। पूव से पश्चिम तक फली हुई इन पर्वतमालाओं में ससार के अनेक प्रसिद्ध हिमाच्छादित शिखर हैं। सागरमाथा (माउन्ट एवरेस्ट) मकालू, धौलागिरि अन्नपूर्णा किचिनजंगा तथा अन्य पञ्चास से अधिक शिखर इन्हीं पर्वतमालाओं में स्थित हैं। हिमाच्छादित पर्वतीय प्रदेशों का ऐसा नसर्गिक सौन्दर्य ससार में कहीं भी बताने को नहीं मिलता। वह अमृतपूष दृश्य देखने और उस पर्वतीय प्रदेश के सौन्दर्य को निरखने के लिये ही असह्य पर्यटक पृथ्वी के कोने कोने से नेपाल आते हैं। सच तो यह है कि पृथ्वी का अन्य कोई देश नेपाल के इस नसर्गिक पर्वतीय सौन्दर्य की समता नहीं कर सकता।

नेपाल के मुख्य शिखर नीचे लिखे हैं—

(१) सागर माथा (माउन्ट एवरेस्ट)—२९१४१ फीट (२) बचनधारा २८१४६ फीट (३) मकालू—२७७९० फीट (४) लहात्से—२७१९० फीट (५) धौलागिरि—२६८१० फीट (६) चोयू—२६५६७ फीट, (७) मनसुला—२६,६५८ फीट (८) अन्नपूर्णा—२६ ३९१ फीट (९) गान्त घान—२६ २९१ फीट (१०) हिमाल चली—२५,८०१ फीट (११) गौरीगकर—२३ ४४० फीट। इनके अतिरिक्त नेपाल में ३८ और ऐसी चोटियाँ हैं जिन पर न तो अभी तक आगोहन हुआ है और न उनको अभी तक कोई नाम ही दिया गया है। यह शिखर २२ हजार फीट से अधिक ऊँचे हैं।

नदियाँ—नेपाल में ऊँची पर्वतमालाओं के अतिरिक्त मध्य में बहुत सी नदी घाटियाँ हैं। यह घाटियाँ क्षेत्रफल तथा ऊँचाई में एक समान

नहीं हैं इनके क्षेत्रफल और ऊँचाई में बहुत विभिन्नता है।

काठमांडू घाटी जो नेपाल की घाटी के नाम से भी प्रसिद्ध है सबसे बड़ी घाटी है। इस घाटी का क्षेत्रफल २४२ वर्गमील है। यह समुद्रतल से ४५०० फीट ऊँची है इसी घाटी में नेपाल का तान सबसे बड़े नगर स्थित है। काठमांडू (राजधानी) पाटन (ललितपुर) और भक्तपुर (भट गाँव) इसी घाटी में हैं। काठमांडू घाटी में तीन नदियाँ बहती हैं। बागमती अत्यंत पवित्र नदी है जो घाटी के जल को लेकर गंगा में मिलती है। इसके अतिरिक्त इन घाटी में विन्नुमती और हनुमती नदियाँ और बहती हैं। यह दोनों नदियाँ बागमती की सहायक हैं। पूव में भोजपुर धनकुला घाटी है जिनमें सप्तकोशी नदी बहती हुई भारत में कोशी के नाम से बहती है। मध्य नेपाल में पाल्पा की घाटी है जिसमें कृष्णाकाली गडकी नदी बहती है जो दक्षिण में गडक के नाम से (उत्तर प्रदेश) भारत में बहती है। नेपाल के पश्चिम में राप्ती और बरनाली नदियाँ बहती हैं। बरनाली जब भारतमें घुसती है तो उसका नाम घाघरा हो जाता है। प्रायः चलकर यह गंगा से मिल जाती है।

पाषाण और राप्ती की घाटियों में मछलियाँ बहुतायत से मिलती हैं। इन घाटियों में पथक मछली का गिकार नौका वाहन तथा पत्तों का गिकार बहुत करते हैं। इन घाटियों में कृषिपथ सत्तार प्रसिद्ध नस गिक सौंदर्य स्थल हैं और यहां सत्तार प्रसिद्ध गिकारी तथा फोटोप्राफर आया करते हैं। इस पहाड़ी ढंग में इन नदियों में बहुत से सुन्दर जल प्रपात तथा झीलें हैं जिनका स्वच्छ जल और नमर्गिक सौंदर्य अनोखा है। इस देश के नसर्गिक सौंदर्य स्थलों की तुलना में सत्तार के बहुत कम सौंदर्य स्थल रहे जा सकते हैं। नेपाल की झीलें प्राकृतिक सौंदर्य की अद्वितीय निधि हैं और सत्तार के पथक उनका आनंद लने के लिए आते हैं। उनमें मुख्य झीलें आगे लिखी हैं, फेवा ताल, दिपांग ताल, मदी ताल, और रूप ताल इत्यादि। इन नसर्गिक स्थलों का बर्णन रक्तनी की सामग्री के बाहर है यह तो अनुभव ही किया जा सकता है।

पहाड़ों में खेती के लिए भूमि बहुत कम होने के कारण तथा अन्य कठिनाइयों के कारण यहाँ की जनसंख्या का निर्वाह नहीं हो सकता। यही कारण है लाखों की संख्या में नेपाली भारत में अपना जीवन निर्वाह करने के लिए आते हैं। पहाड़ों में जमींदारी तो नहीं के बराबर है फिर भी यहाँ की ज़िम्वाल (जमीनवाल) तराई के जमीं दारों की तरह ही किसानों का गोपण करके धनी बन जाते हैं। इन ज़िम्वालों का स्थानीय राज्य कर्मचारियों पर विगेष प्रभाव होता है। इस कारण न्यायालयों से किसानों का उनका विरुद्ध न्याय प्राप्त नहीं होता।

भौतरी मध्यदेश में कुछ कृषि योग्य भूमि अवश्य है परन्तु वह खास मध्यदेश की भाँति उपजाऊ नहीं है। भौतरी मध्यदेश से महुँ, बाजरा, तथा उरद विगेष रूप से उत्पन्न होते हैं। यहाँ बैल की मो खेती होती है।

पश्चिमी भौतरी मध्यदेश के ज़िम्वाल प्रायः बड़ी बड़ी सोरों ही बरवाते हैं। सोर की भूमि ज़िम्वाल की होती है परन्तु आसामियों से

बिना मजदूरी दिए अथवा बहुत कम मजदूरी में जुताई बुवाई जाती है क्योंकि वे उसकी जमीन पर बसे हुए हैं। दूसरी प्रकार की भेती को 'सल' कहते हैं। 'सल जिमुवाल की भूमि होती है उसमें भूमि को आसामी को आपा बटार्न दे दी जाती है। फसल की आधी पदावार किसान जिमुवाल को दे देता है। तीसरी प्रकार की जोत बेगारी होती है। बेगारी जोत जिमुवाल की होती है परन्तु आसामी को बेगार में उस पर काम करना पड़ता है। जिमुवाल बेगारा में घी वृष लकड़ो, अनाज पल फूल भी किसानों से जबरदस्ती लता था।

सास तराई में खेती योग्य बहुत अधिक भूमि है। उसमें जमींदार बड़ी घडो सीरें करवाते हैं सरकार ने हरी बेगारी बढ़ करदी है उसे गरकाजूनी घोषित कर दिया गया है परन्तु पुरानी परम्परा एक साथ समाप्त नहीं होती। जमींदार किसानों को डरा धमकाकर बेगार ले लते हैं वे आसामी को गांव से निकाल देने की धमकी देते हैं। गांव वालों को पण्डल मिलकर जमींदार की सीर को जोतना बोना पड़ता है और फिर वे अपनी खेती करते हैं। गांव के पोखरो तालाबों बागों पर जमींदार का सर्वाधिकार होता है। किसान उनका उपयोग नहीं कर पाते। पोखरों तालाबों और गदिया की मछलियों पर भी जमींदार का ही अधिकार होता है।

गांवों में अधिकांश भूमि जमींदार की सीर होती है। शेष भूमि किसानों (आसामियों) को आपा बटार्न पर अथवा मालगुजारी पर उठा दी जाती है। सीर की बख्तमाल करने के लिए जमींदार गांव में सीर के मकान रखते हैं सीर के मकान में जमींदार का कारिदा तथा तीन चार सौरदार रहते हैं जो हलबाहा की सहायता से जमींदारी की सीर करवाते हैं। कारिदे और सौरदार किसानों का खूब शोषण करते हैं और उन पर अत्याचार करते हैं। कारिद जिन्हें मालगुजारी पर भूमि जोतने के लिए देते हैं। उनसे धूस लते हैं क्रांति के समय सीर के मकाना को किसानों ने गिरा दिया था।

पश्चिमीय तराई की भूमि व्यवस्था पूर्वी तराई की अपेक्षा तबथा भिन्न है। पश्चिमी तराई के किसानों के अधिकार में जो भूमि होती है उसे तिरजा या नम्बरी कहते हैं। तिरजा की मालगुजारी जमींदार अथवा सरकार को दी जा सकती है। तिरजा के अतिरिक्त एक के फाम की भूमि होती है। के फाम की जमीन वस्तुतः जमींदार की और से किसान को मिली हुई होती है। तीसरे प्रकार की जोत 'उखडा भूमि' कहलाती है। उखडा भूमि उस भूमि को कहते हैं जो जमींदार अथवा आसामी की ओर से किसी सासरे व्यक्ति को आपा बटार्न या मालगुजारी पर साल दो साल के लिए उठा दी जाती है। उखडा भूमि पर लगान बहुत ऊंचा लिया जाता है और 'वढ़पोत' लगान से अधिक धन भी लिया जाता है।

पूर्वी नेपाल तराई में भूमि व्यवस्था दूसरी तरह की है। यहाँ ऐसे भी जमींदार हैं जो इस धीस धीसा के जमींदार हैं परन्तु वे हजारों धीसों के जोतार होते हैं। पूर्वीय तराई में सीर की जिरापन और सीर के मकान को कामर कहते हैं। यहाँ सेत को आपा बटार्न पर तथा

लगान पर जोतने का आम रिवाज है ।
 नेपाल में भूमि—नेपाल की कुल भूमि का क्षेत्रफल ३ ४७ ९१,६८०
 एकड़ है जो कि मोटे रूप में नीचे लिखे अनुसार विभाजित किया जा
 सकता है ।

वनो से आच्छादित भूमि	३१ ३%
सदम हिम से ढकी रहनेवाली भूमि	१५ २%
अल्पाइन (ऊँच पर्वतीय) चरागाह	७ १%
नदियों, गाँवों तथा नगरों की आबादी से घिरी भूमि	१२ ५%
मौतोंड़ बजर भूमि (वेस्ट लैंड) जो खेती के योग्य बनाई जा सकती है	१६ २%
भूमि जिस पर खेती होती है	१७ ७%
	१००%

मुख्य फसलें—

फसलें	क्षेत्रफल हजार एकड़ों में	अनुमानित उत्पादन हजार मनों में
धान (चावल)	६५८४	९८७६०
मक्का ज्वार, बाजरा	२९२०	२९२००
गेहूँ	७६८	७६८०
तिलहन	४०८	२०४०
भाजू	५७६	८६४,०००
तम्बाकू	२८८	३४५६
पटसन (जूट)	७७	१००१
अन्य	१९०	१०००

तराई और भाभर प्रदेश—दुर्ग का सबसे गरम प्रभाग है । घास्तव
 में यह गंगा के मदान का ही भाग है । इसमें मदान और जंगल हैं ।
 यहाँ उष्ण कटिबंध की पदावार होती है । यह अत्यन्त उपजाऊ प्रभाग
 है और नेपाल का खसिहान कहलाता है । चावल, गेहूँ, मक्का तिलहन
 जूट सम्प्राकू यहाँ खूब पैदा होते हैं तथा वन सम्पत्ति तथा रकबी भी
 बहुत होती है । इसके अतिरिक्त आम, बेला, खीर और अमरुद खूब
 पैदा होते हैं और फलों की पदावार को बढ़ाने की बहुत अधिक सम्भावना
 बनाए हैं ।

मध्यप्रभाग में चावल, गेहूँ और मक्का की खूब पदावार होती है
 तथा नौगू नारंगी और शीतोष्ण कटिबंध के फल उत्पन्न होते हैं ।
 नेपाल में फलों की पदावार बढ़ाए जा सकने की बहुत अधिक
 सम्भावनाएँ हैं । सेव, नासपाती नौगू नारंगी चावाम तथा पिन्ते की
 पदावार बहुत बढ़ाई जा सकती है ।
 मध्यप्रभाग में दूध का घघा बहुत उत्पन्न हो सपता है । पहाड़ी
 प्रभाग में खेतों की सम्भावनाएँ कम हैं परन्तु पशुपालन होता है तथा
 दूध का घघा विकसित किया जा सकता है ।

भूमि व्यवस्था—नेपाल में भूमि का स्वामित्व तीन धर्मियों में
 बँटा है (१) रेकर (२) बिरता (३) गुठी । रेकर—यह भूमि है जो
 राज्य ने अपने पास रखती है जिससे जो मासगुजारी प्राप्त होती है ।

उसका क्षेत्रफल कितना है यह ज्ञात नहीं है।

बिरता—वह भूमि है जिसे राज्य ने व्यक्तियों को उनकी सेवाओं के उपलक्ष्य में दे दिया है। वे एक प्रकार की जागीरें हैं। बिरता भूमि कितनी है यह ज्ञात नहीं है परन्तु यह अनुमान किया जाता है कि बिरता भूमि सबसे अधिक है।

गुठी—वह भूमि है जो धार्मिक सस्थाओं तथा धार्मिक व्यक्तियों को दातव्य के रूप में दी गई है उस पर कोई कर नहीं लगाया जाता है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि दश में बस सात रोपानी भूमि इन धार्मिक सस्थाओं को गुठी के रूप में दी हुई है।

मपाल में नीचे लिखी धेणी के किसान होते हैं।

(१) स्वामी कृषक— जो अपनी भूमि पर खेती करते हैं।

(२) साम्रीदार किसान— जो भय किसो की भूमि पर खेती करते हैं और उनको पदावार का एक निश्चित हिस्सा देते हैं।

(३) आसामी किसान— जो भूमि के स्वामी से लगान पर भूमि लेकर खेती करते हैं।

(४) बिरता भूमि का आसामी किसान— बिरता भूमि जिसे राज्य के द्वारा खेती के लिए मिली है वह उसे आसामी को उठा देता है और उससे लगान वसूल करता है।

(५) एक यह किसान होता है जो अनुपस्थित भूमि के स्वामी की भूमि पर खेती करता है और उसे लगान देता है।

नेपाल की भूमि व्यवस्था भारत की रयतवारी प्रथा के अनुरूप ही है। तराई प्रदेश में मालगुजारी जमींदारों और पटवारियों के द्वारा वसूल की जाती है और पहाड़ी प्रदेश में जिम्मेवाल और ताल्लुक्दारों के द्वारा वसूल की जाती है। तराई में जमींदार को उसके द्वारा वसूल की हुई मालगुजारी पर ५ प्रतिशत और पटवारी को २५% कमीशन मिलता है। पहाड़ी प्रदेश में जिम्मेवाल और ताल्लुक्दारों दोनों को ही ५ प्रतिशत कमीशन मिलता है। काठमांडू घाटी में किसान सीधे खजाने में मालगुजारी जमा कराते हैं। वहाँ कोई बीचवाला नहीं है। तराई के जमींदार भारत के जमींदारों की भांति नहीं हैं। वे सरकार को ओर से मालगुजारी वसूल करते हैं। अपनी खेती के लिए सरकार उन्हें अलग से भूमि देती है जिसे पश्चिमी तराई में 'सोर' कहते हैं और पूर्वी तराई में 'जिरायत' कहते हैं। वे उस भूमि को बेच भी सकते हैं।

सिचाई—नेपाल में अधिकतर खेती वर्षा पर निर्भर करती है। केवल १२८००० एकड़ भूमि पर सिचाई होती है।

खेती की पदावार का निर्यात—नेपाल चावल आलू तिलहन, जूट, गन्ना सम्झाऊ का मुख्यतः निर्यात करता है। यदि बरसात आवे तो नेपाल का मुख्य निर्यात खेती की पदावार तथा धनों की लकड़ी तथा अन्य वन सम्पत्ति है।

किसानों का स्थिति

नेपाल के प्रथम राणा प्रधान मंत्री जगबहादुर ने तराई की भूमि को खेती करने वालों को न देकर बड़े बड़े चौधरियों (जमींदारों) तथा अपने चाटकार बरदारियों को दी। यही चौधरी और चाटकार बरदारों

यहाँ किसानों को भूमि से उठा कर उनका अनवरत शोषण करते रहे। फिर भी यमशः तराई में किसान खेती करने के लिए बसते गए।

महाराजा चंद्र शमशेर राणा ने अपने शासन काल में राज्य की आमदनी बढ़ाने के लिए तराई के प्रदेश में नापी (पमाइश) करवाई। नापी में भी बहुत धांधली और भ्रष्टाचार हुआ। जिसने जितनी अधिक रिश्वत दी उसकी उतनी ही अधिक भूमि मिल गई। लाखों की सख्या में खेत वाले किसानों की भूमि को महाजनो से घूस लकर सीर के रूप में लिख दी और किसान भूमि रहित कर दिए गए।

इसके पश्चात् तराई में नापी की प्रथा ही चल पड़ी। राणा सर कार नापी करने के लिए कुछ वर्षों के उपरान्त अपने बमबारी तराई में भेजती थी। नापी के समय फिर वही धांधली और भ्रष्टाचार की क्रिया दोहराई जाती थी। घूस दकर महाजन किसान की भूमि अपने नाम करवा लते थे। घूस लकर राज्य बमबारी गांव की मालगुजारी घटा देते न बने पर बढ़ा देते थे। नापी के द्वारा किसान का ऐसा मयकर शोषण होता था कि आज भी नापी के नाम से किसान भयभीत हो जाता है।

तराई का प्रदेश ही नेपाल का कृषि प्रदेश है। यहाँ जल की सुविधा है। भूमि उपर परन्तु जलवायु अच्छा नहीं है। नेपाल का यही कृषि प्रदेश है।

नेपाल के पहाड़ी लोग पत्थरों से लड़कर खेती करते हैं। नेपाल का पहाड़ी प्रदेश का किसान असा विकट परिश्रम करता है। उसकी तुलना ससार का कोई किसान नहीं कर सकता है। वह पत्थरों से लड़कर खेती करता है। पानी का यहाँ नितान्त अभाव है। सिंचाई के कोई साधन उपलब्ध नहीं हैं। वह दूर-दूर से घड़ों में पानी भर कर लाता है और उस जल से फसल को सींचता है। उसके परिश्रम की समता कोई अन्य देश का किसान नहीं कर सकता।

जलवायु

तराई प्रदेश का छोड़कर जहाँ उष्ण कटिबंधीय जलवायु है नेपाल के निम्न निम्न प्रदेशों में जलवायु निम्न रहता है। गर्मियों में तराई में सूख गर्मी रहती है। तापमान ९० डिग्री से ११० डिग्री तक ऊँचा बढ़ जाता है। उसी समय पहाड़ियों के क्षेत्र में तथा घाटियों में बसंत ऋतु रहती है और पर्वतीय प्रदेश में शीतकाल होता है। वर्षा ऋतु—जून के अंतसे १५ सितम्बर तक नेपाल में दक्षिण पश्चिमी मानसून से वर्षा होती है। यहाँ अधिकतर वर्षा गर्मियों में ही होती है। अन्य मौसमों में वर्षा बहुत कम होती है। पूर्वी भाग में वर्षा का औसत १०० इंच है परन्तु पश्चिम में वर्षा का औसत केवल ४० इंच है। काठमांडू की घाटी में ५७ इंच वर्षा का औसत है। तराई प्रदेश अर्थात् दक्षिणी सीमा प्रदेश में वर्षा ७५ इंच से ९० इंच तक होती है। वर्षा ऋतु में तापमान विभिन्न भागों में बहुत निम्न रहता है। नेपाल में उस समय उष्ण कटिबंध और आल्पस जैसे तापमान विभिन्न भागों में बचाने की मिस्रते हैं।

प्रदेश	औसत तापमान फरनहीट
तराई का प्रदेश	७५ से ११० तक
पहाड़ियों का प्रदेश	५० से ७० तक
काठमांडू घाटी	६५ से ८० तक
भीतरी हिमालय	३२ से ५५ तक

शरद ऋतु—वर्षा के उपरांत नवम्बर तक शरद का मौसम होता है। कभी कभी थोड़ी धर्रा हो जाती है। परन्तु उससे तापमान पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। नवम्बर में पहाड़ों पर बर्फ पड़ने लगती है। दृश्य अत्यन्त मनमोहक और सुहावना हो जाता है। उस समय तापमान नीचे लिखे अनुसार रहता है।

प्रदेश	औसत तापमान फरनहीट
तराई प्रदेश	६० से ८०
पहाड़ियों का प्रदेश	४० से ५०
काठमांडू की घाटी	५० से ६०

शीतकाल—दिसम्बर से फरवरी तक शीतकाल होता है। नेपाल की घाटी के चारों ओर जा नीची पर्वतश्रृंखला की बाजारें हैं उन पर बर्फ जम जाता है और उन पर सूर्य की किरणें पार कर घाटी के सौंदर्य को बहुत बढ़ा देती हैं।

तराई प्रदेश में तापमान का औसत ६० से ७० फरनहीट, पहाड़ियों के क्षेत्र में २४ से ४० तक और काठमांडू की घाटी में ३२° से ५५ तक रहता है।

बसंत ऋतु मार्च से मई तक होती है। यह नेपाल की सबसे सुहावनी ऋतु है। धनस्पति से समस्त प्रदेश लहलहाता हुआ एक विंगल उद्यान का रूप धारण कर लेता है और हिमालय पर्वत पर बरफ होती है। तराई प्रदेश का तापमान ६० से ९० फरनहीट पहाड़ियों के प्रदेश का ४० से ६० तक और काठमांडू घाटी का ५० से ७० तक रहता है।

नगर और जनसंख्या

नेपाल छोटे गांवों का देश है। देश में कुल गिलाकर २८७८० नगर बस्ते और गांव हैं परन्तु इनमें से ८५ प्रतिशत की आबादी पांच सौ व्यक्तियों से कम है। बग मर में केवल दस बस्ते या नगर ऐसे हैं कि जिनकी जनसंख्या पांच हजार से अधिक है। बग की तीन चौथाई जनसंख्या एक हजार का आबादी से कम के गांवों में रहती है। ऊपर लिखे दस बस्तों और नगरों में देश की कुल जनसंख्या का केवल ३ प्रतिशत निवास करती है उनमें से पांच बस्ते और नगर काठमांडू घाटी में हैं। चार बस्ते पूर्वी तराई में और एक मुद्गर पश्चिमी तराई में स्थित है। नीचे उन दस बस्तों और नगरों की जनसंख्या दी जाती है।

काठमांडू—१०६५७९ ललितपुर—४२,१८३ भक्तपुर—३२,३२० नेपालगञ्ज १०,८१३ धरिगञ्ज—१० २६ विमो—८६५७, विराट नगर ८०६० बार्तापुर—७०३८ जनकपुर—७०२७ राजपरातवा ५०७१ ऊपर के विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि नेपाल मुख्यत छोटे गांवों का देश है और यहां की ९५ प्रतिशत से अधिक जनसंख्या गांवों में रहती है।—

१९६१ की जनगणना के अनुसार नेपाल की जनसंख्या ९३,८७,६६१ थी। प्रतिवर्ग मील जनसंख्या का घनत्व १७२ व्यक्ति प्रति वर्ग मील था। वस वष पर जनसंख्या का घनत्व १५२ व्यक्ति प्रति वर्ग मील था। ऐसा अनुमान है कि प्रति एक हजार में पीछे ४५ जन दर तथा ३० मृत्यु दर है अस्तु प्रतिवर्ष प्रति हजार पीछे १५ की वृद्धि होती है अर्थात् नेपाल की जनसंख्या १२ प्रतिशत के हिसाब से प्रतिवर्ष बढ़ रही है।

प्रति व्यक्ति पीछे वार्षिक आय केवल ३५० नेपाली तिक्का है। नेपाली रुपए का मूल्य भारतीय रुपए का दो तिहाई से कुछ अधिक है। अतएव नेपाल एक जीवन-सिद्धि और जीवन दश है। प्रकृति ने उसको बहुमूल्य प्राकृतिक सम्पत्ति प्रदान की है परंतु नेपाल अभी उसका विकास नहीं कर सका है।

तीर्थभूमि नेपाल

नेपाल तीर्थ स्थला से मरा हुआ है। तिब्बत व लोग नेपाल को नेपा कहते हैं। तिब्बती भाषा में उसका अर्थ तीर्थयात्री होता है। वे लोग नेपाल को पुण्य तीर्थस्थान मानते हैं। हिन्दू धर्मावलम्बी भी नेपाल को धरती की दृष्टि से देखते हैं क्योंकि यहाँ बहुत से हिन्दुओं के तीर्थस्थान हैं। बौद्ध धर्मावलम्बीयों के लिए भी नेपाल महान तीर्थ है। तथागत नगवान बुद्ध ने यहाँ नाम लिया था तथा स्वप्नो घट्य महाबोध इत्यादि प्रसिद्ध मन्दिर यहाँ हैं।

यदि दखा जाय तो नेपाल ऐसा रमणीय देश है और वहाँ ऐसे नसगिक एकांत स्थान हैं जहाँ कि आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने वाला व्यक्ति पहाड़ों और घना जंगल में रह कर भाषना करते रहे हैं। वनों तथा पर्वतों का शान्त वातावरण मनुष्य के मन में सावगतिमान परम पिता परमेश्वर के प्रति सद्गति नक्ति उत्पन्न करता है। यही कारण है कि युग-युगों से भारतीय ऋषि और साधक यहाँ जाकर साधना और तपस्या करते हैं। हाँ नेपाल के इतिहास प्रसिद्ध तीर्थ स्थानों का नीचे बर्णन करेंगे।

पशुपतिनाथ—पशुपतिनाथ का शिवमन्दिर नेपाल का सबसे प्रसिद्ध प्राचीन तीर्थस्थान है। यह पवित्र यागमती नदी के किनारे है। समीप ही आर्याघाट है जहाँ गमशान तथा स्नान घाट है। यह पूव में हिन्दु तीर्थस्थानों में सबसे पुराने और प्रसिद्ध तीर्थस्थानों में से एक है। जहाँ भारतीय हिन्दू प्रतिवर्ष फाल्गुन के महीने में शिवचतुर्वशी के अवसर पर धरती सहित यहाँ दगा करने आते हैं। पशुपतिनाथ के दर्शन नेपाल के हिन्दू और तिब्बत के बौद्ध सभी करते हैं। वे सभी इस पवित्र तीर्थ स्थान को अत्यन्त श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। मन्दिर की कला अत्यन्त सुन्दर है। छतों पर सोने का सुन्दर काम है। अत्यन्त दीर्घ काल से यह पवित्र मन्दिर कोटि कोटि जन का श्रद्धा स्थल रहा है।

बोधनाथ—बोधनाथ की बौद्ध धरती भी कहते हैं। उसका स्वरूप एक स्तूप की भाँति है। स्तूप के ऊपर जो भाँति बनी हैं वे अत्यन्त प्रभावशाली और बलपूर्ण हैं। जो बमल दगा है उसमें बहुमूल्य रत्न जड़े हैं। नीचे धनुतरे पर प्रायना की मूर्तियाँ हैं जिनपर पवित्र धारक ओशम मान परम ओशम अंकित है।

जाड़ों में नवम्बर से एप्रिल तक तिब्बत सिक्किम भूटान तथा मध्यचीन से बौद्ध लोग यहाँ दर्शनाय आते हैं उस पर्व के समय पर सबसे महत्वपूर्ण पर्व सहस्रज्योति का पर्व होता है। उस समय समस्त मन्दिर इतने सुन्दर ढंग से सजाये जाते हैं कि बेवता भी उसके दर्शन को लालायित हो उठें। पूजन भी दर्शनीय और अनोखा होता है। एक हजार एक ज्योतिषी स्थापित की जाती हैं। वह दृश्य सप्ताह में एक अनोखा होता है जिसे एक घण्टा देखकर कोई विस्मरण नहीं कर सकता। इस मन्दिर का धार्मिक अध्यक्ष बिनाई लामा होता है जो बलाई लामा का प्रतिनिधि होता है।

स्वयम्भूनाथ—स्वयम्भूनाथ के सम्बन्ध में यह प्रसिद्ध है कि सप्ताह में यह सबसे प्राचीन बौद्ध मन्दिर है। ऐतिहासिक लक्षों के अनुसार यह अत्यन्त सुन्दर मन्दिर दो हजार वर्ष प्राचीन है। यह मन्दिर एक पहाड़ी पर बना है और पाँच सौ सीढ़ियाँ चढ़ कर वहाँ पहुँचा जा सकता है। मुख्य मन्दिर के अतिरिक्त उसमें १३ अन्य मन्दिर हैं जो बौद्धों के तेरहों स्वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनके स्वर्णालय समस्त धवस्थल में मय्यता भर दते हैं। मन्दिर में एक विशाल बौद्ध मूर्ति है। इस अत्यन्त प्राचीन मन्दिर की स्थापत्य कला और मूर्तिकला को देख मंगोल की कला की प्रगति करनी पड़ती है। इससे विदित है कि दो हजार वर्ष पूर्व भी मंगोल कला की दृष्टि से बहुत उन्नत था।

इसके अतिरिक्त गुहेश्वरी का मन्दिर तांत्रिक मुठों का अत्यन्त प्राचीन और श्रद्धा का स्थान है।

शाहमती विहार को जिसे छा बाहिल भी कहते हैं प्रिय दर्शी सम्राट अगोक की पुत्री राजकुमारी शाहमित्री ने बनवाया था। आज से हजारों वर्ष पूर्व जब शाहमित्री नेपाल आई थी तब यह विहार बना था। उसके पास ही एक ब्रूसरा विहार है जिसे मायाज बाहिल कहते हैं। ये दोनों ही विहार अत्यन्त मय्य हैं। उनकी भवन निर्माण कला बहुत आश्चर्य है। उनकी दीवारों पर भित्ति चित्र हैं जो कि मूल छवि रंगों में बने हैं वे कला के उत्कृष्ट नमूने हैं।

नेपाल का प्राचीन इतिहास

नेपाल का सम्बन्ध में एक अत्यन्त प्राचीन किवदन्ती है कि महान मजुशी सुदूर उत्तर महाघान के शिररान पर्वत मचारिया से चलकर लिम्बत के ऊँचे पठार की पार करते हुए और गगनचुम्बी पर्वत राज हिमालय के दरों की पार करते हुए नागवासा झील पर आए। नागवासा झील सलिल युद्ध जल से भरी हुई उस पर्वतीय घाटी में स्थित थी। मजुशी उस झील के चारों ओर घूमते हुए झील के दक्षिणी तट पर पहुँचे। वहाँ उन्होंने अपनी तलवार की ऊँचा उठाकर जोर से घटानों पर मारकर घटानों को काट दिया। मजुशी द्वारा घटानों के काट दिए जाने से पवित्र बाघमती नदी की जलधारा प्रवाहित हो गई। इस प्रकार महामारत पर्वत से निकलकर भारत के भवानों में बहती हुई पवित्र बाघमती पटना के नीचे गंगा से मिल जाती है। इस सम्बन्ध में दूसरी किवदन्ती यह कि भगवान विष्णु ने नागवासा झील की घटानों को काटकर झील के पानी को बाघमती की जलधारा में प्रवाहित कर दिया।

जब झील सूख गई तो मजुशी और दूसरी किवदन्ती के अनुसार भगवान विष्णु अपने सहस्रों के साथ वहाँ बस गए और जहाँ से नेवार जाति का जन हुआ जो नेपाल के आदि निवासी हैं। हजारों वर्षों के उपरान्त भारत से एक ऋषि ने-मुनी इस प्रदेश में आए उनके साथ गुप्त या गोपाल षण का एक राजकुमार भी था जो उस प्रदेश का शासक बन कर उस पर राज्य करता रहा। ने-मुनी को उस प्रदेश के लोग इतनी गहरी श्रद्धा से देखते थे कि वह पर्वतीय घाटी उनके नाम पर नेपाल कही जान लगी और जिस राजवंश की उन्होंने वहाँ स्थापित किया उसका उत्तराधिकारी अपने नामों के साथ गुप्त शब्द जोड़ने लगे। नेपाल का भारत से अत्यन्त प्राचीन सम्बन्ध रहा है। महामारत और तात्रिक प्रथम में उसके उल्लेख हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि अत्यन्त प्राचीन काल से वह भारत से सम्बन्धित था और वहाँ की जनसंख्या भारत से जाकर वहाँ बसनेवालों की ही सन्तान है।

कुछ लोगों की यह धारणा है कि क्षत्रगुप्त मौर्य ने नेपाल पर विजय प्राप्त की थी और ने-मुनी किसी गुप्त राजकुमार को लेकर नेपाल घाटी में पहुँचे। उन्होंने स्वयं अथवा उस राजकुमार के द्वारा गुप्त अथवा गोपाल राजवंश स्थापित किया।

घाटी पर आक्रमण किया, और ब्रिस्तानी शासकों का पतन हो गया। आक्रमणकारियों ने ब्रिस्तानियों को घाटी से खदेड़ दिया और वे पुनः अपने पूर्व निवास स्थान पहाड़ों में चले गए। अब नेपाल की घाटी में वमन राजवंश का उदय हुआ और वे यहाँ के शासक बने। इस राजवंश का पाँचवाँ शासक मास्करवमन अत्यन्त महत्वाकांक्षी और वीर था। उसने भारत के मदानों पर आक्रमण किया और पूर्व में समुद्र तक उसने भारत के मदानों को अपनी विजयवाहिनी से रौंद डाला। वमन राजवंश के शासनकाल में कला वाणिज्य, और साहित्य की अद्भुत उन्नति हुई। बात यह थी कि इस राजवंश के शासन काल में नेपाल की घाटी में बहुत लम्बे समय तक शान्ति रही। यही कारण था वहाँ की कला वाणिज्य और साहित्य की अद्भुतपूर्व उन्नति हुई। वमन राजवंश के इक्कीसवें उत्तराधिकारी महादववमन के शासन काल में नेपाल घाटी कला वाणिज्य और साहित्य के विकास में अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई थी। महादववमन स्वयं अत्यन्त विद्वान और कला प्रेमी सफल शासक था। उसका व्यक्तित्व अत्यन्त आकर्षक और प्रभावशाली था। उसके शासन काल में नेपाल राज्य नेपाल घाटी से बाहर पूर्व में फैल गया था और पश्चिम में गडक नदी तक उसका विस्तार हो गया। इस राजवंश के अन्तिम शासक निवदववमन के कोई पुत्र नहीं था। केवल एक पुत्री थी। निवदववमन ने अपनी पुत्री का विवाह गुड सूर्यवंशी क्षत्रिय अमसूरवमन जो ठाकुर जाति का था और सम्भवतः उत्तर भारत के अवध प्रवन्ग का था से कर दिया। निवदववमन ने नेपाल का सिंहासन अपने जामाता अमसूरवमन को दे दिया और अपने सबधियों को जागीरें बांट दीं। उसके उपरांत वह स्वयं भजन पूजन करने के लिए एकान्तवास करने में चला गया। यह छोटी दाताम्बी के अन्त और सातवाँ के आरम्भ की घटना है। अब निवदववमन एकान्तवास में चला गया तो नेपाल की घाटी में गृह कलह अगान्ति और विपत्ति का घोर ताण्ड्य आरम्भ हो गया। निवदववमन अपने एकान्तवास से वापस आया और उसने स्थिति को सम्भालने का प्रयत्न किया परन्तु उसे सफलता नहीं मिली। इसी प्रयत्न में उसकी मृत्यु हो गई। नेपाल की घाटी में जो अगान्ति और गृह कलह उठ खड़ा हुआ था ह्यवधन ने पूर्वी भारत में विद्रोह को दबाने के लिए एक सेना को लेकर बूध किया। हो सकता है कि कुछ विद्रोही तत्व नेपाल की ओर भागे हों और उसने नेपाल पर भी आक्रमण कर दिया हो। परन्तु ह्यवधन और उसकी सेनाएँ अधिक समय नेपाल में नहीं रहीं। शीघ्र ही वापस चली गई। ईसा के ६२७ वय पश्चात् जब प्रसिद्ध चीनी यात्री हियांग-त्सांग नेपाल में गया तो उस समय अमसूरवमन नेपाल के राजसिंहासन पर विराजमान था। या तो अमसूरवमन ने ह्य की सेनाओं को मार भगाया था अथवा पूर्व में अपनी सेनाओं को वापस लौटने की आज्ञा दी थी यह कहना कठिन है।

उस समय नेपाल की घाटी में नेवार जाति के लोग अपनी बारी गरी में शान्तिपूर्वक ध्यस्त थे और हिन्दू तथा बौद्ध धर्म दोनों का ही

प्रचलन था।

अमसूवमन जो ठाकुर जाति का था उससे ठाकुर राजवंश का आरम्भ हुआ। अमसू अत्यंत धीर शक्तिवान और प्रभावशाली था। उसकी धीरता विद्वत्ता शौर्य इत्यादि की कहानियां नेपाल के इतिहास में ही नहीं चीन और तिब्बत के इतिहास में भी बहुत मिलती हैं। इससे पता चलता है कि अमसू नेपाल का अत्यंत प्रतापी शासक था। वह बहुत बलिष्ठ, आकर्षक व्यक्तित्ववाला और महान प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति था। उसके शासन काल में विज्ञान साहित्य शिक्षा (प्रथम संस्कृत व्याकरण उसके शासन काल में ही लिखा गया) और वाणिज्य का बहुत अधिक विस्तार हुआ। उसने शासन का भी विकास किया। उसने समय में उसका शासन उत्तर में तिब्बत की सीमा और दक्षिण में भारत की सीमा को छूता था।

उसकी प्रशंसा में नेपाल के तत्कालीन प्रयोगों में उसके समकालीन लेखकों ने लिखा है— 'उसके गुणों के कारण उसका यश समस्त पृथ्वी पर फल गया था। उसके शासन काल तक दबता सशरीर नेपाल की घाटी में प्रकट होते थे। उसके बाद दबता लोग अदृश्य हो गए '

अब हम नेपाल के उत्तर में तिब्बत अर्थात् मोट (तिब्बत का वास्तविक नाम मोट है आज भी वह इसी नाम से प्रसिद्ध है) की ओर दृष्टि पात करें। इसी समय से तिब्बत का नेपाल से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हुआ था। मोट (तिब्बत) उस समय के पूव एक राष्ट्र नहीं था वहाँ घूमने फिरने वाले बंबोल रहते थे। वे बलिष्ठ कठोर जीवन के अभ्यस्त और लड़ाकू थे। उन बंबोलों के मुखिया 'नाम्र खोंग बत्सन' के शासन काल में तथा उसके योग्य उत्तराधिकारी खान-बत्सन नाम्पो के नेतृत्व में तिब्बत एक बड़ा और संगठित राष्ट्र बन गया। उसने एक लाख सैनिकों की एक प्रदल सेना का निर्माण किया और सिक्किम और भूटान की विजय करता हुआ भारत तक पहुंच गया। यद्यपि बाह की भूटान और सिक्किम स्वतंत्र हो गए। उसने चीन भारत और नेपाल के दरबारों में अपने राजदूत नियुक्त किए। उसने एक मिशन भारत इस उद्देश्य से भेजा कि वह वहाँ के गिशा बेट्रों में जाकर मोट माया (तिब्बती माया) के लिए एक लिपि खोज निकाले। जब वह मिशन सौटकर आया तो उस तरफ और प्रतिभावान शासन ने उस लिपि का बड़ा प्रचार कराया और तिब्बत को एक लिपि प्राप्त हुई जिससे तिब्बत में भविष्य के लिए गिशा और साहित्य के निर्माण का मार्ग खुला।

उसी समय तिब्बत का नेपाल से सम्बन्ध स्थापित हुआ। अमसू ने 'मोट' की प्रभुता को स्वीकार कर लिया। जब 'खान बत्सन' नेपाल की अतीव सुन्दरी अमसू की पुत्री के सौन्दर्य से इतना अधिक प्रभावित हुआ कि उसने उससे विवाह करने की इच्छा प्रकट की तो अमसू ने उसको स्वीकार कर लिया। नेपाल राजकुमारी तिब्बत की राजमहिषी बनकर तिब्बत में आ गई। नेपाल राजकुमारी बौद्ध धर्म की अनन्य भक्त थी। वह अपने साथ तथागत नगवान भूट के अवशेष तथा अन्य धार्मिक बिल्हे तथा धार्मिक प्रयोग लकर पति के साथ गई। उसने अपने

सैनिक पति को बौद्ध धर्म या अनुयायी बना दिया और अपने पति के द्वारा उसने तिब्बत में बौद्ध धर्म या प्रचार किया। क्रमशः तिब्बत के निवासियों ने बौद्ध धर्म का स्वीकार कर लिया। 'सान्य-व्रतन स्गाम्पो' के पास अब सम्य जीवन की तीन आयश्चक्राएँ उपलब्ध थीं। उसके देश में लिपि का प्रचार हो रहा था। उससे साहित्य का और शिक्षा का विकास हो रहा था देश में एक ऊँचा और परिष्कृत धर्म फैल चुका था और उसकी पत्नी मुनिमित उच्च यश की विदुषी महिला थी।

अपनी इस सफलता में उत्साहित होकर उसने चीन के सम्राट 'ताई-जंग' को एक आज्ञा भेजी कि वह अपनी राजकुमारी उसकी पत्नी के रूप में दे दे। चीन के सम्राट ने अपना अनमन्यपूवक अपमान जनक शर्तों में तिब्बत के तक्षुणासक की माँग को ठुकरा दिया। तिब्बत के उस तक्षुणासक ने चीन पर आक्रमण कर दिया। जब तिब्बत की सेनाएँ चीन प्रवेश की विजय करती हुई सम्राट 'ताई-जंग' की राजधानी घगान के समीप पहुँच गईं तब विषाण होकर चीन सम्राट को अपनी पुत्री राजकुमारी 'वेन चांग' को उमे बना पडा। यह घटना सन ६४१ ईसवी की है। राजकुमारी 'वेन-चांग' के साथ बौद्ध धर्म की बहुत सी पुस्तकें, अन्य धार्मिक वस्तुएँ तथा ब्रह्म भगवान की एक भव्य मूर्ति भी लहामा तिब्बत की राजधानी पहुँची। उसने तथा नेपाली राजरानी श्री व्रतन' दोनों ने मिलकर तिब्बत में बौद्ध धर्म का इतनी लगन से प्रचार किया कि लामा धर्म में उन्हें 'श्वेत-सारा और हरित-सारा (देवी) के नाम से पुकारा जाता है।

उस समय से तिब्बत में नेपाली जो कि वास्तव में भारतीय सस्कृत और हस्तकला ह उसका प्रभाव बढ़ता गया और चीनी प्रभाव कम होता गया।

तिब्बत नेपाल तथा सिक्किम के माग से कश्मि पहाड़ी बरों और मार्गों से उस समय भारत से व्यापार होने लगा था। चीन का एक मिशन भारत से आया। परन्तु वहाँ उसके साथ दुर्व्यवहार हुआ। किसी प्रकार उहाने भाग कर अपनी जान बचाई। चीनी मिशन का नेता 'चांग-हियून-सी' नेपाल गया और वहाँ उसने सहायता माँगी। अमसू की मृत्यु हो चली थी और उसका पुत्र 'नरेन्द्र-देव' तिहासन पर था। उसने चीनी मिशन का स्वागत किया। तिब्बत का शासक जिसे तिब्बत का सिकन्दर भी कहते हैं उसने जब यह सुना तो वह अपनी सेना लेकर नेपाल में आया। वहाँ उसने और सना ली और तिब्बत पर आक्रमण कर दिया। भारतीय सेना पराजित हुई और उसने वहाँ के शासक तथा उसके परिवार को कब्र कर चीन भेज दिया।

नरेन्द्र देव अत्यन्त गडिमान और सख्त शासक था दूसरे कथ उसने चीन को एक नेपाली मिशन भेजा इस प्रकार चीन से नेपाल के सम्बन्ध अधिक धनिष्ठ हो गए और दोनो देशों में व्यापार होने लगा। चीनी यात्री अधिक संख्या में नेपाल आने लगे। नेपाल के शासक ने हिन्दू और बौद्ध पवित्र स्थानों का औषोद्धार कराया नहरें खुवाई और भरनों के जल का मिचाई के लिए उपयोग किया और अपनी

कर प्रणाली का सुधार किया। नेपाल नरेंद्रदेव के शासनकाल में समृद्धिवाली बन गया और वहाँ की प्रजा खुशी थी।

नरेंद्रदेव की मृत्यु के उपरांत उत्तर पुनः बरादेव तिलास पर बठा। उसके शासनकाल में नगवान गन्नाचाय नेपाल आए। बरादेव उनका भक्त हो गया और उसी बौद्ध धर्म का नेपाल में प्रवेश करने का प्रयत्न किया। उसके शासनकाल में बौद्ध मठों का निर्माण हुआ बौद्ध साहित्य को नष्ट किया गया और बौद्ध धर्माचार्यों पर अत्याचार हुए। इसका परिणाम यह हुआ कि यद्यपि बौद्ध धर्म नेपाल में क्षीण हो गया किन्तु नष्ट नहीं हुआ।

ठाकुर राजवंश के अपने शासनकाल में नेपाल की घाटी में खेती के अतिरिक्त व्यापार का बहुत विकास हुआ और कात्मीपुर (काठमांडू) तथा पाटन प्रसिद्ध व्यापारिक मंडियाँ बन गए।

ठाकुरी राजवंश के उपरांत अमसूत्रमन के ही धर्म की एक शाखा का नेपाल की घाटी पर शासन हो गया। परंतु इसके उपरांत राजवंश जल्दी जल्दी बदलते रहे परंतु भी राजवंश नेपाल की घाटी में शासन करते रहे वे ठाकुर राजवंश से ही सम्बन्धित थे।

इन राजाओं ने धार्मिक रूप से नेपाल की घाटी को तीन छोटे-छोटे राज्यों में बाँट दिया। इस बीच में राजवंश का नाम 'मल्ल' पड़ गया था। बात यह थी कि अरिदेव का जन्म हुआ है। राजा अरिदेव ने उरको मल्ल की उपाधि दे

राजकुमार का जन्म हुआ है। राजा अरिदेव ने उरको मल्ल की उपाधि दे दी। तभी से मल्ल राजवंश का उदय हुआ। जब आनन्दमल्ल राजा बना और उसने मत्तपुर (मटगाँव) बसाया तो उसने कात्मीपुर (काठमांडू) और पाटन धरने माई को बँट दिया और मटगाँव पर स्वयं शासन करने लगा। इस प्रकार नेपाल की घाटी में तीन राज्य बन गए। दर एसी मूल थी कि जिस कारण नेपाल की घाटी की राजनीतिक स्थिति निम्न हो गई। अथ

नपाल में कात्मीपुर (काठमांडू) पाटन और मटगाँव तीन राज्य हो गए। १०९७ में नरेंद्रदेव नामक एक दक्षिणी राजपूत न जो कि उस समय तिमर (जो अर्थात् तिब्बत का शासन था जो कि नेपाल के बहुत समीप है) (रक्षसोल से भी मील दूर) उत्तम नेपाल की घाटी पर आक्रमण किया और तीनों राज्यों को अस्वाभाव्य रूप से ही सही समाप्त कर दिया। उसी समय पश्चिम में परतीय प्रदेश से प्राप्त जाति के परिवर्तित नपाल की घाटी में आकर बसे और वहाँ व्यापार करने लगे। बालांतर में उनमें से कुछ बहुत प्रभाव

शाली और महत्वपूर्ण नागरिक बन गए।

सन् ग्यारह सौ ईसवी में सन्थालीन राजा हरिदेव के दरबार में मागर जाति का एक परिवर्तित जाति म पठुष गया था। दरबार में नेपाल जाति के मन्त्री उससे ईर्ष्या करके लगे और उन्होंने पदच्युत करके उसको पदच्युत करवा दिया। इस अपमान से वह बहुत नाराज हुआ और वह अपने पक्ष गृह पश्चिम में तानजिग अर्थात् पाया गया। वहाँ के राजा को उसने अपने अपमान की क्या मुनाफा और धनशायी कि नेपाल की घाटी अत्यंत समृद्धिवाली प्रदेश है। काठमांडू की गणियों में सोना खिलता रहता है वहाँ का बाजार अत्यंत धनवान से नरा हुआ है और वहाँ के व्यापारियों के पास अल्पनातीत धन है। तानजिग पाल्पा के राजा मुकुन्ददेव ने नेपाल की घाटी के धर्म की सुनपर अपने राज्य की नियंत्रण से सुलना की तो

उसका हृदय लोभ और ईर्ष्या से गया। उसने नेपाल की घाटी पर आक्रमण करने का निश्चय कर लिया। जब मुकुन्दसेन की सेना मदान में उतरी और उसने नेपाल की घाटी पर आक्रमण किया तो हरिवंश युद्ध करने आया। नेपाल की घाटी के चादला के खेतों में भयकर युद्ध हुआ। नेपाल की घाटी के सैनिकों को अभी तक ऐसे लड़ाकू, पीर साहसी और भयकर क्षणिय और मायूर सैनिकों से पाला नहीं पड़ा था। हरिवंश की सेना बुरी तरह परास्त हुई। मुकुन्दसेन की सेना ने उसे नष्ट कर दिया। तीनों नगरों में भय और घबराहट छा गई। विजयी सेना ने भयकर नरमेध किया मंदिरों और मूर्तियों को तोड़ डाला और लूटपाट कर बहुत सा धन लूट लिया।

कियवन्ती है कि मुकुन्दसेन जिस समय पाटन आया उस समय पुरोहित मच्छन्द्रनाथ का पवित्र पत्र मनाने की तयारी कर रहे थे। पुजारी लोग भय से भाग पड़े हुए। उस समय भगवान के ऊपर बने पथारे रूपी सर्पों के मुख से देवता तथा मुकुन्दसेन पर सुन्दर फूलों की वर्षा हुई। मुकुन्दसेन ने आश्चर्यचकित होकर भगवान की मूर्ति पर अपने घोड़े की गर्दन में पड़ी हुई सोने की जड़जोर फेंकी जिसे मगवान मच्छन्द्रनाथ ने लकर अपनी गर्दन के धारों ओर लपेट लिया। कियवन्ती यह है कि आज भी सोने की यह घन उनकी गर्दन में लिपटी हुई है।

परन्तु भगवान पशुपतिनाथ मुकुन्दसेन के अर्थात्मिक कार्यों से इतने क्रोध हुए कि उन्होंने बंधी महासारी को मुकुन्दसेन की सेना नष्ट करने के लिए भेजा। चौदह दिन में मुकुन्दसेन की घोर बाहिनी नष्ट हो गई और वह भी भय घबराहट कर पहाड़ों की ओर भागा। यह कठिनाई से बची घाट तरु पहुँचा जहाँ ताड़ी और त्रिमूली नदियाँ मिलती हैं। यहाँ वह फिर पड़ा और मर गया।

यह प्रथम अवसर था कि नेपाल की घाटी के लोगों ने पश्चिम के परवतियों की युद्ध-कुशलता और शौर्य को देखा। मुकुन्दसेन के इस विध्वंसकारी आक्रमण से नेपाल की घाटी में सबत्र विध्वंस के चिह्न दिखाई पड़ते थे। इस वय तक नेपाल की स्थिति बहुत खराब रही।

मुकुन्दसेन की सेना के नष्ट हो जाने के उपरांत नवकोट के ठाकुर पुन उस घाटी में आए और उन्होंने पुन अपना शासन जमा लिया। उसके उपरांत वे दो सौ वर्षों तक नेपाल की घाटी में राज्य करते रहे। चौदहवीं शताब्दी में नेपाल में अयोध्या राजवंश का राज्य रहा। यह राजवंश किस प्रकार नेपाल में आया इसके विषय में विचारपूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता। सम्भवतः तिरहुत का राजा हरी सिंह दिल्ली मुल्तान मुहम्मद बिन-तुगलक से पराजित होकर नेपाल की घाटी में घुस आया और अन्तिम ठाकुर राजा को पराजित कर वहाँ का शासक बन बैठा। यात यह ही मुहम्मद बिन तुगलक ने उसके राज्य की सीमा ली थी और उसके किले को धर लिया था। हरीसिंह किसी प्रकार पीछे से निरल कर नेपाल में घुस गया और २२६ वय पून जिस प्रकार उसके पूर्वज नन्दवंश ने नेपाल के सिंहासन को विजय किया था उसी प्रकार उसने नेपाल के राजसिंहासन को पुन प्राप्त किया। यह घटना सन् १३२६ ईसवी की है। सौ वर्षों तक अयोध्या राजवंश ने नेपाल की घाटी में राज्य किया। अयोध्या राजवंश के शासनकाल में जयचिंति नामक ठाकुरमाल राजकुमार जिताके पूर्वज भारत से आए थे और जिन्होंने नेपाल की घाटी के नगरों पर शासन किया था

प्रधान मंत्री बना। वह इतना शक्तिवान और प्रभावशाली था कि राजा बबल नाममात्र को था। सारी शक्ति जयसिंहति प्रधान मंत्री के हाथ में केन्द्रित थी। जयसिंहति और उसके पुत्र ने नेपाल में ब्राह्मणों का बचस्व स्थापित कर दिया। उसके परिणामस्वरूप नेपाल की प्रजा का दृष्टिकोण हा बबल गया।

बालात्तर में अंतिम अयोध्या बग के राजा ने अपनी पुत्री का विवाह ठाकुरमल्ल बग के राजकुमार से कर दिया और वह नेपाल का शासक बना। यह तीसरा ठाकुर राजवंश था जो नेपाल के राजसिंहासन पर आया। तीसरे ठाकुर राजवंश में एक महान शासक यशमल्ल (१४२९-६०) हुआ उसने मुस्लिम शासन के नियंत्रण होने पर नीरग और तिरहुत को भी अपने राज्य में मिला लिया। नेपाल के प्राचीन इतिहासकारों ने तो निष्कर्ष है कि उसने बिहार में बौद्ध गया तक अपना राज्य विस्तार कर लिया था। उत्तर में उसने तिब्बत पर आक्रमण किया और 'नेबर जींग' पर अधिकार कर लिया। पश्चिम में उसने टांटे से गोरखा राज्य को भी अपने अधिकार में कर लिया। उसने काठमांडू और पाटन के राजाओं को भी पराजित किया था।

यशमल्ल जब अपनी मृत्युगम्या पर पड़ा था तो उसने अपने राज्य को विभाजित कर चार चार राज्यों में बांट दिया। काठमांडू मटगांव पाटन और काठमांडू के पूष में दस मील दूर बनेपा। चार राज्यों की राजधानियाँ थीं। चारों राजधानियाँ एक दूसरे से समीप कुछ ही मील की दूरी पर स्थित थीं। उनके राज्य एक दूसरे तक उत्तर पूष तथा पश्चिम में फल हुए थे उसका परिणाम यह हुआ कि उनके सुदूर क्षेत्र उनके राज्य से निकल गए और उन्हें आपस में लड़ने लगे। अंत में बबल दो राज्य रह गए—मटगांव और काठमांडू। १७६९ तक यही स्थिति रही।

यशमल्ल की मृत्यु के उपरांत उनके तीसरे पुत्र रत्नमल्ल को काठमांडू का राज्य मिला परन्तु उसने अपने राज्य पर अधिकार करने के लिए नव कोट के ठाकुरों से १४७१ में सहायता पड़ा। नवकोट के ठाकुरों को परास्त कर रत्नमल्ल ने अपनी स्थिति को सुदृढ़ कर लिया। इससे उपरांत वह मूढान और तिब्बत से लड़ बंठा। उसकी पराजय निश्चित थी। किन्तु पापा का परवर्तिता राजा मुकुन्दसेन का बगज उसकी सहायता को आगया और उसकी विजय हो गई। अपनी रक्षा और विजय के उपलक्ष्य में उसने ब्राह्मणों को बहुत धन दिया और हिंदू धर्म को और अधिक भावना और आध्यय प्रदान किया।

रत्नमल्ल का एक उत्तराधिकारी 'सर्गारि' अत्यन्त अत्याचारी था। उसको घोड़ों का बहुत शौक था। वह अपने घोड़ों की खर्चा में खर्च करने के लिए छोट देता था। इससे किसानों को राखी पत्त- नष्ट हो जाता था। इसके अतिरिक्त जिस किसी सुदूर स्थान पर वह आकषित हो जाता उसको पन्द्रह मगवाता। इस अत्याचार से प्रजा विद्रोही हो उठी और उसको काठमांडू से निकाल बाहर किया गया।

उपर नेपाल की घाटी में १७६९ तक दो मत्वपूर्ण घटनाएँ और हुई। कान्तीपुर में राजा लक्ष्मी नरसिंह ने काठ का एक बहुत बड़ा विश्रामगृह काठमांडू बनवाया जिसके कारण कान्तीपुर का नाम काठमांडू प्रसिद्ध हो गया। नेपाल के प्राचीन ग्रंथों में इस सम्बन्ध में दावे लिखी कथा प्रसिद्ध है।

लक्ष्मी नरसिंह के शासनकाल में एक दिन भगवान मच्छन्नाय की यात्रा का उत्सव था। स्वर्ग ने कल्पतरु पुरुष वेश में उस उत्सव को दखने के लिए आया। उसको एक व्यक्ति ने पहचान लिया और उस समय तक नहीं छोड़ा जब तक उसने यह वचन नहीं दे दिया कि उससे प्रभाव से वह व्यक्ति एक पेशक करने से एक बड़ा विश्रामगृह बना सकेगा। इस घटना के चौथे दिन कल्पतरु ने एक साल का वृक्ष भजा और उस व्यक्ति ने राजा से आज्ञा लेकर उस साल के वृक्ष की चिरवा कर उसकी लकड़ी से सातल बनाया और उसका नाम 'माहू सातल' रखा। क्योंकि वह एक ही वृक्ष की लकड़ी से बना था उसका नाम काठमांडू हो गया और उससे कारण ही कान्तीपुर को लोप काठमांडू कहने लगे।

लक्ष्मी-नरसिंह क्रीधी था। उसने ईर्ष्यावश अपने एक मंत्री भीममल्ल को मरवा डाला। भीममल्ल की पत्नी ली हो गई। उसने चिता पर बैठकर यह थाप दिया कि 'बरवार में कमी-चाप नहीं होगा'।

लक्ष्मी-नरसिंह पञ्चात्ताप और श्वापक नय से पागल हो गया। सन् १७०२ में मास्करमल्ल की पदग से मृत्यु हो जाने पर यह मृत्युधरणी राजघराना समाप्त हो गया। किंबदन्ती यह है कि उसने दगाहरे का उत्सव उस निकृष्ट मास में मनाया कि जो कमी-कमी नेपाल में आता है। मास्करमल्ल ने बहुत कुछ दान धर्म किया परन्तु वह उस रोग से न बचा और उसके साथ ही वह राजवश समाप्त हो गया।

इस काल में दूसरी महत्वपूर्ण घटना १७३६ में हुई जबकि गोरखा राजा नरभूपाल विद्रोही होकर काठमांडू के सिंहासन पर अपने धर्म का दावा करने लगा और उसने पूर्ण में नवकोट तक अपना अधिकार कर लिया। नवकोट काठमांडू से पेशे पश्चिम मील था। तत्कालीन नेपाल की घाटी के शासक जयप्रकाश से उसका युद्ध हुआ। जयप्रकाशमल्ल ने उसे पराजित कर पीछे खदेड़ दिया।

पराजित गोरखा राजा नरभूपाल १७४२ में स्वर्गवासी हो गया और बारह वर्ष की आयु में उसका पुत्र पृथ्वीनारायण गोरखा राजसिंहासन पर बैठा। पृथ्वीनारायण ने इतिहास को बदल दिया और तभी से समस्त देश पर गोरखा राजवश का शासन स्थापित हो गया। आइए देखें कि यह गोरखा कौन थे।

पालपा-किरान्ती और छियालीस राज्य

नपाल के इतिहास में मकवानपुर अथवा पालपा राज्य का महत्व पूरा स्थान है इस कारण उसके सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है। हमें पालपा के इतिहास को जानने के लिए पीछे लौटना होगा और सन् १३०० ईसवी में जाना होगा।

नपाल की घाटी के दक्षिण में पहाड़ियों के साथ साथ जहाँ से भारत को भाग आते हैं एक राजा करमसिंह राज्य करता था। उस प्रदेश में भावर जाति के लोग रहते थे। एक समय इस भावर जाति का विनाल राज्य था जिसकी राजधानी गोरखपुर थी कयउ समय दक्षिण नपाल ही उस राज्य में नहीं था धरन तिष्ठत (बिहार) का प्रदेश भी उस राज्य का एक भाग था। परन्तु कालांतर में आपसी झगड़ों तथा बाहरी आक्रमणों से यह विनाल राज्य छोटे छोटे टुकड़ों में बट कर नष्ट हो गया। उस राज्य का एक अधि शोय भूभाग छोटा-सा राज्य गडक नदी के पश्चिम के प्रदेश में था उसकी राजधानी राजपुर थी। जहाँ गडक नदी भारत में प्रवेश करती है उस राज्य का शासक करमसिंह था। उसके दो भाई थे एक कोसी नदी के प्रदेश का शासक था दूसरा तिष्ठत का शासक। दोनों भाइयों में लड़ाई का कारण था अतएव प्रत्येक भाई एक दूसरे से सतक रहता था। इसी कारण करमसिंह किराँती सैनिकों की एक सेना राजधानी के समीप पहाड़ी प्रदेश में रखता था।

जब चितौरगढ़ का पतन हुआ और बहुत-से राजपूत और उत्तर में हिमालय स्थित नपाल में घल आए तो उस समय सान ती धीर राजपूत सैनिकों का एक दल करमसिंह के पास पहुँचा और करमसिंह की सेना में नौकरी करने को इच्छा प्रकट की। उन राजपूत सैनिकों के दो सेनापति थे। एक का नाम जिल था और दूसरे का नाम अजिल था। बाईस वर्ष तक वे लोग करमसिंह की सेवा में रहे। तद्उपरान्त उन्होंने विश्रोह कर दिया तथा करमसिंह मारा गया और अजिल सेन राजा बना। अजिल सेन के पुत्र मुला सेन ने पहाड़ों पर मकवानपुर का हुग बनवाया। उस मुहड़ हुग से उसने समीपवर्ती प्रदेश को जीतना आरम्भ किया। प्रथम उसने पुराने भावर राज्य को पुनः एक बड़े राज्य का स्वरूप द दिया और भावर प्रदेश के पहाड़ी भाग पर भी अपना अधिकार कर लिया। उसके उत्तराधिकारी ने उस प्रदेश में और बहुत-सा भाग विजय किया और पालपा नगर को विजय कर लिया। दशसेन मकवानपुर राजवंश का पहला शासक था जिसने अपने को 'पालपा का राजा' घोषित किया। दशसेन के पुत्र मुनूदसेन प्रथम एक बहुत बड़े राज्य का स्वामी

बना। उसका राज्य दक्षिण में मकवानपुर से भागर तथा गुरग प्रदेश तक फैला हुआ था। उसने अपने इस विंगाल राज्य को अपने चारों लड़कों में बांट दिया। सबसे बड़े लड़के को उसने गडक नदी के पश्चिम का प्रदेश दिया। दूसरे पुत्र 'मानिक' को उसने पापा दिया। चिहगा को ताम्राहग का प्रदेश और लोहगा को मकवानपुर का प्रदेश दिया।

इनमें लोहगा अत्यन्त पराक्रमी और तजस्वी था। उसका राज्य का पृथक् म राजा विजयनारायण राज्य करता था जो कामरूप (आसाम) से आया था। उसका राज्य में कोसी और बनगाई नदियों के बीच मोरग का प्रदेश और महानदी तक तराई का बाढ़ा भाग सम्मिलित था। वह राजा धर्मशी और सनकी था। उस राजा ने एक किरान्ती नायक सिधराय का उसके योद्धाओं सहित अपनी सेना में रख लिया। उन सैनिकों की सहायता से उसने अपनी शक्ति को बढ़ाया और राज्य का विस्तार किया। इसके उपरान्त उसने विजयपुर नाम से एक नई राजधानी बसाई जो पहाड़ों पर स्थित थी और 'विजय भारती' की उपाधि धारण की। सिधराय का प्रभाव बढ़ गया था। राजा विजयनारायण उसको जब समाप्त कर देना चाहता था। सिधराय युद्ध हिंदू नहीं था। उसने किसी हिंदू को भी भ्रष्ट कर दिया उस महाने राजा ने उसको पकड़वा कर मार डाला।

सिधराय का पुत्र बाजुराय अपने किरान्ती सैनिकों सहित मकवानपुर भाग गया। उसने मकवानपुर के तरुण राजपूत राजा से प्रायःना की कि यदि वह उसकी सहायता करे तो वह अपना पिता का यश का बदला लेना चाहता है। यदि वह सहायता करेगा तो वह राजा विजयनारायण का राज्य उसके घरों में बँट कर देगा। किन्तु मकवानपुर और विजयपुर के बीच में कोसी नदी के पश्चिम में बहुत-से छोटे-छोटे राज्य थे। लोहगा के लिए इससे अच्छा अवसर अपने राज्य का विस्तार करने के लिए और कौनसा हो सकता था। अस्तु उसने बाजुराय के किरान्ती सैनिकों की सहायता से एक के बाद दूसरे छोटे राज्य को हड़पना आरम्भ कर दिया। जब उसने 'गिधा' पर आक्रमण किया तो उसके राजा ने इतने भीम श्रेय से प्रत्याक्रमण किया कि लोहगा की सेना पराजित होकर भागने ही वाली थी कि अचानक गिधा का राजा मारा गया और लोहगा को विजय हो गई। वहाँ से आगे बढ़कर उसने विजयपुर पर आक्रमण करना चाहा परन्तु वहाँ पहुँचने पर उसे ज्ञात हुआ कि राजा विजयनारायण की मृत्यु हो चुकी है। अतएव उसे लड़ना नहीं पड़ा और विजयपुर पर उसका अधिकार हो गया।

बाजुराय इस युद्ध में मारा गया। इस प्रकार किरान्ती सैनिकों की सहायता से लोहगा में एक विंगाल राज्य की स्थापना की जिसकी सीमाएँ पश्चिम में आरिया नदी और पूर में महानदी तक और उत्तर में तिब्बत से लेकर दक्षिण में भारत के मदानों की छूती थीं। बाजुराय का पुत्र किरान्तीयों का नायक बना।

लोहगा की मृत्यु के उपरान्त उसके उत्तराधिकारी एक दूसरे से लड़ने लगे। किरान्ती सेनानायक जिसका नाम होता वही विजयपुर के सिंहासन पर बैठता था। अतः म किरान्ती सेनानायक न बनने तक की विजयपुर के सिंहासन पर बिठाया। सन् १७७२ में बनने तक की मृत्यु हो गई। उसका एक ही पुत्र था जिसे वह अपने स्वामिसक्त किरान्ती सेनानायक के संरक्षण में

छोड़कर मर गया। १७७२ में गोरखा आक्रमण हुआ।

आइए अब हम पाल्पा की ओर दृष्टिपात करें। यहाँ लोहगा का माई मानिक राजा था। मानिक का बग समाप्त हो गया और लोहगा के सबसे बड़े माई विनायक व उत्तराधिकारियों का पाल्पा पर अधिकार हो गया। पाउपा के नेतृत्व में 'गजरगोट' रिंगिंग 'छिरिंग अरथा' बाईौ और गुल्मी' मागर राजपूत राजाओं ने एक संध बना लिया था।

नरभूपाल गोरखा जिसने १७३६ में काठमांडू पर असफल आक्रमण किया गोरखा का राजा था। उसने पाल्पा के राजा गधवसेन की बहिन से विवाह किया था। उसी रानी से पृथ्वीनारायण यदा हुआ। गधवसेन की मृत्यु पर उसका पुत्र मुकुंदसेन पाल्पा के सिंहासन पर बैठे। अस्तु पृथ्वीनारायण मुकुंदसेन (पाल्पा के राजा) का नयेरा भाई था।

१७४२ में नेपाल का राजनीतिक मानचित्र नीचे लिखे अनुसार था।

नेपाल की घाटी के पूव और दक्षिण में लोहगा का विनाल राज्य का भग्नावशेष था जिसकी राजधानी विजयपुर थी। उत्तर पूव तथा पूव में स्वतंत्र विराल्ती राज्य था। पश्चिम में गोरखा राज्य था जो नाममात्र को काठमांडू के अधीन था जिसके राजा नरभूपाल गोरखान काठमांडू पर असफल आक्रमण किया था।

उत्तरे पश्चिम में चौबीस तथा बाईस छोटे छोटे रजवाड़े थे। यह चौबीसा और बाईसा कहलाते थे। चौबीसा राज्य पुरग और मागर प्रदेश के राज्य थे। उनमें भी पश्चिम में बाईसा राज्य थे। उनमें सबसे बड़ा राज्य 'जुम्ला' उत्तर में हिमालय के ढालों पर स्थित था।

यह छिप्यालीस छोटे छोटे राज्य भारत से आए हुए राजपूतों में स्थापित किये थे। इनमें बहुत-से तो बहुत ही छोटे राज्य थे। राजधानी के आसपास दो चार मील भूमि ही राज्य था। यह छोटे राज्य अपनी सुरक्षा के लिए चार पांच मित्र कर किसी बड़े राज्य के नेतृत्व में संध बना लेते थे। उदाहरण के लिए पाल्पा के नेतृत्व में एक संध था। इसी प्रकार 'लामजंग' और बीरकोट के नेतृत्व में भी इन राज्यों के संध बने हुए थे। केवल 'गोरखा' राज्य ही पृथक था। वह हिमालय का सबसे बड़ा राज्य था। गोरखा राज्य पश्चिम में भरतियागंधी नदी और पूव में त्रिशुल नदी तक फैला हुआ था। बहने को वह नाममात्र को नेपाल के राजा के अधीन था परन्तु वह नेपाल को बराबर चुनौती देता रहा।

यह छिप्यालीस रियासतें जुम्ला जो कि सबसे बड़ी रियासत थी जो उसका राजा को अपना अधीन मानती थीं परन्तु अक्सर होने पर ये उसकी सत्ता को चुनौती भी दे देती थीं।

जब पृथ्वीनारायण ने नेपाल में उदय हुआ उस समय नेपाल का रूपर लिखा राजनीतिक मानचित्र था।

पूर्वीय नेपाल के विराल्ती नगरिक व साम्बय में नीचे नपाल की वगावलिषो में विराल्ती नगरिक व साम्बय में नीचे लिखा उत्तरेक्ष है —

द्वारक युग ८,३४००० वर्ष तक चल्य। विराल्ती नेपाल में द्वारक युग के पहले हजारक वर्ष में आए और उत्तरेक्ष नेपाल पर दस हजार वर्ष तक

राय किया। किराती के पचात देवता नेपाल में आए।

इसमें इतना सत्य अवश्य है कि पूर्व ऐतिहासिक काल में किरातियों ने नेपाल की घाटी को विजय कर उस पर शासन किया और बहुत काल व्यतीत हो जाने के उपरान्त अधिक सम्य जाति ने उनको नेपाल की घाटी से निकाल बाहर किया। वे लोग जिन्हें बणावली में देवता कहा गया है भारत से आई हुई जातियाँ थीं जो हिंदू या बौद्ध थे।

यह किराती कौन हैं? आज के लिम्बू और राय के नाम से प्रसिद्ध हैं। यह दोनों जातियाँ भी युद्धप्रिय और कुशल तथा वीर सैनिक होती हैं। वे मागर तथा गुरग की भाँति ही रणकौशल वीरता और कष्टसहिष्णुता के लिए प्रसिद्ध हैं। यही कारण था कि ब्रिटिश सेना में उन्हें भी 'गुरखा' के नाम से ही मर्ती किया जाता था।

हिंदुओं के अत्यन्त प्राचीन प्रयाग में भी किराती का उल्लेख मिलता है। यह कह सकना फठिन है कि किराती क्षत्र का उप योग उत्तर भारत के हिमालय प्रदेश, पूर्व में आसाम की पहाड़ियों भागा खासिया और बरमा की सीमा पर रहनेवाले समा पीले वर्ण के लोगों के लिए किया जाता था अथवा वह कोई जाति विशेष थी। सम्भवतः यह किराती जाति समस्त पहाड़ी प्रदेश में फैली हुई थी। भारत के राजाओं ने उनके लोगों को विजय कर उन्हें पहाड़ों में ढाल दिया था। महाभारत में किराती का बहुत अधिक विवरण मिलता है। भीम और अर्जुन को कई बार किराती से लड़ना पड़ा था। रामचंद्र के सम्राट् भागदत्त की सभा में किराती और चीनी पीले बहुत अधिक थे। उनका उल्लेख करते हुए लिखा है कि किराती और चीनी सैनिक मानो स्वर्ण के बने हुए हैं। उनकी सेना पीले फूलों का बन जैसी दिखलाई पड़ती थी। रामायण में भी उनके स्वर्ण जैसे वर्ण का उल्लेख मिलता है। जो भी हो ऐसा प्रतीत होता है कि किराती तिब्बत के आदि निवासी थे और फिर भारतीय जातियों के ससंग से यह जाति उत्पन्न हुई। किरातियों की माएतुम्बा जाति याद को चलकर लिम्बू कहलाने लगी और 'लम्बू' और 'यक्का' नामाओं से 'रायों' का उदय हुआ। राय नाम तो बहुत नवीन है। सन् १७८० में जब मयकर मुद्द के उपरान्त किराती नेपाल के गुरखा नरेश से पराजित हुए तो नेपाल सम्राट् ने उनके कतिपय प्रमायगाली सैनिक नेताओं को अपने आधीन कुछ जिला का शासक बना दिया जिससे कि किराती लोग उपद्रव न करें और शांत रहें। इन जिला शासकों को उसने 'राय' की उपाधि दी। कालान्तर में यह उपाधि सम्पूर्ण जाति की बन गई और वे सभी राय कहे जाने लगे। इसी उद्देश्य से 'सूया' की उपाधि लिम्बू जाति के प्रमायगाली नेताओं को भी गई थी परन्तु वह भी समस्त जाति की उपाधि बन गई।

'सुनवार' अथवा 'सुनपार' जाति के लोग राय और गुरग जाति के बीच में बसे हुए हैं। सुनकोसी नदी के दोनों किनारों पर बसे होने के कारण उनका नाम सुनवार या सुनपार पड़ गया। यद्यपि आरम्भ में उनकी एक पृथक् जाति थी और सम्भवतः वे तिब्बत से आकर नेपाल घाटी के उत्तर में बसे थे परन्तु अंत में उनमें गुरग और राय के दफिर का बहुत मिश्रण हो चुका है। वे मुद्द और गिब दोनों को ही मानते हैं।

गुरखा विजय के पूर्व किराती अनेक बेग में पूर्ण स्वतंत्र थे। नेपाल

की घाटी के पूर्व में जो प्रदेश है उसी में आज भी किराती बसे हुए हैं।
 किरान्ती प्रदेश अर्थात् अरुण नदी के पूर्व से सिक्किम तर सम्पूर्ण नेपाल में
 किराती फल हुए हैं। ये सिक्किम और बार्मिन्ग में भी बसे हुए हैं। लिम्बू
 लोग पश्चिम में अरुण नदी से पूर्व में सिंगात्रिया तक पश्चिमी प्रदेश में बसे
 हुए हैं। इसके पश्चिम में राय लोग नेपाल की घाटी तक फल हुए हैं।
 लिम्बू और राय गुरग और मागर की ही भाँति बलिष्ठ साहसी
 धीर और कष्टसहिष्णु होते हैं। बस उनसे अधिक ताकत और तेजमिजाज
 होते हैं नहीं तो जहाँ तक सैनिक गुणों का प्रश्न है वे एकतरफा हैं।

गुरखा अथवा गोरखाली

जो लोग मगध के इतिहास को नहीं जानते वे नेपाल के सभी नेपालियों को गुरखा ही समझते हैं। अथवा लताओं में भी यही मूल की ओर नेपाल के प्रत्येक रहनेवाले को उहाने गुरखा मान लिया। परन्तु वास्तव में यह सही नहीं है। वास्तव में गुरखा केवल खास या छोटी लिम्बू और राय भागर या गुरग जाति के लोग हैं। इन्हीं वीर सैनिकों ने नेपाल को रीढ़ डाला और उन्होंने मगध में नेपालियों के लिए सिर ऊंचा किया। गुरखा सैनिकों का गौरव वीरता और वृष्टसहिष्णता को कौन नहीं जानता। वह मगध की अत्यन्त प्रतिष्ठा प्राप्त है। गुरखा सैनिकों का रण मैदान और वीरता जगत् प्रतिष्ठ है। योरोप की रणभूमि पर मलाया के जंगलों में प्रथम और द्वितीय महायुद्ध में जिना सनापतियों ने गुरखा सैनिकों को हराते देखा है उन्होंने उनकी नीर नीर प्रशंसा की है। यही कारण है कि ब्रिटेन बहुत बड़ी सहायता में गुरखा सैनिकों को अपनी सहायता में भरता करता है। अब हम इन वीर गुरखाओं के इतिहास का अध्ययन करेंगे।

गुरखा जाति के पूरज गोरखा गाँव और उत्तक समीपवर्ती प्रदेश में निकले इस कारण गुरखा या गोरखाली कहलाए। जिस पहाड़ी पर गोरखा गाँव बसा है उसमें एक गुफा आज भी विद्यमान है उसी गुफा में सत गोरखनाथ जी रहते थे। उन्हीं से उस गाँव का नाम गोरखा पड़ गया। गोरखा जाति के सम्बन्ध में लोग अधिक नहीं जानते। गोरखा जाति में भारतीय राजपूतों का रश्मि बहुत अधिक मात्रा में मौजूद है। इसी कारण यह जाति सैनिकों की जाति बन गई।

जब तेरहवीं शताब्दी में राजस्थान के राज्यों पर दहली के सुल्तानों ने आक्रमण करना आरम्भ किया और एक के बाद दूसरे राज्य मुसलमानों के आक्रमण के सामने गिरता गया तो कुछ राजपूत सनापति नेपाल के पश्चिमीय पश्चिमी भाग में घस आए। विशेषकर जब राजपूतों के प्रतिष्ठ गढ़ चित्तौरगढ़ और रणथम्भोर का पतन हुआ तब बहुत सारे राजपूत नेपाल में आकर बस गए। उस समय सीसोदिया राठौर चंबेल बुंदेला और दण्डिया के राष्ट्रपुत्र राजपूत आकर पश्चिमी नेपाल में बस। ये हिन्दुओं के इस प्रदेश में मुसलमानों से अपने धर्म संहति को रक्षा करने और मुसलमानों की अधीनता को स्वीकार न करने के उद्देश्य से आए। उस समय चित्तौर राजपूतों का एक परिवार पश्चिम नेपाल में रिरी पहुँचा और वहाँ से पाल्पा भाग्य प्रदेश में पहुँचा। इस परिवार का नेपाल में आकर बसने का इतिहास इस प्रकार है—

गुरखा अथवा गोरखाली

जो लोग गणना के इतिहास को नहीं जानते वे नेपाल के सभी नेपालियों को गुरखा ही समझते हैं। अंग्रेज डॉक्टरों ने भी यही भूल की और नेपाल के प्रत्येक रहनेवाले को उन्होंने गुरखा मान लिया। परन्तु वास्तव में यह सही नहीं है। वास्तव में गुरखा केवल खासा या छत्रो सिम्बू और राय भागर या गुरग नाम के लोग हैं। इन्हीं धीरे सैनिकों ने नेपाल को रौंद डाला और उन्होंने सत्कार में नेपालियों के लिए सिर ऊँचा किया। गुरखा सैनिक के नीचे वीरता और बलसहिष्णता को कौन नहीं जानता। वह सत्कार की अत्यंत प्रतिबद्ध जाति है। गुरखा सैनिकों का रणरीति और वीरता जगत प्रसिद्ध है। योगेश्वरी रजभूमि पर मलाया के जंगलों में प्रथम और द्वितीय महायुद्ध में जिसे गणपतियों ने गुरखा सैनिकों को हारने देखा है उन्होंने उनकी वीरता की प्रशंसा की है। यही कारण है कि ब्रिटेन बहुत बड़ी सहायता में गुरखा सैनिकों को अपनी सहायता में भरती करता है। अब हम इन धीरे गुरखाओं के इतिहास का अध्ययन करेंगे।

गुरखा जाति के पूज्य गोरखा गांव और उसके समीपवर्ती प्रवेश से निकले इस कारण गुरखा या गोरखाली कहलाए। जिस पहाड़ी पर गोरखा गांव बसा है उसमें एक गुफा आज भी विद्यमान है उसी गुफा में सत गोरखनाथ जी रहते थे। उन्हीं से उस गांव का नाम गोरखा पड़ गया। गोरखा जाति के सम्बन्ध में लोग अधिक नहीं जानते। गोरखा जाति में भारतीय राजपूतों का अधिक बहुत अधिक मात्रा में मौजूद है। इसी कारण यह जाति सैनिकों की जाति बन गई।

जब तेरहवीं शताब्दी में राजस्थान के राज्यों पर बहली के सुल्तानों ने आक्रमण करना आरम्भ किया और एक के बाद दूसरे राय मुसलमानों के आक्रमण के सामने गिरता गया तो कुछ राजपूत सेनापति नेपाल के पश्चिमीय पश्चिमीय भाग में घुस आए। विशेषकर जब राजपूतों के प्रसिद्ध महि चित्तौरगढ़ और रणथम्भौर का पतन हुआ तब बहुत सारे राजपूत नेपाल में आकर बस गए। उस समय सीसोल्या राठौर चबेल बुडला और दक्षिण के राष्ट्रकूट राजपूत आकर पश्चिमी नेपाल में बसे। वे हिमालय के इस प्रदेश में मुसलमानों ने अपने धर्म सभ्यता को रक्षा करने और मुसलमानों की गधीमता को स्वीकार न करके उद्द्वेग से आए। उस समय चित्तौर राजपूत का एक परिवार पश्चिम नेपाल में रिरी पहुँचा और वहाँ से पाल्पा भाग प्रदेश में पहुँचा। इस परिवार का नेपाल में आकर बसने का इतिहास इस प्रकार है—

सभी से यह घोर तातियां अपने को शत्रु मानने लगीं और उहोने हिम्नू रीति रिवाजा को अपना लिया ।

तदप्य राणा पुत्र 'खांचा और मिचा' ब्रह्मण जपन प्रदेश के छोटे शासक बन बैठे । पिता न खांचा को बरिफोट का मकान और भूमि दी थी । और मिचा के लिए वह नवकोट के पान दूसरी भूमि छोड़ गया । इन दोनों चित्तौर राजवंश के राजपूत राजदुमारो से नेपाल में गोरखों का प्रभुत्व स्थापित होना आरम्भ होता है ।

खांचा ने अपने जीवनकाल में अपनी जागीर को बढ़ाकर समस्त मागर प्रदेश पर अपना अधिकार कर लिया । गुल्मी घोर जीर 'धान-बुर्ग' का मागर प्रदेश का यह स्वामी बन गया । मिचा ने नवकोट से आगे बढ़कर समस्त पुरग प्रदेश (कास्की लमजुंग तथा तन्नाहग) पर अधिकार जमा लिया ।

कालान्तर में मिचा के उत्तराधिकारी लामजुंग कास्की तथा तन्नाहग में स्वतंत्र शासक बन गये । लामजुंग अधिक शक्तिशाली था इस कारण और दोनों उसकी सत्ता को स्वीकार करते थे । लामजुंग के ठाकुर राजा हसी शाह के दो पुत्र थे । बड़े पुत्र को लामजुंग की गद्दी मिली छोटा भाई ब्रह्मशाह' को अपने भाई का प्रधान मंत्री था उसने अपना स्वयं का राज्य निर्माण करने का निश्चय किया और निकल पड़ा । लामजुंग से बस मील दूर एक पहाड़ी पर जो कि एक अद्भुतगोलाकार पयतमाला की निचली भण्डो में थी और जो एक कृषि से सहस्रहत्ते मैदान को घेरे हुई थी गोरखा गाँव स्थित था । उसका राजा खास जाति का था । ब्रह्मशाह ने उस पर आक्रमण कर दिया । युद्ध में राजा ब्रह्मशाह के हाथ से मारा गया और ब्रह्मशाह वहाँ का राजा बना । तब से ब्रह्मशाह के उत्तराधिकारी गोरखा के राजा बने और गोरखा राजवंश का आरम्भ हुआ ।

गोरखा राजा पृथ्वीनारायण

यह हम पहले ही पढ़ चुके हैं कि सन् १५५९ में, इब्राहिमशाह ने गोरखा को विजय किया था। उसकी नवीं पीढ़ी में नरभूपालशाह गोरखा का राजा हुआ। बाढगाँव और भटगाँव के राजाओं के आपसी कलह से लाभ उठाकर उसने नयाकोट पर अधिकार कर लिया और नेपाल की घाटी पर आक्रमण कर दिया परन्तु वह असफल रहा। सन् १७४२ में नरभूपालशाह की मृत्यु हो गई और उसका पुत्र पृथ्वीनारायणशाह बारह बप की आयु में गद्दी पर बैठा।

पृथ्वीनारायण का जन्म जनवरी १७२३ ईसवी में हुआ था। वह सात महीने का पढ़ा हुआ था और उसकी एक सौतेली माँ से एक भाई और उत्पन्न हुआ। अतएव यह विचार का प्रश्न बन गया कि राज्य का उत्तराधिकारी कौन हो। यहाँ यह थी कि जब यह सात महीने का था तो उसका भाई माँ के गर्भ में था। परन्तु वह गणव अवरया में ही मर गया इस कारण उसका पिता का प्रश्न स्वतः ही हल हो गया। उसकी माता का नाम कौशल्या देवी था जो पाल्पा के राजा की पुत्री थी। पृथ्वीनारायण के पिता नरभूपाल के चार रानियाँ थीं।

पृथ्वीनारायण की शिक्षा-दीक्षा में उसकी सरसक माता (उसकी माता नहीं) प्रभावती का बहुत बड़ा हाथ था। प्रभावती की देखभाल में ही पृथ्वीनारायण में एक महान् विजेता और सकल प्रशासक के गुण विकसित हुए थे।

यह हम पहले ही लिख चुके हैं कि पृथ्वीनारायण के पिता नरभूपाल ने जब नेपाल घाटी को विजय किया तो वह बुरी तरह परास्त हुआ और पराजय से उसका भस्तिष्क विकृत हो गया। उस दशा में पाँच बप तक प्रभावती राज्य की प्रशासिका (रिजेंट) रही। प्रभावती ने केवल पृथ्वीनारायण की शिक्षा-दीक्षा ही नहीं की बल्कि उसने उसमें महत्वाकांक्षा भी भर दी। यह उसी की बुरदस्ता थी कि भटगाँव के राजा ने पृथ्वीनारायण को मित्र के रूप में अपने यहाँ आमंत्रित किया तो उसने उसे भटगाँव में जाकर रहने के लिए प्रोत्साहित किया। पृथ्वीनारायण जब भटगाँव में तीन बप रहा तो उसे नेपाल घाटी की दायोय दशा का पता चल गया। नेपाल घाटी के तीनों राजवंश एव दूसरे में कितनी गहरी घृणा करते हैं वहाँ जिस प्रकार के दहयंत्र चल रहे हैं और नेपाल की घाटी के राजा कितने निबल हैं यह उसने छिपा नहीं रहा। १७३९ में वह अपनी माता प्रभावती के साथ राज्य का सत् प्रशासक बनाया गया और अपनी माँ की देखरेख में नरभूपालशाह की मृत्यु पर वह गद्दी

पर बठा । पृथ्वीनारायण का राज्याभिषेक रामनवमी के शुभ दिन हुआ था ।

जिस समय पृथ्वीनारायण गोरखा सिंहासन पर बठा उस समय नेपाल की राजनीतिक स्थिति आगे लिखे अनुसार था । नेपाल की घाटी में काठमांडू पाटन और भदगांय के राज्य थे । गोरखा राज्य जिसका अधीनस्वरूप पृथ्वीनारायण था पश्चिम में धौबीसी और चार्दीसी के राज्य थे जो सघों में बंटे हुए थे । पूर्व में त्रिभुवन राज्य था ।

उस समय नेपाल की राजनीतिक रणनीति अत्यन्त दयनीय थी । उस पञ्चतीय देश में कोई ऐसा शक्तिशाली राजा नहीं था जो समूचे देश को एक सूत्र में बांध सकत। अथवा छोटे मोटे राजा अपने-अपने राज्यों की व्यक्तिगत अथवा जागीर की भाँति चरते थे । कुचक्र कुशासन भ्रष्टाचार पड़्यत्र तथा प्रजा का शोषण शोषण यही नेपाल की कहानी थी । पृथ्वीनारायण को सरक्षक माता प्रभावती देवी ने इस लक्ष्य को समझ लिया था । उसी जालसाज राजा की समझाया कि नेपाल की रक्षा ऐसी है कि यदि कोई प्रबल और प्रभावशाली शक्ति उत्पन्न नहीं हुई और उसने समूचे देश को एक सूत्र में बांध दिया तो नेपाल की स्थिति नहीं बच सकती । कागज़ पर भी अंग्रेजों का शासन स्थापित हो जायेगा । अतएव पृथ्वीनारायण को समस्त नेपाल को एक करने तथा शक्तिवान राष्ट्र का निर्माण का प्रयत्न करना चाहिए । पृथ्वीनारायण के मस्तिष्क में समस्त नेपाल की एक सूत्र में बाँधने का महादृष्टि चक्कर काटने लगा और वह उस लक्ष्य को प्राप्त करने की तैयारियाँ करने लगा ।

प्रभावती ने पृथ्वीनारायण का विवाह मकवानपुर के राजा हेमकरण की पुत्री से किया । प्रभावती का इस विवाह की स्वीकार करना राजनैतिक उद्देश्य से खाली नहीं था । बात यह थी कि नेपाल घाटी में प्रवेश करने के लिए क्वच हो ही मुख्य द्वार थे । पश्चिम में नवकोट और दक्षिण में मकवानपुर । यद्यपि मकवानपुर की राजकुमारी अतीव सुशरी थी परन्तु प्रभावती का पृथ्वीनारायण को उससे विवाह करने का मुख्य उद्देश्य उसका सौंदर्य न होकर मकवानपुर का नेपाल घाटी को विजय करने में सहयोग प्राप्त करना था । इस विवाह में दोनों राजवंशों में अनजन हो गई । कारण यह था कि विवाह के उपरांत वधु के अपने पिता के गृह में कुछ समय तक और रहने की परम्परा थी । गोरखा लोग इस परम्परा को तोड़ देना चाहते थे । गोरखा घनावली के अनुसार जनरल इस बात पर हुए कि विवाह के समय राजकुमारी को नीलसा हार पहने भी उसे पीर एवढाते नामक हाथी की मकवानपुर के राजा ने पृथ्वीनारायण को देना अस्वीकार कर दिया । जो भी हो दोनों वंशों में अनजन हो गई और पृथ्वीनारायण को बिना वधु के लौटना पड़ा ।

गोरखा के राज्याभिषेक पर बठने के उपरांत पृथ्वीनारायण ने अपने राज्य विस्तार की योजना तयार की और नेपाल घाटी को विजय करने का निश्चय किया । नेपाल घाटी को विजय करने का सर्वप्रथम उस परिस्थिति को दलते हुए पागलपन था । पृथ्वीनारायण का पिता को उस प्रयत्न में भयंकर असह्यता की सामना करना पड़ा था । परन्तु पृथ्वीनारायण का कठिनाइयाँ में घबरानेवाला व्यक्ति नहीं था । उसी गद्दी पर बैठते ही

विजय अभियान की तयारियाँ प्रारम्भ करदों। इधर सैनिक तयारियाँ हो रही थीं। उपर पृथ्वीनारायणसाहू ने पुण्यभूमि वाराणसी (काशी) की तीर्थ यात्रा की। यह अपनी सफलता के लिए मंगवान विष्णुनाथ का दान करने के लिए गया। रास्ते में उसने ईस्ट इंडिया कंपनी की सैनिक छावनीयों की देखा और अफ़सों का सैनिक मगटन का अध्ययन किया। उसी अनुमान है कि उसने अपने मुठों में जिन बंदूकों का उपयोग किया था उनको बानपुर शहर लखनऊ के बंदूकधियों ने बनाया था।

बनारस राज्य की सीमा पर उसका खुशी अधिकारियों से झगडा हो गया और क्रोध में जाकर उसने अपने खोप (अस्त्र) से एक खुशी अधिकारी की हत्या करदी। यह पकडा जाता परंतु एक बरागी ने साधु का वेश धारण करा उसे अपने दल में छिपा लिया और यह अवध होता हुआ नेपाल पहुँचा दिया। कुछ वर्षों के उपरांत जब पृथ्वीनारायणसाहू एक समृद्धिवाली शासक बन गया तो वह बरागी साधु बहुत बड़ी सहमा में लड़ाके साधुओं की सेना लेकर आया और पृथ्वीनारायण से उत्तन धा की मांग की अन्यथा उत्पात करने की धमकी दी। पृथ्वीनारायण ने उनमें कुछ को तो मरवा दिया और कुछ को जेल में डाल दिया।

पृथ्वीनारायण का मुख्य अर्थात् (मंत्र) अहिराम कुंवर एक खास जानि का गोरखा था। वह अत्यन्त साहसी धीर और चतुर था। उसी से राणा राज का उदय हुआ जिसने सौ वर्ष तक नेपाल पर शासन किया। गोरखा राज्य आर्थिक दृष्टि से अधिक समृद्धिवाली नहीं था। बात यह थी कि उसका भारत और तिब्बत से कोई सम्पर्क नहीं हो सकता था उनका तथा गोरखा राज्य के बीच में अन्य राज्य थे। अतएव गोरखा राज्य व्यापारिक मार्ग पर न होने के कारण आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न नहीं था। परन्तु गोरखा राज्य में धीरे धीरे उत्पन्न थे। पृथ्वीनारायण ने उनकी धीरता और साहस से गोरखा राज्य का एक दिगाल राज्य बनाने का सफल किया। नेपाल की घाटों के तीनों राज्या में जो खासमो पन्हु ईर्ष्या थी पृथ्वीनारायण उससे परिचित था। काठमांडू का शासन जयप्रकाश ने उसकी राजा जयप्रकाश भी और मन्गाव तथा पाटन के राजा उससे घृणा करते थे। उसका नाम उठाने तथा काठमांडू की निर्यात बाने का उद्देश्य से पृथ्वीनारायण ने काठमांडू के कुछ लोगों को लाजबंद कर अपने पक्ष में कर लिया और काठमांडू ने एक प्रभावशाली पक्षपाती दल लडा कर दिया जो राज्य के दिग्घटा का प्रधान करता था। काठमांडू का राजा जयप्रकाश से नाराज घाटों के सभी लोग असहमत थे। स्वयं उससे बरबारी उससे बहुत ही असहमत थे। उसका भाई पाटन और नट गोथ के शासक भी उससे घृणा करते थे। कारण यह था कि वह ब्रूर और सनको था।

जयप्रकाश की कमी दरबार में प्रमुख दरबारियों का अपमान कर बता था उसका नाराज होकर दरबारियों ने उसका भाई राज्यप्रकाश का समर्थन किया और काठमांडू राज्य का घाटों से प्रदेश का उभरे राजा घोषित कर दिया। परन्तु जयप्रकाश ने आक्रमण कर दिया राज्यप्रकाश को राज्य छोड़कर भागना पडा। परन्तु जयप्रकाश के विरुद्ध जयप्रकाश समर्थन नहीं हुए। दरबारियों ने उसकी रानी रयावती में निरुत्तर धरमन किया और विधोह कर दिया।

मन्त्री ने रानी दयावती के पुत्र को राजा घोषित कर दिया। एक दो घण्टे के अन्दर उधर भटकने के उपरान्त जयप्रकाश ने पडयत्र के द्वारा पुनः राजसिंहासन प्राप्त कर लिया। रानी दयावती समझ गई कि अब उसकी स्थिति बर्धनीय ही होगी। उसने उस मन्त्री को जिसने उससे पुत्र को राजसिंहासन पर बिठाया था फाँसी दिवायी। परन्तु उससे भी उसकी रक्षा नहीं हो सकी। जयप्रकाश ने उसको एक अमरी कोठरी में बन्द कर दिया और उसको गीश्र ही मृत्यु हो गई।

नवकोट के काशीराम थापा एक प्रसिद्ध सामन्त था। उसके धन की बहुत प्रतिष्ठा थी और लोग उसका आदर और श्रद्धा के साथ देखते थे। जयप्रकाश को उस पर यह सबकुछ था कि वह पृथ्वीनारायण से मिला हुआ है। काशीराम थापा उन राजाओं का पूजन था जिन्होंने बाद को एक सौ वर्ष तक सम्पूर्ण नेपाल पर निरंकुश शासन किया। नवकोट का सामन्त नाममात्र को काठमांडू के अधीन था। वास्तव में वह अठ्ठ स्वतंत्र था और काठमांडू तथा गोरखा दोनों से ही स्वतंत्र रहना चाहता था। १७४३ में जयप्रकाश ने काशीराम थापा को अपने दरबार में आमंत्रित किया और उसको गोरखा राजा से मिल रहे के अपराध में घोंघ से मरवा डाला। इससे नवकोट में बहुत असंतोष फैल गया और नवकोट जयप्रकाश के विरुद्ध हो गया।

जयप्रकाश का एक भाई पाटन का राजा था। वहाँ के प्रधानों (नेवार सामन्तों) ने उससे विरुद्ध पडयत्र करके उसको अधा कर दिया। अतः एक जयप्रकाश ने उन्हें पुलाकर पकड़ लिया किन्तु उसने उन्हें फाँसी न देकर लांछित और अपमानित किया तथा छोड़ दिया। उन ६ प्रधानों और उनकी पत्नियों को सारे गहर में फिराया गया और अपमानित करके छोड़ दिया गया। ये जयप्रकाश के विरुद्ध पडयत्र करने लगे।

भदगांव के राजा रणजीतमल्ल से भी जयप्रकाश का मतमुटाव हो गया था क्योंकि भदगांव के राजा ने काठमांडू के कुछ व्यक्तियों को बंध कर लिया था। उसका बदला लेने के लिये जयप्रकाश ने भदगांव के कुछ व्यक्तियों को जो भगवान मधुपतिनाथ के दर्शन करने आए थे कद कर लिया और धन लेकर ही छोड़ा।

जबकि जयप्रकाश पृथ्वीनारायण से युद्ध कर रहा था तो उसे अपनी सेना पर विश्वास नहीं था। अतएव उनको हटाकर उसने तराई तथा गोरखपुर के क्षेत्र से बाहरी भाड़े के सिपाहियों को सेना में रक्खा उससे वहाँ के सैनिक और जनता दण्ट हो गई। व्यय बहुत अधिक बढ़ जाने से और युद्ध के कारण खाना खाली हो जाने से जब उसको युद्ध के लिये धन की आवश्यकता पड़ी तो उसने मदिरों से शोषण-बाँदी और धन लिया। उसका परिणाम यह हुआ कि ब्राह्मण तथा धार्मिक व्यक्ति उससे विरुद्ध हो गये।

पाटन की राजनीतिक स्थिति अत्यन्त हीन थी। विद्रोही प्रधान एक राजा को गद्दी से उतार कर दूसरे को गद्दी पर बिठाते थे। अन्त में उन्होंने पृथ्वीनारायण को पाटन के सिंहासन पर बटने के लिये आमंत्रित किया। धतुर और युद्धिमान पृथ्वीनारायण ने स्वयं राजा बनना अस्वीकार कर दिया और अपने स्थान पर अपने भाई इलमदनगाह की भेजा। पाटन के प्रधानों ने पृथ्वी नारायण को बुलाते में अपनी भूत की समझ लिया। अस्तु उन्होंने इलमदन गाह को पाटन के राजसिंहासन पर बिठाकर पृथ्वीनारायण के विरुद्ध युद्ध की

घोषणा करदी। चार वष क उपरान्त १७६५ म उहाँने दलमदनगाह को भी तिहासन से हटाने एक नामनात्र क राजा को तिहासा पर बिठाया। इससे पाटन बहुत लज्जोर हो गया था और अपना रसा करने मे अतमय था।

उपर नन्गाव और काठमांडू में पुराना घर था। काठमांडू को नीचा दिखाने क लिय उत्तम १७४९ म पृथ्वीनारायन को नपाल घाटी पर आक्रमण कर काठमांडू राज्य को परास्त करने क लिय आमन्त्रित किया। इस प्रकार मठगाँव न भी अपनी कन्न जोबली। नपाल की घाटी के तीनों राज्य एक दूसरे स गभ्रता रखते थे अतएव पृथ्वीनारायन क विरुद्ध वे संगठित नहीं हो सक्ते थे। जयप्रकाश क विरुद्ध स्वयं उनके दरवाजी और जनता थी। पाटन की स्थिति खराब थी। इसल अछा अवसर पृथ्वीनारायन के लिये नपाल की घाटी पर आक्रमण करन का और क्या हो सकता था। पृथ्वीनारायन के मन मे समस्त नपाल पर अपना राज्य स्थापित करन तथा अपने पिता की पराजय का बदला लेना का तीव्र महत्वाकांक्षा थी और यह उसकी दृढता से तयारी कर रहा था।

पृथ्वीनारायन १ क्वत्र राजगीय स्तर पर ही नपाल की घाटी और समस्त नपाल विजय करन की तयारियाँ नहीं की। सपत्न गोरखा राज्य की प्रजा भी इस महाअभियाम म उनक साथ सहयोग कर रही थी। पृथ्वी नारायनगाह १ अपनी प्रजा म एसा उत्साह भर दिया कि प्रत्येक तरुण रथेछा स उमकी संग म भरती हान लग। प्राह्य क्षत्रिय टाफुगी तात नेजार वष्य सिमान गुरग और मपर रामी सेना म भरती लिये गप। गन तक कि हजो लहार घमार महत्ता गैवाल सनी को इस महाअभियाम म सम्मिलित किया गया। इस उपरान्त पृथ्वीनारायनगाह न पुन एकन्त किया। उसने प्रत्येक गोरखा राज्यवासी स बुद्ध के लिये धन देने की श्योल की। इसल परिणाम यह हुआ कि जो लोग गरीब स निरल थे बुद्ध क लिये नहीं जासते थे उन्ने नकद सोगा चादी हीरे जेवर दिए। १ गरीब थे उहाँन अनाप कल और सजिया दीं। चकि बुद्ध चल रहा था तो जो घाघर हो जात थे उनको सेवा मुद्रपा की श्ययस्या जोगों ने स्वेच्छा सेवा क आधार पर की। साराग म समस्त गोरखा राज्य की प्रजा इस बुद्ध में उत्तर पडी। पृथ्वीनारायन ने न्यत तयारी क अतिरिक्त कालूपा जसे और साहमी और राजनीति दिगारद को अपना मुख्य मनी बनाया। उपर पृथ्वीनारायनगाह न क प्रबध भी कर दिया कि न्य क इत लम्बे बुद्ध में दगा हो ता गोरखा राज्य की रसा की जाय। उसने अपने बुद्ध गरीब के नेनापतिव्य तथा कमचारियों का इसके लिय पीछ छोड दिया।

सब तयारा कर चकन क वाद उमा नक्शेट को विजय करन का निश्चय किया।

जित वष पृथ्वीनारायन गरी पर बठा उगी वष १७४२ म एक स घरी ने काठमांडू क राजा गणेश को सूचना दी कि गोरखा राजा क सिपाही नदकोट क बाजार म उगन दसे हैं। जयप्रकाश न सुरक्षा ही एक सेना ले जो उसने पृथ्वीनारायन क निष्पत्तियों को नपराट स हटा दिया। बात यह थी कि पृथ्वीनारायन ने थोड़े से ही सनिह नदकोट नज म।

दूसरे वष गोरखा राजा न पुन अपन सनिह नदकोट की ओर

भेजे । पृथ्वीनारायण को अपने मित्र कान्हीराम घापा से आगा भी कि वह उसे गढ़ की घाघियाँ सौंप देगा परन्तु उससे पूत्र ही जयप्रकाश ने कान्हीराम घापा को बुलाकर घोषे से मार डाला । परन्तु काठमांडू के राजा ने पृथ्वीनारायण के विरुद्ध आक्रमण नहीं किया । अपने मित्र कान्हीराम घापा के मारे जाने से पृथ्वीनारायण बहुत क्रुद्ध हुआ और उसने भीमवोग से नवकोट पर एक बड़ी सेना लेकर आक्रमण किया । इस बार मयकर युद्ध था पश्चात् उतान काठमांडू की सेना को परास्त कर नवकोट में हटा दिया और नेपाल की घाटी के प्रमुख द्वार नवकोट पर उरुका अधिकार हो गया । कान्हीराम घापा की मृत्यु से नवकोट सबंध क लिये गोरखा राज्य का एक भाग बन गया ।

जब पृथ्वीनारायण के अधिकार में नवकोट आ गया तो उसने कीर्तीपुर की ओर दृष्टि उठाई । कीर्तीपुर नेपाल घाटी के दक्षिण पश्चिम कोन में मदान से तीन सौ मील की ऊँचाई पर एक महत्वपूर्ण नगर था । अब गोरखा सैनिक पहलुदियों से पहरी द्वार मवान में लड़ने को उतरे ।

पृथ्वीनारायण का प्रधान मंत्री और सत्तापति कालुपांडे कीर्तीपुर के अजेय दुग पर आक्रमण करने के विरुद्ध था । यह जानता था कि कीर्तीपुर को विजय करने के लिये पयास तपारी नहीं है । परन्तु पृथ्वीनारायण कुछ सुनने को तयार नहीं था । जब उस सहामी घोर ने कीर्तीपुर पर आक्रमण करने का घोर विरोध किया तो तब गोरखा पृथ्वीनारायण ने उसकी वशमक्ति और राजमक्ति पर सबह किया और उसे विनश्वारा । कालुपांडे को अपने स्वामी की हस का तो बहुत ज्ञानि और दु रा हुआ कि यह उगरी स्वामिमक्ति और वशमक्ति पर सबह करते हैं । यह अपनी पत्नी के पास गया । उससे अतिम विदा ली और अपने इकतीन पुत्र को पृथ्वीनारायण के पास ले गया । पृथ्वीनारायण स उसने कहा—स्वामी ! मैं अब कीर्तीपुर पर आक्रमण कर गा यदि मैं युद्ध में मारा जा तो मेरे पुत्र की दयमात् करने और उसको अपना सेवा में रखना ।

सबसे विदा ल पायांडे सेना को ल घा पड़ा और कीर्तीपुर पर आक्रमण कर दिया । परन्तु कीर्तीपुर के लोग भी साहसा और धार थे । उन्होंने बट कर मुकामला किया । समासान युद्ध हुआ । दोनों ओर ने बहुत धुँसी सख्या में मन्तिक रणमिमि में सां गप । कालुपांडे को शौर्यति को प्राप्त हो गया । कीर्तीपुरवालों ने कालुपांडे के हथियारों को आगभरंद के मंदिर की दीवाल पर टांग कर उनका प्रदानी किया । ये हथियार आज तक उस मंदिर में मौजूद हैं । गोरखा सेना भाग लड़ा हुआ । भागत हुई सेना का जयप्रकाश की सेना में पीछा किया और गोरखा सेना को बहुत गहरी हानि उठानी पडी । जयप्रकाश की भारतीय सेना ने गोरखालय सरदार के रीनापतिव में पृथ्वीनारायण की सेना को तितर बितर कर दिया । गोरखा सेना उसी हनुमन्दी में भागी कि पृथ्वीनारायण राज्य अबला पड़ गया उसके साथ एक भी सैनिक नहीं था । सोमाप्यका रात्रि पड़ गई थी और रात्र की उम पर नजर नहीं पडी परन्तु पृथ्वीनारायण इतना गिदिल और बह गया था कि वह सोई नहीं सकता था । एक बीच जाति के व्यक्ति ने उसको अपनी पीठ पर लादकर उसे बाहचोक पहुँचाया था । इस यद्ध में पृथ्वीनारायण की पराजय तो हुई ही जाते बहुत से घोर सेनापति मारे गये । शत्रु की भी मयकर हानि हुई । जयप्रकाश की अधि कांग सेना घराणापी हो गई । पृथ्वीनारायण निराग और पराजित होकर

अब नवकोट लौट आया। यहाँ यह दो घण्टे तक भावी आक्रमण की तयारी करता रहा। उसने यह प्रण कर लिया था कि मैं नेपाल की घाटी को बिना विजय किए वापस नहीं लौटूँगा।

पृथ्वीनारायणशाह ने नेपाल घाटी की आर्थिक नाकेबंदी कर दी थी। कोई भी व्यक्ति किसी वस्तु को नेपाल घाटी में नहीं ले जा सकता था। आर्थिक नाकेबंदी इतनी कठोर थी कि नेपाल घाटी का व्यापार ठप्प हो गया और जो भी वस्तु नेपाल घाटी में बाहर ले आती थीं उनका अंश पड़ गया। नेपाल की घाटी में जो सात दर्रे थे जिनसे होकर नेपाल घाटी का नेप से सम्बन्ध था उन सबको पृथ्वीनारायण ने रोक दिया। पृथ्वीनारायण ने यह आर्थिक नाकेबंदी ऐसी कठोरतापूर्वक की थी कि यदि किसी व्यक्ति के पास थोड़ा-सा भी नमक और कपास मिल जाता तो उसको फाँसी देकर पेट पर लटका दिया जाता था। यहाँ तक यदि किसी स्त्री या बच्चे को भी नमक कपास अथवा अन्य वस्तु ले जाते पकड़ लिया जाता तो उसे भी कठोर दण्ड दिया जाता।

इससे अतिरिक्त उत्तम नेपाल की घाटी के सामानों तथा ऊँचे अधि कारियों को नदियुग में उन्हें ऊँचे पर्व और जंगलों का शिल्प देकर अपनी ओर मिला लिया। इस कार्य के लिये उसने दो हजार ब्राह्मणों को अपना भेदिया बनाकर नेपाल की घाटी में रखा था। जो भी लोग जयप्रकाश से भक्त हुए थे उनके इन ब्राह्मण जासूसों के द्वारा पृथ्वीनारायण ने अपनी ओर मिला लिया। इससे अतिरिक्त वह अपनी सैनिक तयारी तो कर ही रहा था।

इसपर कीर्तीपुर जो कि पाटन राज्य का एक नगर था उसके प्रधान ने यह बख्तर कि पाटन राज्य में विपत्ति के समय उनकी कोई सहायता नहीं की और काठमांडू के राजा जयप्रकाश ने सहायता की एक प्रतिनिधिमंडल जयप्रकाश के दरबार में अपनी कृतज्ञता प्रकट करने और नदियुग में काठमांडू को अपना अधीन स्वीकार करने के सम्यग् म प्रायना करने के लिए भेजा। समको जयप्रकाश ने उस प्रतिनिधिमंडल की घोर बदनामी की। कीर्तीपुर के कतिपय प्रधान व्यक्तियों को तो जमाने मरवा डाला प्रातनियियों को कूट कर लिया और उनका नेता दनबत्त तथा उसके साथियों को धीरतों के रूप में पटनापर काठमांडू की सड़कों पर घुमाया। होगा तो यह चाहिए था कि जय प्रकाश उनका आदर करना और उनका आभारी होना क्योंकि कीर्तीपुर के नियासियों की वीरता और साहस के कारण ही पृथ्वीनारायण की घोर पराजय हुई थी और घाटी तथा काठमांडू की रक्षा हुई थी।

इसी बीच में उसने मन्वानपुर के पश्चिम प्रभाग के राजा विगबदन पर आक्रमण कर दिया और नेपाल घाटी के दक्षिण पश्चिम के प्रदेशों पर अपना अधिकार कर लिया। विगबदन का परिवार भाग कर पाल्पा के राजा की शरण में चला गया।

इस प्रकार पूरी तयारी करके गोरखा राजा ने दूसरी बार कीर्ती पुर पर आक्रमण किया। महीनों तक जयपुर घट्ट हुआ। कीर्तीपुर के नेताओं में नेपाल घाटी के तीनों राज्यों में सहायता की प्रायना की किन्तु कोई भी कीर्तीपुर की सहायता के लिए नहीं आया। परन्तु कीर्तीपुर के सैनिकों ने पृथ्वी नारायण की सेना को एक बार पुन परास्त कर दिया। इस घट्ट में पृथ्वी नारायण का नाई सारपरत घट्ट अधिक घायल हो गया और उसकी एक

आल नष्ट हो गई । विष्णु शीघ्र गोरखा सेना फिर नक्सोट लौट आई ।

उस समय जबकि पृथ्वीनारायण नेपाल की घाटी में युद्ध कर रहा था उसका भाई लमजुंग का राजा गडबड कर रहा था । अस्त पृथ्वीनारायण ने सोचा कि अपने राज्य पर पश्चिम के इस राज्य की परास्त करके ही पूर्व में नेपाल की घाटी की विजय करता चाहिए । पृथ्वीनारायण ने लमजुंग पर आक्रमण कर उसे परास्त कर सधि करने पर विष्णु क्रिया पिसत कि वह निश्चिन्त होकर नेपाल की घाटी में बढ़ सके । इसके उपरान्त उसने मधुवान पुर के राजा पर आक्रमण कर उससे राज्य की अपने अधिकार में कर लिया । पृथ्वीनारायण ने मधुवानपुर के राजा के तराई के मकारी भाग को भी छीन लिया और उसके मुसलमान सामन्त अथर्वुला को मगाकर उमर जागीर के बाईस गावों पर भी अधिकार कर लिया ।

अपने राज्य के समीपवर्ती राज्यों की घरागायो पर पृथ्वीनारायण पुनः नेपाल की घाटी की जोर लौटा और उतान नक्सोट से फिर तीसरी बार कीर्तीपुर पर आक्रमण किया । कीर्तीपुर के बहादुरों ने फिर डरकर मुकामला दिया । गृहीनों का घमासान युद्ध हुआ । गोरखा सेनाएँ कीर्तीपुर के नगर में न घुस सकीं । गोरखा सेना का सेनापति पृथ्वीनारायण का मई स्वल्प रहा था और तबरीट के ऊँचे दरजा मजन से स्वयं पृथ्वीनारायण युद्ध का संचालन कर रहा था । जब यह युद्ध लम्बे समय तक चलना रहा तब कहीं मन्गावि और पान्त के राजाओं को यह फुरसत हुई कि वे अपने आपसी मतभेद को तर कर पृथ्वीनारायण का विरोध करना आत । परन्तु अब बहुत दूर हो गई थी । काठमांडू के बहुत से सामान्य पृथ्वीनारायण से मिल गये थे । गोरखा सेना उनसे सहायता से नेपाल की घाटी की सना को मार नपाया । परन्तु फिर भी कीर्तीपुर में गोरखा सेना नहीं घुस पायी । कीर्तीपुर के प्रमुख प्रधान वनूवन्त जिसका जयप्रकाश ने घोर भयमान किया था नगर से निपल भागा और पृथ्वीनारायण से जा मिला । उमर घोड़े से गोरखा सेना को कीर्तीपुर में प्रवेश करा दिया । गोरखा सेना घुसक ता नगर में घुस आ- और उसी नगर के सभी पाठशाला पर अपना अधिकार कर लिया । परन्तु मुख्य गड सभी भी पराजित नहीं हुआ था । पृथ्वीनारायण ने घोषणा की कि यदि नगरनिवासी हथियार उाल देंगे तो सभी को क्षमा कर दिया जायेगा । सब और निराश और नगरवासीयों ने युद्ध समाप्त कर हथियार रख दिए । कीर्तीपुर विजय हो गया । पृथ्वीनारायण ने जो नक्सोट में था अपने भाई स्वल्पपुत्र को आज्ञा दी कि प्रमुख नागरिकों को मार दिया जाय और प्रत्येक स्त्री पुरुष और बच्चे को नाह और छोड़ बा- दिया जाय । बच्चे उहाँ बच्चा को छोड़ जाय जो गोद में हों । आज्ञा का पालन हुआ । सभी के नाह और गीठ काट दिए गए । यह हृदय अमन क्षण था । ना- और ओ- ती- गए कई मन हुए । कीर्तीपुर का नाम नागरिकपुर रख दिया गया ।

पृथ्वीनारायण ने सम्मिलित कीर्तीपुर में ऐसा अमानवीय व्यवहार इमनिधे किया क्योंकि कीर्तीपुर में उस के बार अमानजनक पराक्रम मिली थी । बागपाड़े और उमर के घोर सेनापति मारे गये थे । उतारी गंगा का वनपनाशन विनाश और व्यस हुआ था । इसके अनिश्चित पृथ्वीनारायण इसके द्वारा नेपाल घाटी के नागरिकों में भय और आतंक बिटा

बेना चाहता था जिससे कि वे उसका विरोध करने का साहस न करे ।

जब पृथ्वीनारायण की सेनाओं ने मरुगापुर को ल लिया और उसके मुस्लिम सामंत के सराई के बाईस गांव भी छीन लिए तो बगाल का नवाब और कासिम और ईस्ट इंडिया कंपनी भी चौकरी हो गई । अभी तक तो बगाल के गवाय और ईस्ट इंडिया कंपनी यही समझते थे कि गोरखा राजा अपने प्रवेश के पहाड़ी राजाओं से लड़ रहा है परन्तु मरुगापुर की विजय ने उन्हें विद्वेस दिला दिया कि वह सम्पूर्ण हिमाचल को विजय करना चाहता है ।

मन्वानपुर के राजा ने और कासिम से सहायता की प्रार्थना की और अपने पुत्र तथा अपने प्रधान मंत्री नार्कसिंह के साथ भागदर नवाब के राज्य में पहुँचा । जनवरी १७६३ में नवाब ने गुरगोनिया की अधीनता में एक बड़ी सेना मरुगापुर पर आक्रमण करा क लिए भेजा और स्वयं नवाब ब्रितिया आकर इस युद्ध का परिणाम देखन के लिये उठर गया । और कासिम तथा अग्रजों को यह विश्वास था कि नेपाल में मान का खाने हैं इसी कारण उनकी ल लक्ष्मरी दृष्टि नेपाल पर थी । यही कारण था कि और कासिम ने मन्वानपुर पर आक्रमण किया । भयकर युद्ध हुआ । गुरगोनिया की सना का समूल नश हुआ और गोरखों के हथ में बहुत सी सनिष् सामग्री पड़ गई । इस युद्ध से पृथ्वीनारायण की शक्ति बहुत बढ़ गई और उसकी प्रतिष्ठा भी ऊँची हो गई ।

जिस समय पृथ्वीनारायण को ताप पाटन के काठमांडू पर युद्ध कर रहा था उस समय काठमांडू के राजा जयकाशमल और भग्यात्र के राजा रणजीतमल्ल ने अग्रजों से सहायता की प्रार्थना की । राजा की नपाल पर गिद्ध दृष्टि थी । वे उसको हटपना चाहते थे । अस्तु उन्होंने पृथ्वीनारायण को लिख भेजा कि वे उसके तथा नेपाली राजाओं के बीच मध्यस्थता करना चाहते हैं । परन्तु पृथ्वीनारायण ने अग्रजों को उत्तर दिया कि उसे अग्रजों का मध्यस्थता की कोई आवश्यकता नहीं है । वह अग्रजों से कोई भी वास्ता नहीं रखना चाहता ।

कप्तान बिनलौच की अधीनता में एक अग्रजो सना नेपाल भेजी गई । पृथ्वीनारायण ने अपना ध्यान पाटन से हटा कर अग्रज सना की ओर लगाया । उसने अग्रजो सेना को सिन्धुलीगढ़ी तर आने दिया जिससे अग्रज सामंते बि उसमें उनका सामाना करने की शक्ति नहीं है । पृथ्वीनारायण अग्रजों से सराई के मदान में नहीं लड़ना चाहता था । वह चाहता था कि जब अग्रज पहाड़ी क्षेत्र में आ जावे तब लड़ा जावे । इसी कारण पृथ्वीनारायण ने सिन्धुली गढ़ी पर अग्रजों का अधिकार हा जाने दिया । जब सिन्धुली से अग्रजो सेना प्रवेश में बड़ी तो गोरखा सेना उस पर दूट पड़ी । गोरखा सना की दो टुक किया ने औरमंडू तथा घंसा गुर ग के सनापतिव्य में अग्रजो सना को धुरी तरह परास्त कर दिया । अधिराज अग्रजो सेना नष्ट हो गई । जब कप्तान बिनलौच और छोटे से शक्ति इस अपमानजनक पराजय की कहानी सुनाने के लिये बच गए । इस पराजय के उपरांत अग्रजों का पुन पृथ्वीनारायण से युद्ध करने का साहस नहीं हुआ । अग्रजो से निवृत्त होकर पृथ्वीनारायण ने पुन नेपाल की घाटी की ओर अपना ध्यान लगाया ।

पृथ्वीनारायण पुन की ओर बढ़ गया और रामहृण राणा की

अधीनता में उसने गोरखा सेना को पाटन की ओर भेजा । रामकृष्ण राणा राणा अहिरामकुंवर का पुत्र था जिससे नेपाल का प्रसिद्ध राणा बन गया ।

गोरखा सेना रामकृष्ण राणा की अधीनता में पाटन की ओर गई और उस नगर को घेर लिया । पाटन की सेना गोरखा सैनिकों की ताकत का सामना करने में असमर्थ थी । गोरखा सेनाध्यक्ष ने पाटन के निवासियों को यह धमकी दी कि यदि उन्होंने हथियार नहीं रखे तो फौसीपुर की भांति यहां के निवासियों की नाक और आँठ तो काटे ही जाएंगे सोपा हाथ भी काट दिया जाएगा और यदि वे हथियार छाड़ देंगे तो उनके प्राणों की रक्षा की जायेगी । अन्त में पाटन के नागरिकों ने हथियार डाल दिए । पृथ्वीनारायण ने यहां के नागरिकों के साथ सो फूरता का व्यवहार नहीं किया और आरम्भ में यहां के उन प्रधानों का भी उचित आदर सम्मान किया जो कि विन्यासघात करके उससे आ मिल थे और उसको पाटन देने का निमंत्रण दिया था । परन्तु जब नगर पर उसका पूरा अधिकार हो गया और वे सब प्रधान पृथ्वीनारायण के कब्जे में आगये तो उसने उन सभी प्रधानों को मरवा दिया । उसका सिद्धान्त यह था कि जो एक बार विन्यासघात कर सकता है वह सबके विन्यासघात करेगा ।

अब गोरखा सेना काठमांडू की ओर बढ़ी । काठमांडू के प्रधान व्यक्तियों को पृथ्वीनारायण ने घन दंकर अपना भविष्य में पद देने का राजलक्ष्य कर अपनी ओर पहले ही मिला लिया था । जयप्रकाश के दरबारी सेना तथा अब सभी लोग मिले हुए थे । उस समय काठमांडू में नेपाल घाटी का प्रमुख उत्सव दश यात्रा हो रहा था । सारी सेना उत्सव में मग्न थी । पृथ्वीनारायण की सेना तीन ओर से काठमांडू में घसी । काठमांडू पर सरलता से अधिकार हो गया । जय प्रकाश अपने घोड़े से विन्यस्त सैनिकों के साथ भागा । बीच में पाटन के राजा को साथ लेकर वह भटगाँव गया । अब गोरखा सेना नेपाल की घाटी के गर्व को विजय करती हुई भटगाँव पहुंची । प्रत्येक गाँव के निवासियों ने गोरखा सेना का घहादुरी से मुकाबला किया । भटगाँव का राजा रणजीतमल्ल पाटन का राजा तेजनरसिंहमल्ल और काठमांडू का राजा जयप्रकाशमल्ल तीनों ही इकट्ठे थे । गोरखा सेनाओं ने भटगाँव को विजय कर लिया । जयप्रकाश घोरतापूर्वक युद्ध करते हुए बहुत जलमी हो गया । तेजनरसिंह को पृथ्वीनारायण ने जेल में डाल दिया जहाँ वह एक बंदी की भांति मरा और रणजीतमल्ल को उसने वाराणसी जान की आज्ञा दे दी । बात यह थी कि लड़कपन में वह भटगाँव आकर रणजीतमल्ल के पास रहा था और उसका मित्र था ।

जयप्रकाशमल्ल ने अबभूत धीरता का परिचय दिया था । वह अत तक बहुत बहादुरी से लड़ा और लड़ते हुए उसका घोर गति प्राप्त की थी । उसने मंत्रियों दरबारियों ने उसने साथ विश्वासघात किया था ।

जयप्रकाश पशुपतिनाथ के मंदिर के नीचे घाण्मती नदी के किनारे आयीघाट पर मरा । जय जयप्रकाश अपनी मृत्युशय्या पर था पृथ्वीनारायण ग्राह अपने शत्रु से मिलने गया । पृथ्वीनारायण ने जयप्रकाश से पूछा कहिये अब आप क्या कहते हैं आपने गय से कहा था कि आप मुझ पराजित कर देंगे । जयप्रकाश ने उत्तर दिया — मैं अपनी पराजय स्वीकार करता हूँ तुम विजयी हुए और मैं परास्त हुआ । निजति को यही स्वीकार था । मुझ केवल इस बात का डर है कि मेरे दादमियों ने ही मुझे धोखा दिया । ये विश्वासघाती थे, उगुनि अपवित्र नोजन लाया था । मुझे प्रगल्भता है कि मैं

भय मर रहा है। गन्धर्वों की बच मे रहने से रणभूमि में युद्ध करते हुए मरना कहीं अच्छा है। पृथ्वीनारायण अपने वीर शत्रु जयप्रकाश के इस उत्तर से प्रभावित हुआ। उसने जयप्रकाश से कहा कि यदि आपकी कोई इच्छा हो कहिए मे पुरी करूंगा। पहल तो जयप्रकाश चुप रहा किंतु जब पृथ्वीनारायण ने बहुत भावपूर्ण किया तो जयप्रकाश हसा और फिर गम्भीर हो गया जैसे कि वह कुछ सोच रहा हो। उसका अन्त समीप आ रहा था यकायक उत्तमित होकर उसने कहा अच्छा तुम मुझ एक छाता और जूते दो। समी यह सुनकर स्तब्ध हो गए। पृथ्वीनारायण ने कहा कि उसकी वास्तविक इच्छा उस समय तक पुरी नहीं की जा सकेगी जब तक कि मेरी तीन पीढ़ियां सिंहासन पर न बठ जायं परन्तु उसने एक छाता और जूते जयप्रकाश को दे दिए।

भटगाँव के राजा को भी अपने सम्बन्धियों दरबारिया तथा प्रजा से घृणा हो उठी थी। यात यह थी कि समी ने उसके साथ विश्वासघात किया था। अतएव उसने नेपाल में रहने की अपक्षा अपने दंग को छोड़कर धाराणसी में जाकर रहना उचित समझा। भटगाँव के सात भवष (जारज) पुत्र थे। वे सातों पृथ्वीनारायण से मिल गए थे। जब रणजीतमल्ल मयघ के लिए नेपाल छोड़कर धाराणसी जा रहा था और जब घट घाँगिरी पर्वत के गिघर से नेपाल की घाटी की ओर आते म अन्तिम बार देख रहा था उस समय उसने एक कविता कही जिसका आगम्य यह था कि उस घाटी के लोग विश्वासघाती हैं। उसने उन सात राजवंशीय विग्रामघातियों के विश्वासघात का भी उल्लेख किया।

पृथ्वीनारायण न उन सातों को पुनः उहे बहुत धिक्कारा। उनकी नाक बटवा दी और उनकी सारी सम्पत्ति जब्त करली।

नेपाल की घाटी को विजय करने के उपरान्त पृथ्वीनारायणगाह में अपने ठानुर सनापति बहुरसिंह को उत्तर की ओर कुटी और किरण दरों तक विजय करने के लिए भेजा जिससे कि भविष्य में तिब्बत नेपाल के क्षेत्र में हस्तक्षेप न करे।

पृथ्वीनारायण स्वयं रामदृष्ट राणा को लेकर पूव की ओर किरान्ती बचीलों से युद्ध करने के लिए चल पया। किरान्ती बचील पूव में पहाड़ी प्रदश में रहते थे और जिस प्रकार पश्चिमीय पहाड़ों प्रदश के परबतिया (गुरगा) वीर और लड़ाकू थे उसी प्रकार यह किरान्ती लोग भी विकट साहसी और वीर थे। दोनों ओर से मयकर युद्ध हुआ। ऐसा कठिन युद्ध पृथ्वीनारायण की कल्पना के बाहर था। अन्त में गुरगा सनाओं ने किरान्ती सेना को डूलीखेल तक हकल दिया। वहाँ वीर और योग्य किरान्ती सेनापति मोहिन्द्राय ने उसका माग रोत्र दिया। उस प्रदश के लोग माग गए। उन्होंने मोहिन्द्र से उसका मागने की कहा किन्तु उसने वहाँ से एटना स्वीकार न किया। उसकी सना कम होती जा रही थी, गोरला साग उर पर कठोर आप्रमण कर रही थी किन्तु यह वीर रणभूमि में नहीं हटा और लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हो गया। यह युद्ध २१ जून १७६८ में हुआ था। पृथ्वीनारायण जय घोडे पर सवार होकर रणभूमि को बखने गया तो उसने अन्न वीर गन्धर्वों को आवर और सम्मान दिया।

पृथ्वीनारायण यह समझ गया कि उसके लिए भविष्य में ऐसा भयकर युद्ध लड़ना सम्भव नहीं है इस कारण उसने किरान्ती शासक तथा

उसके आदिमिया के साथ बहुत उदारता का व्यवहार किया और उसके परिवार को अपने संरक्षण में ले लिया। उसने सभी किराती नेताओं को उनके प्रदेश का अपनी अधीनता में राज्यपाल बना दिया। इस प्रकार उसने इन घोर जातियों की स्वामिमक्ति को प्राप्त किया। अब किराती भी गोरखा हो गए। वे गोरखा राज्य के अधीन आ गए।

पूरे के किराती जातियाँ - इन प्रभुत्व में लाने पृथ्वीनारायण घाटी की ओर लौटा और उसने फाठमाझू को अपने राज्य की राजधानी बना कर स्वयं अपने को नेपाल का राजा घोषित कर दिया। अब पृथ्वीनारायण का राज्य पश्चिम में पुराना गोरखा राज्य नपाउ को घाटी पूरु में सिक्किम तक किराती प्रदेश और उत्तर में तिब्बत तक फैल गया। अभी तक नेपाल की घाटी को ही नेपाल कहा जाता था किंतु अब इस जिनाले राज्य को नेपाल कहा जान लगा और उससे सभा रहनेवाला को नेपाली या गोरखा कहा जाने लगा।

परन्तु अभी भी पश्चिम में चौबीसी और धार्पसी राज्य थे जो अभी भी नेपाल के नवीन राज्य के लिए उत्तरा बन सकते थे। अस्तु पृथ्वीनारायण ने एक एक करके उनको समाप्त कराना आरम्भ कर दिया। उसने सभी राज्यों को ले लिया। किन्तु जब वह दक्षिण की ओर बढ़ा तो तामाहुग के राजा ने कड़ा मुकाबला दिया। पृथ्वीनारायण की सेना पर उसने इतने प्रबल प्रहार किए कि पृथ्वीनारायण ने उससे मुझ न करना ही उचित समझा। विजित प्रदेश की व्यवस्था करने के लिए वह लौट गया और फिर तामाहुग से लसा-जोला पूरा करने के लिए कभी वापिस नहीं आया।

दूसरे वर्ष उसने विजयपुर राज्य पर आक्रमण कर दिया। पृथ्वीनारायण इस राज्य की समाप्त करवाना चाहता था क्योंकि यह भारत को जानबाल नपाली भागों के बहुत नजदीक था। विजयपुर के राजसिंहासन पर पाँच वर्ष का बालक था। उसकी माँ तथा उसका प्रधान मंत्री अगर्मासिंह बालक राजा को लेकर ईस्ट इंडिया कंपनी के प्रदेश में भाग गए। विजयपुर विजय हो गया। पृथ्वीनारायण का विचार था कि यदि यह बालक ईस्ट इंडिया कंपनी के प्रभाव में रहा तो मविष्य में उत्तरा ही सकता है। पहले तो उसने यह प्रयत्न किया कि बालक उसके अधिकार में आजावे। उसने उसे राजसिंहासन पर बठाया था आश्रयान भी दिया। परन्तु जब यह असफल रहा तो उसने उस प्रदेश को अपने अधिकार में रखने और जो विजयपुर राज्य ईस्ट इंडिया कंपनी को वापिस कर देता था उस पृथ्वीनारायण ने देना स्वीकार किया।

पृथ्वीनारायण सिद्धिन्त राज्य का विजय कर नपाउ की सोमात्रा को भूतान तक लै जाना चाहता था। किन्तु वह अपने जीवन-काल में यह न कर सका। पृथ्वीनारायण ने उन सभी प्रमुख घट्टप्रकारियों को जिन्होंने अपने ल्याभियों के लिए उसे सहायता दी थी मरदा दिया था। इसीसे लकर बहुधा पृथ्वीनारायण की आलोचना की जाती है। परन्तु उस समय नेपाल में छोटे छोटे राज्यों के दरबारों में इतने अधिक घट्टप्रकारियों थे कि जब तक पृथ्वीनारायण उनको समाप्त न करता तब तक उसका राज्य भी सुरक्षित नहीं रह सकता था।

पृथ्वीनारायण घोर, साहसा, दूरदर्शी और घतुर राजनीतिज्ञ था। यह

जानता था कि यदि नपा-क इन छोटे छोटे राज्यों को समाप्तकर एक मुहृद नपाल को जन्म नहीं दिया जावेगा तो ब्रिटिश नपाल को विजयकर उसको अपने आधीन कर लेंगे। ईस्ट इंडिया कम्पनी को गिद्धट्टि नपाल पर ची। यदि पृथ्वीनारायण इस सनिक अभियान द्वारा नपा-क को ए-ए मुहृद और बलवान राय न था देता तो नपाल भी ब्रिटिश साम्राज्य के उदर में समा जाता। पृथ्वीनारायण ने नपाल का एकीकरण कर उसे अंग्रजों की दासता से बचा लिया।

यही नहीं उसने अंग्रजों साम्राज्य के अपद्रुत ईसाई धर्मप्रचारकों को भी नपाल की घाटी से निकाल बाहर किया। उनके मिशन को समाप्त कर दिया। पृथ्वीनारायण अंग्रजों की चाल को जानता था वह उगत घृणा करता था अतएव उसने अंग्रजों को नपाल से दूर ही रखा। यही कारण था कि जब भारत धर्म अंग्रजों की दासता में फस गया नपाल अपनी स्वतंत्रता की रक्षा कर सका। वास्तव में यदि देखा जाय तो पृथ्वीनारायण आधुनिक नपाल का जनक है।

पृथ्वीनारायण नपा-क विजय के उपरांत अधिक दिनों तक जीवित नहीं रहा। अपनी विजय के उपरांत जो थोड़े समय वह जीवित रहा उसमें उसने अपने विनाल राज्य के प्रशासन में सुधार किए, मुद्रा में सुधार किया। यही नहीं उसने गोरखा सना को सुसंगठित किया और उसे एक सवल सेना बना दिया।

पृथ्वीनारायण बीमार पड गया। उसकी बीमारी बढ़ती। गई घण्टी ने उसे शरद श्रुत में देवघाट जाने की राय दी क्योंकि वहाँ की जलवायु गरम है। कुछ इतिहास-लेखकों का कहना है कि पृथ्वीनारायण १७७१ या १७७२ में मोहन तीर्थ में गडक नदी के समीप मरा परतु वास्तव में उसकी मृत्यु १७७५ में हुई। पृथ्वीनारायण की मृत्यु के उपरांत उसका पुत्र प्रतापसिंह गार्ह नपाल के राजसिंहासन पर बठा।

नैपाल का विस्तार

महाराज पृथ्वीनारायणशाह की मृत्यु होते ही उसके ज्येष्ठ पुत्र प्रतापसिंहशाह ने अपने भाई बहादुरशाह को बंद बर लिया जिससे कि उसके सिंहासनाब्ध होने में कोई कठिनाई न हो। कुछ समय उपरान्त प्रतापसिंहशाह ने अपने भाई बहादुरशाह को दगनिकाला ब दिया।

यद्यपि प्रतापसिंहशाह अपने पिता के समान सज्जस्यो और प्रभावशाली शासक नहीं था परन्तु उसम पिता के समान ही नपाळ के विस्तार की महत्वाकांक्षा मौजूद थी। फिर पिता द्वारा छोडी हुई एक सुसंगठित और अनेक युद्धों का अनुभव प्राप्त सेना उसके पास थी। उसन तत्काल के कुछ भाग को अपने राज्य में मिलाने का प्रयत्न किया। उधर भीमोत्ता राजे बहुत गड्यड़ करते थे। वे नपाल के महाराजा की अधीनता को स्वीकार करते हुए भी कमी कमी उसकी प्रभुता को चनौती देत थे। अस्तु प्रतापसिंहशाह ने उनका वमन करन का निश्चय किया। उनमे गीघ्र हो सोमेश्वर उपात्रीग और जोगीभारा पहाडी राज्यों को विजयकर उनकी सत्ता को समाप्त कर दिया। १७७७ में उसकी मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के उपरान्त उसका पुत्र बालक रणबहादुरशाह नपाल के सिंहासना पर बठा। बालक रणबहादुरशाह छोटी उमर का था इस कारण राज्यशासन चलाने के अधिकार को फिर उसके चाचा बहादुरशाह और उसकी मां में भयकर रिग्रह उठ जबा हुआ। बात यह थी कि बहादुरशाह को जय दगनिकाला ब दिया गया तो वह बिहार के बंतिगाह स्थान पर राजन लगा था। जैसे ही उते अपने भाई प्रतापसिंहशाह की मृत्यु की सूचना मिली वह बिहार से नपाल वापस लौट आया तथा रिजेंट बनकर नपाल का शासन करने के अपने अधिकार की घोषणा की। राजमाता ने उसका विरोध किया। दोनों पक्षों में युद्ध हुआ। राजमाता विजयी हुई और बहादुरशाह को एक बार पुन दग से भागना पड़ा।

राजमाता राजेन्द्रशमी के शासनकाल म उसके प्रतिद्वन्द्वी प्रतापसिंहशाह का शासन न नपाल की सीमाओं का पश्चिम म और अधिख विस्तार किया। उसने बास्की और गुरुजोने को विजय किया। सामजंग तथा शानाहग को भी उसने परास्त कर दिया यद्यपि उन दोनों युद्धों म विजितों ने अस्मृत शीघ और धीरता का प्रदर्शन किया था।

कुछ समय के उपरान्त राजमाता राजेन्द्रशमी की भी मृत्यु हो गई। बहादुरशाह गीघ्र ही नपाल लौट आया तथा उसने नपाल का शासन पुन अपने हाथ में ल लिया। बहादुरशाह के शासनकाल म तथा बाद की रणबहादुरशाह के शासनकाल में नपाल की सीमाओं ने

दामोदर पांडे सरुपासिंह रामकृष्ण राणा और अनरुसिंह यापा जैसे वीर और कुशल सेनापतियों की अधीनता में पाल्पा को छोड़ कर सभी चौबोसा और बाईसा राजाओं को सदय क लिए परस्त कर दिया और किरान्ती नेताओं की स्थित प्रता को समाह्वर किरान्ती प्रवदा को पूण रूप से नेपाल शासन के अधीन कर लिया । नेपाल की सनाआ ने पश्चिम में गढ़वाल और कुमायू प्रदेश पर भी अपना अधिकार कर लिया ।

१७८८ में बहादुरशाह ने मोरग के गोरखा मुमा को ६ हजार सिक्कों के साथ सिक्किम पर आक्रमण करने के लिए भेजा । किरतानी प्रदेश से उसने सिक्किम पर आक्रमण किया । सिक्किम की राजधानी गगटोक तक नेपाली सेनाएं बिना अधिक सभय किए बढ़ती गई । सिक्किम का राजा एक बहुत बड़ी सना लखर नेपाल की सेना का सामना करने आया । मयकर और घमासान युद्ध हुआ । यद्यपि नेपाली सेनाआ ने सिक्किम की सेनाओं पर पूण विजय प्राप्त की और सिक्किम की अधिकांश सना नष्ट हो गई परंतु नेपाल की सेना को भी इस युद्ध में गहरी क्षति उठानी पड़ी । सिक्किम का राजा भाग कर तिब्बत चला गया । सिक्किम के राजा ने तिब्बत की सीमा में पहुँच कर लहासा सरकार से सहायता की प्रायना की । लहासा सरकार ने चीन सरकार से नेपाल के विरुद्ध सहायता की प्रायना की क्योंकि पिछले कुछ वर्षों से नेपाली सेनाएं कुटी के दुगम दर्रे को पार कर तिब्बत को पदाग्रान्त कर रही थीं । नेपाल तिब्बतियों की अपन महा छोटे सिक्कों का प्रचलन करने से रोचना चाहता था । चीन सम्राट निरुत तथा सभीप्रवर्तों पवतीय प्रदण में गोरखा सेनाआ के इन आक्रमणों से चीन । उसने दया कि गोरखा सेनाएं तिब्बत में घुस रही हैं तथा घुम्बो घाटी से ध्यापारिक माग पर अधिकार जमाना चाहती हैं । अस्तु उसने तिब्बत की सहायता के लिए सना भेजने का निश्चय किया ।

नेपाल की यह बहुत दिनों से निर्यात थी कि तिब्बती ध्यापारी नेपाल में छोटे सिक्कों का प्रचलन करते हैं । उस वृहान उन्होंने तिब्बत पर आक्रमण करने की योजना तयार की । नेपाल के गासपों की दृष्टि तिब्बत क घनी मठों पर लगी हुई थी । वे उनके घन को प्राप्त करना चाहते थे । नेपाल की सेना नेहरू-जांग तथा तिब्बत में घसती चली गई । नेहरू-जांग की नेपाली सेना ने घर लिया । तिब्बत की सना ने कई बार प्रयदन किया किन्तु नेपाली सेना ने हर बार उन्हे मार नाया । फिर भी नेपाली सना पूरी तरह से तिब्बती सना को परास्त न कर सकी । परंतु गोरखा सेना ने उस स्थान की कल्पनातीत सम्पत्ति को लूटा । उसी समय में चीनी सेनापति 'छान-चू' एक बहुत बड़ी चीनी सेना के साथ लहासा आया । सम्राट ने उसे नेपाली सेना की तिब्बत से बाहर सदय देने की आज्ञा दी थी ।

इस सम्बन्ध में चीनी इतिहासकार जो-पूजान का विवरण यहां देना उचित होगा । गोरखा शासकों ने नेपाल के ध्यापारिक माल पर अधिकार कर लगाने और नमक र्भ मिट्टी मिली होने का बहाना करके तिब्बत पर आक्रमण कर दिया । चीन सरकार ने जिना सेनापतियों को गोरखा सेना की तिब्बत से निष्काट बाहर करने में लहासा सरकार की सहायता के लिए भेजा था उन्होंने इमार्लामा को सलाह दी कि वह प्रतिक्रिय १५ हजार स्वयं सिक्के

मिलने आये। बहादुरशाह ने कहता भेजा कि यह चीनी सनापति को यह सम्मान नहीं द सकता। यदि वह उससे मिलने जाना चाहता है तो जा सकता है अन्यथा वह अपने स्वामी के पास वापस जा सकता है। चीनी सनापति ने उस अपमान को पी लिया और काठमांडू आया। वहाँ भी उसका विशेष सम्मान नहीं किया गया। उसका अन्न लाने के लिए एक नेपाली चौबदार को भेजा गया और उसको प्रतीक्षा कराई गई। चीनी सम्राट के पत्र में यह माग की गई थी कि नेपाल सरकार ५२ करोड़ रुपये सहाता सरकार को द सहाता के ज़िम मंत्री को नेपाली सेना ने कद कर रक्खा है उसको सौं लिया जावे। बहादुरशाह ने चीन सम्राट को उन मांगों को ठकरा दिया।

जब दूत अपमानित होकर लौटा और चीन सम्राट को नेपाली शासक द्वारा की गई अनइतना की सूचना दी गई तो सम्राट ने सैनिक अभियान की आज्ञा दी। मांग फू कागान ने पुन काठमांडू से सम्राट की मांगों को पूरा करने को कहा। नेपाल के शासक ने तिब्बत के मंत्री को इस गत पर छोड़ने का वचन दिया कि संधि हो जावे। तब चीनी सेनापति ने युद्ध की घोषणा कर दी। बहादुरशाह ने नेपाल के अत्यन्त कुशल और योग्य सनापति दामोदर पांडे को चीनी सेना का सामना करने के लिए भेजा।

यद्यपि चीनी सेना बहुत बड़ी थी पर नेपाली सैनिक बड़ी वीरता और सहस्र से लड़। दामोदर पांडे की वीरता के साथ चीनी सेना पर आक्रमण करता हुआ पीछे हटता जाता था। यद्यपि चीनी सेना बहुत बड़ी होने के कारण नेपाली आक्रमण को सहन कर लती थी परन्तु उसकी बहुत दक्षिण होती थी। नेपाली सेना इस वीरता और साहस से लड़ी कि चीनी सेना आत्मविकृत हो गई। उस ऊँचे पर्वतीय प्रदेश में नेपाली सेना का साहस और गीय देखकर चीनी सनापति और मयमोत ही उठे। नेपाली सेना ने चीनी सेना को कई युद्धों में पराजित किया और दक्षिण पहुँचाई। परन्तु दामोदर पांडे योजना के अनुसार पीछे हटता जा रहा था। पीछे हटने के साथ वह मार्गों और पुलों की नष्ट करता जा रहा था। इस कारण चीनी सेना को आगे बढ़ने में बहुत अधिक कठिनाई होती थी। अगस्त १७९२ में येतरायती नदी को तहाँ से पार किया जा सकता था और नयकोट की माग जाता था वहाँ दामोदर पांडे अपनी सेना सहित नदी के दूसरे किनारे पर छिप गया। उसने चीनी सेना को उस सखीण पुल पर आने दिया और ज चीनी सेना पुल पर आ गई तो उसने मयमोत वेग से चीनी सेना पर आक्रमण कर दिया। सामने की गुरा सैनिक मयमोत मार कर रहे थे पीछे पीछे म पहाड़ों पर से उतर कर तो विगाड चीनी सेना आगे बढ़ रही थी वह पीछे से चीनी सेना को घेरना कर रही थी। चीनी सेना बरी तरह से परागामी हो लगी। समस्त चीनी सेना में घबराहट फैल गई। वह मयमोत होकर आतपस्त हो गई। उसी समय दामोदर पांडे ने पुल को तोड़ दिया और दूर उस पहाड़ी मयमोत बग म बहने वाली नदी में बह गया।

गौरवा सेना का पूर्वीय माग दिगार्धों की लूट का बहुमूल्य माल लिये आगे बढ़ रहा था। साधारणतया उस कुी बरें से नेपाल की ओर बढ़ना चाहिए था परन्तु उनका सेनापति को मय था कि वहाँ नेपाली सीमारक्षक गया चगी आँ के ती उनका सामान भी जाब करेगे और तो लूट का बहुत मास सैनिक लाए थे वह उनमें ल लिया जावेगा। अनएन उगोंने कुी बरें से न जाकर हानिया या नोपती-न दरे से जाना निश्चित किया। इस मयानक बरें

को भयापहता राखदिवस थी । इस भयानक दूर म हिम और बर्फोंकी तेज हवाओं से वो हजार गपाली सैनिक मर गए । लेकिन ये लूट का सामान लकर उस भयानक दूर का पार कर गए । उस दूर की भयानकता और वहाँ की विपत्तियों की क्या को आग तक नेपाल नहीं मूला ह ।

बहादुरशाह से उस समय बड़ी राजनीति मूठ हुई । उसने मूल से समझ लिया कि चीनी सेना बहुत घलघान है और वही यह नेपाल पर आक्रमण म कर ब अरु उतने चीनी सना से सधि करन की चर्चा की । उतने तिब्बत के बजोर को छोड़ दिया मुमहरलामा को नेपाल से बाहर घल जाने बो कहा । मुमहरलामा ने विष पानर आत्महत्या कर ली । परन्तु वारतयिक स्थिति यह थी कि चीनी सेना उस समयर पुढ से धरु गई थी और आतकित थी । अस्त उन्होंने तुरत सधि कर ली । उस सधि के अनुसार यह निश्चित हुआ कि प्रति पांचवें बष नेपाल एक प्रतिनिधिमंडल भेंट लकर चीनी सम्राट की सेवा म पेशिया जाया बरेगा । जहाँ तब दिगार्चों की लट के मारा का प्रान है चीन इतिहासकारों का कहना है कि कृ-बांगान न नेपालियों को उग माल को वापस करने पर विषय दिया । किंतु नेपाली इतिहासकारों का कहना है कि लूट के माल में से एक पच मी वापस नहीं किया गया । बहादुरशाह ने सधि करके मूल की । इग बाग्प नेपाली सेनापति जो जानते थे कि चीनी सना बसी दुबगा में है और उनका नेपाल पर आक्रमण करा का कभी साहस नहीं हो सकता अपन शासन से नाराग हो गए ।

तिब्बत को इस सधय म हागि ही हुई । उसे कोई शक्ति-पूति की रकम नहीं मिली । ऊपर ने चीन की सेना तिब्बत में कई बघों क लिए जम गई ।

जब यह पुढ चल रहा था तब तिब्बत और नेपाल दोनों ने ही अग्रजों से सहायता चाही । लान बानबालिस ने उन बोगों को ही सनिक सहायता देने से इनकार कर दिया, क्योंकि अग्र जों से दोनों देशों की मिश्रता थी ।

जब सुदूर तिब्बत में नेपाली सेनाए चीनी सेनाओं से जुझ रही थी उसी समय गोरखा सेनाए रामकृष्ण गणा तथा बाद म अमरसिंह पापा के नेतृत्व में गढ़वाल और कुमाय प्रान पर आक्रमण कर रही थी । गोरखा सेनाओं ने कुमायू प्रबग पर विजय प्राप्त कर ली । १७९२ म जब गढ़वाल पर भी गुरखा सेना की विजय समीप थी और गढ़वाल का पतन होने ही वाला था कि अमरसिंह को वापस मुला लिया गया । कारण यह था कि चीनी सेनाए नेपाल की घाटी ले हार पर पहुँच चकी थी । १७९१ जस छोटे दग की सनिक शक्ति और गोरखा सनिकों की बोरता बद्भुत थी नहीं तां नेपाल जसा छोटा दग उत्तर मे चीन पूर्व में सिक्किम और पश्चिम में गढ़वाल और कुमायू से एकसाय पुढ कसे कर सपता था ।

इसके पश्चात ८० म बामोवर पाने और उसके बाद अमरसिंह पापा क नेतृत्व म गुरखा सताओं ने गढ़वाल को विजय कर लिया । इनकी घाटी में गुब घना के समीप निर्णायक युद्ध म गोरखा सेनाए विजयी हुई । गढ़वाल की सेनाए नष्ट हो गई और गढ़वाल का राजा प्रदुम्न मारा गया ।

इस प्रकार १८ ३ तक नेपाल का राज्य सिक्किम के मध्य से बामोवर राज्य को सीमा तक फल गया । केवल पाल्पा का अध स्वतंत्र राज्य ही बचा हुआ था । पाल्पा का राजा महादेव दक्षिण म मयम के भयाव बजोर

का गहरा मित्र था इस कारण नेपाल के शासक उसको छोड़े हुए थे। वह एक प्रबल वेगवान समुद्र की नयकर जहाँ न एक छोटे द्वीप क समान किसी प्रकार अपने अस्तित्व को बचाए हुए था।

नेपाल का दुर्दमनीय तथा वीर सेनापति एक बार फिर अपनी विजयवाहिनी को लेकर काश्मीर राज्य की ओर बढ़ा। उसका साथ भागते पापा भी था। अमरसिंह पापा ने काश्मीर राज्य में घुस कर काँगड़ा के किले पर आक्रमण किया और भागतेपापा ने सुजानपुर पर थावा बोल दिया। नेपाली सेनाओं ने दोनों को घेर लिया और ऐसा दिखलाई देने लगा कि नेपाली सेनाएँ इन दोनों किलों पर विजय प्राप्तकर उस प्रदेश पर अपना अधिकार कर लेंगी। काँगड़ा का राजा सगसार किल के बाहर निकलकर युद्ध कर रहा था। सगसार ने प्रबल गतिमान लाहौर के सिक्ख महाराजा रणजितसिंह से सहायता की। यद्यपि अमरसिंह पापा ने अग्रजों से सहायता चाही परन्तु अग्रजों ने इस श्रायु में पदना स्वीकार नहीं किया। महाराजा रणजित सिंह ने दम्बा कि इन पहाड़ी राज्यों को अपनी अधीनता में लाने का अच्छा अवसर है अस्तु एक द्यूत बड़ी सेना को उसने अमरसिंह पापा के विरुद्ध भेजा। अमरसिंह पापा की छोटी सी सारा उमका सामना न कर सकी। उसकी सिरमूर राज्य की ओर भागना पड़ा। सिरमूर के राजा बरनप्रकाश की एक वध उस समय सिरमूर की गद्दी पर था। सिरमूर के राजा बरनप्रकाश की एक वध पहले अमरसिंह पापा रक्षा कर चुका था। यात यह थी कि एक वध पूर्व काँगड़ा के राजा सगसार तथा हिंदूर के राजा ने सिरमूर पर आक्रमण कर दिया था। दो राज्यों के सम्मिलित आक्रमण का सिरमूर का राजा सामना नहीं कर सकता था। मयनोत होकर उरने अमरसिंह पापा से सहायता चाही। अमरसिंह पापा ने भागत पापा को एक हजार सेना देकर उत्तकी सहायता की भेजा। सिरमूर का राजा आगे बढ़ा किन्तु दोनों राज्या की सम्मिलित सेना के सामने न टिक सका। यह भाग कर अमरसिंह पापा के गिरि म आ गया। तब अमरसिंह पापा न हिंदूर की सेनाओं पर आक्रमण किया आर उन्हें परास्त किया। उसके उपरांत यह काँगड़ा की ओर बढ़ा। अमरसिंह पापा समझता था कि सिरमूर का राजा इस समय उत्तकी सहायता करेगा। अस्त अमरसिंह पापा ने सिरमूर के राजा को बुना भेजा परन्तु सिरमूर के राजा ने यह समय कर कि अमरसिंह पापा की सेनाएँ सिक्खा से पराजित होकर नष्ट हो गई हैं तथा अमरसिंह पापा की गति शोण हो गई है जाने से इनकार कर दिया। यद्यपि गोरक्षा तथा उस समय अत्यन्त अस्त व्यस्त थी और नेपाली सेना को धरान्त जोषिम का सामना करना पड़ रहा था किंतु अमरसिंह पापा की क्रोध था गया। उसने अपने पुत्र की अधीनता में एक टुकड़ी सिरमूर पर आक्रमण करने के लिए भेजी। राजा भाग गया आर अमरसिंह पापा ने सिरमूर राज्य की नेपाल में मिला लिया। अब यह हिंदूर की ओर बढ़ा किन्तु अग्रज नेपाल के इस दिस्तार से सहाय हो उठ। अतएव उन्होंने अमरसिंह पापा को चेतावनी दी कि यदि यह आगे बढ़गा तो अग्रजों की हस्तक्षेप करना होगा। अमरसिंह पापा की सेना की स्थिति देखी नहीं थी कि यह अग्रजों से युद्ध कर सकता अतएव यह घप हो गया और आगे नहीं बढ़ा। उन दिनों जब कि नेपाल की रणपरामर्शी सेनाएँ चीन तिब्बत का जय और अग्रजों की आतंकित कर रही थीं नेपाल के दरबार में यहयत्न

चल रह थे। यह तो पहले ही बतलाया जा चुका है कि राजागता तथा महा
 दुरगाह म राज्यशासन अधिभार के लिए झगड़ा हुआ और राजागता नपाल
 का शासन करती रहीं। उनकी मृत्यु के उपरांत महादुरगाह के हाथ में दण
 का शासन-अधिभार आ गया। उसी समय महाराजा को धर्मनिचारी और
 निरम्मा बनाने की जरूरत घेःटा की जिससे कि वह ऐसा निरम्मा हो पाये
 कि उसको बन्धो नो शासन करने योग्य न समझा जाये। तब एक उमा सखी
 महाराजा को सिखाई और शराब के बीच रक्ता और उतकी धर्मनिचारी और
 निरम्मा बनाने के सारे प्रयत्न किए। कुछ लोगों का तो यहां तक कहा था
 कि यदि उसकी हत्या कर दी जाती तो अच्छा था। परन्तु राजनीतिक दृष्टि
 से यह वांछनीय नहीं था। परिणाम यह हुआ कि सखी महाराजा रणवहादुर
 गाह अत्यन्त धर्मनिचारी जिद्दी और मनरी बन गयी। उसी निरुरा सुदरी
 गुल्मी राजा की लक्ष्मी से विवाह किया परन्तु उससे कोई मतान न होने के
 कारण उमकी उपेक्षा कर दिया। वह अत्यन्त सिखाई का रगता था और
 उसकी रनेल एक दासा बनी स उसका पहला पुत्र जन्म हुआ।

१७८५ में उसने अपने को महाराजा (सम्राज्यशासन) घोषित कर
 अपने दादा महादुरगाह को गिरफ्तार कर उसको मरवा दिया। सखी पहले
 उसी जन्म राजा के विरुद्ध अभियान किया जिस सभी पक्षों राजा अपना
 बड़ा नेता मानते थे। उसी जन्म राजा को रावटकर दण के दाह
 कर दिया। यह भाग पर अवध के यशोवती के कारण में चला गया। रणवहा
 दुरगाह एक अत्यन्त सुन्दर दिव्या वाद्ययंत्र युक्त पर आसक्त हो गया और
 उसकी बलपूर्वक मगमारर उसी अपने महल में रख दिया। हिन्दुओं में
 विषया ब्राह्मणी से हीन सद्गन्ध रक्षना पापत्रम माना जाता था। अस्त पण्डितों
 ने राजा तथा उसकी विषया ब्राह्मणी उपपत्ती को धाप दिया और जाको नोप
 घोषित किया। कुछ लोगो का कहना है कि रणवहादुर ने ब्राह्मणी को इस
 कारण अपनी पत्नी बनाया कि जिगने भाधी नपाल गाहों की जानि ऊची
 हो जाये। कुछ समय के उपरांत उमसे चेचन निरल गार्। रणवहादुरगाह
 ने ब्राह्मणों तथा पुरोहितों को यज्ञ पूजा-पाठ और अनुष्ठान करने के लिए
 बल्पनातीन धन दिया। यह धन ता गार् परत उमा सौंदर्य चला गया।
 जब उसने हीने में अपना कुरूप चेहरा देखा तो उसी आत्महत्या पर
 सोचने लगे।

उसी हीने में ही उसने हीन लिया। मन्त्रियों तथा
 नोपधियों का मरवा दिया
 जिन्होंने मन्त्रियों को नष्ट करने को मना किया। रणवहादुरगाह के विषया
 ब्राह्मणी से विवाह कर लेने पर ब्राह्मणों ने उसकी धाप दिया। ब्राह्मणी
 बीमार हो गई। ब्राह्मणों ने एक लाय रूपए धाप उठाया के माने किंत रूपए द
 दन पर भी यह नहीं बधी ब मर गई। उस पर रणवहादुरगाह बड़ा क्रोध
 हुआ। उसने ब्राह्मणों की सम्पत्ति छीन ली। उनके मंदिरों तथा मत्तियों को
 तोड़ डाला। इस कारण जाता विरोधी हो उठी रणवहादुर की सिंहासन छोड़ना
 पडा। उसकी ब्राह्मण रानी ने भी मरते समय उसको राजसिंहासन छोड़ने को
 कहा था। अपनी प्रिय रानी की मृत्यु के उपरांत वह सनकी हो गया।
 उसने और भी अधिक धार्मिक और राजनीतिक आसक्ति कर किये।

इस घोर अधार्मिक कृत्य से समस्त नेपाल घाटी की जनता उससे

विषय उठ खड़ी हुई। ब्राह्मणों ने उसको धाप दिया। रणबहादुरशाह ने मयमौत होकर राजसिंहासन छोड़ दिया। उसकी विधवा ब्राह्मणों सुदरी का पुत्र गिरवान बुद्धविजय सिंहासन पर बठा। रणबहादुरशाह सयासी बनकर भगवत भक्ति करने तथा अपने पापों से मुक्ति प्राप्त करने काशी चला गया। यह घटना सन् १८०० की है।

रणबहादुर के पुत्र नेपाल का शासन महाराजाधिराज 'भारदादर' राज्य का भार वहन करनेवाली परानगवात्री सभा को सहायता से करता था। भारदादर ने एक चौतरिया (मुख्य मंत्री) ४ काजी (मंत्री) चार सरदार सनिक सेवा करनेवाले २ खारदार १ कपडवार (महल के प्रबंधक) और १ खजांची होता था। रणबहादुरशाह ने एक चौतरिया और ४ काजी (मंत्रियों) को नियुक्त करना शुभ किया था।

रणबहादुरशाह की वास्तविक पत्नी त्रिपुरा सुन्दरी उसके साथ बागी चली गईं और उसकी दासी उपपत्नी केती बालक महाराजा की अभिभावक बनी और शासन करने लगी। यद्यपि उसकी पति पत्नी त्रिपुरा सुन्दरी उसके प्रति सखी और विश्वासपात्र रही परंतु फिर भी रणबहादुरशाह का व्यवहार उसके प्रति कठोर रहा। वास्तव में रणबहादुरशाह ने जब सिंहासन त्याग किया तभी वह अपनी भूल पर पश्चात्ताप करने लगा था और उसकी सयास लेकर बागी जाने की इच्छा लस हो गई थी। वह पुन सिंहासन प्राप्त करने के लिए काशी न जाकर पाटन की ओर चला गया और वहाँ उसके समयक चारों ओर इकट्ठे हो गए। परंतु दामोदर गंडे ने गीघ्रतापूर्वक काय बाहो की। पाटन में रणबहादुरशाह के समयकों को उतने वहाँ से भगा दिया और रणबहादुरशाह को देश छोड़कर काशी जाने पर विवग किया। रण बहादुरशाह दामोदर पाडे तथा उसके घराने से बर रक्षता था।

वाराणसी में भी रणबहादुरशाह का जीवन पूषवत ही चलता रहा। वह विलासिता में अनाप-गनाप व्यय करता और अपना व्यय चंगाने के लिए उसने श्रण सेना आरम्भ किया। अंतर अग्रजों ने इस स्थिति से लाम उठाना चाहा। य निर्वासित नेपाल के शासक को श्रण बन लगे। उस श्रण को अरायणी के समय में अग्रजों ने रणबहादुरशाह से एक सधि की। उस सधि में रणबहादुर ने यह स्वीकार किया कि नविय्य ने नेपाल बरघार को एक अग्रज प्रतिनिधि (रजौडट) को स्वीकार करना चाहिए। १८०१ में यह सधि हुई और फरवरी १८०२ में कप्टे कावत प्रथम अग्रज रजौडट की हैसियत से नेपाल में गये। यद्यपि रणबहादुरशाह को उपपत्नी दासी केती सम्भवत उसको स्वीकार करने के पक्ष में थी परंतु नेपाल के सामन्त तथा बरघारी इससे विरुद्ध थे। वे इस कारण न्त सधि दे और अधिक विरुद्ध थे क्योंकि रणबहादुरशाह ने यह सधि की थी। कप्टन गान्न को विवग होकर १८०३ में वहाँ से लौट आना पड़ा। पुन एक नई सधि धाराओं ने रणबहादुर शाह से की और दामोदर पाडे के आग्रह पर केती गतिरा ने उस पर हस्ताक्षर भी कर दिए परंतु गीघ्र ही उसको समाप्त कर दिया गया।

निर्वासित रणबहादुरशाह अपनी रगरेतियों में (बनारस में) मस्त था। उसने वाराणसी की एक सुदरी को रक्ष लिया और महाराजानी त्रिपुरा सुन्दरी के समस्त अभूषण उसको भेंट कर दिये। निर्वासित महाराजा ने अपनी पतिभक्त पत्नी से अबरबस्ती समस्त आभूषण छीन कर अपनी नई प्रियता को द

दिये । मय त्रिपुरा सुन्दरी की आभिषि स्थिति इयनीय हो उठी । उसके पास जो कुछ था वह उसका पति ने छीन लिया और दासी बेती शासिका ने उसकी पंगन बंद कर दी । निराशा और विवशता का पातापरला म यह अपनी दासियों और मौजूरों के साथ अपनी प्रिय गार्भूमि मपाल की ओर घल पड़ी ।

मपाल म बेती ने बामोदर पांडे का एक भतीजे को प्रधानमन्त्री नियुक्त कर दिया । उस तदण प्रधानमन्त्री ने अपने छात्रा के पक्ष का समर्थन न कर उसकी स्थिति को बमजोर करने की भरतार छेप्टा की । पांडे परिवार के प्रत्येक सदस्य को जा सेना के ऊचे पद पर से उताने हटा दिया । जिनके पास दुर्ग थे उन्हें दुर्ग रक्षा का पद से हटा दिया ।

पांडे परिवार उसके सम्बन्धी तथा अन्य सामन्त उसके विद्व हो गए । वे उससे पूणा करते थे । उसके दाम्प्यों ने मौका पाकर उसकी हत्या करदी । बामोदर पांडे सम्मपत बिलकुड निर्दोष था परन्तु सोर्गों को उस पर रावेह हुआ कि यह कुडुर्य उसी का है । बरवार म एक भयकर घुट घन गया मिताषी नेत्री बेती शासिका थी । बेती बामोदर पांडे से पूणा करती थी । मृत प्रधानमन्त्री के स्थान पर बेती ने एक मोघी स्थिति के ध्यक्ति को नियुक्त कर दिया जिसके कारण सभी मुख्य दरबारी माराज हो गए । जय मपाल के दरवार में ऊपर लिखे घद्मय चल रहे थे तो नपाल की महारानी त्रिपुरा सुन्दरी मपाल की ओर बड़ रही थी । पति द्वारा पीडित तथा आभिषि हृष्टि से विषम महारानी त्रिपुरा सुन्दरी नपाल की तराई के समीप पहुची । तराई का मयंकर ग्यर का मौसम आने ही वाला था । नपाल को महारानी त्रिपुरा सुन्दरी का ऊचा धरित्र पतिमन्त्रि तथा उच्च धन और उसकी विषमता म मपालियों के हृदय में उसने प्रति सहानुभूति उत्पन्न करवी थी । वह कठिनाइयों का सामना करती हुई पहाड़ों में भटब रही थी । उपर काठमांडू में एक 'दासी' बेती शासन पर रही थी जिससे अधिकांग लोग पूणा करते थे । सेनापति (बाजी) बामोदर पांडे ने त्रिपुरा सुन्दरी को नपाल आने का निमयण भेजा । मपाल क दो प्रमुख घराबों पांडे और पापा म कई पीढ़ियों से पारिवारिक गत्रता थी । उस समय वह दानुता और गहरी हो गई । बामोदर पांडे ने महा रानी त्रिपुरा सुन्दरी को निमन्त्रित कर उस समय को घरम सीमा पर पहुँचा दिया ।

जय शासिका ने बला कि महारानी त्रिपुरा सुन्दरी बड़ी बली आ रही है तो उसने सेना भेजी और यह आया थी कि महारानी के समी प्रुदय सहायकों तथा सेवकों को कद कर लाया जावे । मपाली सेना म महारानी त्रिपुरा सुन्दरी के समी पूरा सहायकों तथा सेवकों को पकड़ लिया । लोगों का यह विचार था कि अगहाय महारानी उन साधन वनों तथा पहाड़ों म भटककर समाप्त हो जावेगी । परन्तु महारानी एक गुरता राजा की पुत्री थी । उसमें पीर गोरसा धन का रक्त था वह हतान नहीं हुई उसने हड़ त्रिभय किया कि वह पीछ नहीं छोटेगी । अस्तु अपनी घोड़ी सी स्त्री सेविकाओं को लबर वह भितापानी आई जहाँ एक भरने के पास पहाड़ी पर दुग था । काठमांडू से पुन एक सन्धि टकड़ी महारानी को रोबने के लिए भेजी गई । उस सन्धि टकड़ी के सेनापति को यह आता दी गई थी कि वह महारानी को दुग में प्रवेश न करने दें । उस सेनापति की सहानुभूति महारानी के साथ थी परन्तु वह राज माता को अपहेलना भी नहीं करना चाहता था । अस्तु उसने आजा का अल

रण पालन किया। उसने उस युग में अपनी समस्त सेना को ल जाकर युग के फाटक बंद कर लिए। महारानी त्रिपुरा सुन्दरी को रोकने का उसने प्रयत्न ही नहीं किया। अब राजधानी में गहरी चिंता छा गई और एक दूसरी सेना भेजी गई। उस सेना को यह निश्चित आदेश दिया गया था कि महारानी को आगे बढ़ने से रोकना जाये। उस सेना के सेनापति को विपत्ति की भारी महारानी त्रिपुरा सुन्दरी अपनी सेविकाओं के साथ सड़क पर मिली। सेनापति एक घोर और प्रतिष्ठित सैनिक था। बड़े सपोच और हिचकिचाहट के साथ उसने महारानी को राज-आज्ञा बताई। महारानी त्रिपुरा सुन्दरी तनिक भी भयभीत नहीं हुई। उसने म्यान से तलवार निकाली और बोली 'क्या तुम गोरखा राजा की धमपत्नी को नेपाल की महारानी को, अपने वश में लौटाने से रोकने का साहस करोगे? यह यह कर महारानी ने सेनापति के हाथ पर तलवार से धार किया। सेनापति लज्जित होकर हट गया। उसे बड़ी लम्बा अनुभव हुई कि उसे उस गार्हत पाप के लिए भेजा गया। महारानी आगे बढ़ती गई और उसी दिन प्रातःकाल उसने नेपाल की घाटी में प्रवेश किया। जब वह काठमांडू से पांच मील दूर रह गई तो यह रुक गई। जैसे ही यह समाचार राजधानी में पहुंचा दामोदर पांडे उसकी सेवा में उपस्थित हो गया। साथ ही सब वर्गों के लोग भी अपनी महारानी के प्रति स्वामिनिकि प्रदर्शित करने के लिए उसके पास धा पहुंचे। यहाँ तक कि थोड़े से नीच दर्जों के नासिका के कृपापात्र कमचारियों की छोड़कर सभी राज्य अधिकारी महारानी की सेवा में उपस्थित हो गए। नासिका के कृपापात्र राजकमल में निधयत की और नाग गए। नासिका अब अकली पड़ गई। वह राजा तथा अपने पुत्र के साथ एक मंदिर के गणस्थल में चली गई और साथ में लाने से सारा रूपया तथा सब हीरे जवाहारात भी ल गई।

अब महारानी त्रिपुरा सुन्दरी ने नासनकाय अपने हाथ में ले लिया। उसने उदारता और अपने पद के अनुरूप दासता धरना आरम्भ किया। उसने दासों नासिका की पंगत धरदी और नेपाल की परम्परा के विरुद्ध उन लोगों को जिन्होंने उसका विरोध किया था न मरवा कर उन्हें क्षमा करवा दिया। उसने दामोदर पांडे को अपना मुख्यमंत्री बनाया।

त्रिपुरा सुन्दरी तथा दामोदर पांडे दोनों को यह मय था कि रण बहादुर वहाँ वापस न लौट आए। उसको संदेह था कि वहाँ अंग्रज रणबहादुर को नेपाल लाने का षडयंत्र न करें। इसी कारण उसने अपने मुख्यमंत्री को इच्छा के विरुद्ध भी अंग्रजों से होनवाली संधि की स्वीकार नहीं किया। दामोदर पांडे ने वाराणसी में एक प्रभावशाली ध्यक्ति को लिखा कि वह रणबहादुर गार्ह की वाराणसी से न आने दे। इसका कारण यह था कि लाइ बलजली ने नेपाल दरबार को सूचना कर दिया था कि जय अंग्रजों की नपाज दरबार से कोई भी संधि नहीं है तब नूतन महाराजा रणबहादुर वहाँ भी जाने के लिए स्तर्त्र हैं। दामोदर पांडे ने जो पत्र वाराणसी के प्रभावशाली ध्यक्ति को रण बहादुर गार्ह को वाराणसी से न आने देने के लिए लिखा था दुर्भाग्यवश रण बहादुर गार्ह के हाथ पर लया और वह दूरत ही नेपाल की ओर चल पड़ा। लोगों को यह बताना भी नहीं हुई कि नूतन महाराजा वाराणसी छोड़ चुका है और शय तक कि लोगों को यह मान्य पड़ा कि यह वाराणसी से चल पड़ा है वह नेपाल पहुंच गया।

वामोदर पांडे सेना लेकर गीध हो आगे बढ़ा । यह रणबहादुरगाह को काठमांडू की ओर बढ़ने नहीं दना चाहता था । जबकि वामोदर पांडे की सेना उसके पास पहुँची तो रणबहादुरगाह ने अपने बलिष्ठ सचिव भीमसिंह थापा से परामर्श किया । भीमसिंह थापा पापा के काजी अमरसिंह थापा का पुत्र, घतुर और साहसी व्यक्ति था । यह जानता था कि नेपाली सैनिकों में राज मक्ति बूट बूटकर भरो है और वे राजा जसा भी क्यों न हो उसको धडा से देखते हैं । अस्तु भीमसिंह थापा ने सलाह दी कि महाराजा सेना को अपनी ओर आने के लिए आह्वान करें । रणबहादुरगाह ने निमग्न होकर वामोदर पांडे की सेना तथा उच्च सैनिक अधिकारियों को सम्बोधन करते हुए ऊँचे स्वर में कहा 'आप बतलाइए कि आप भूग दयवा वामोदर पांडे को अपना स्वामी स्वीकार करना चाहते हैं ? उसी क्षण समस्त नेपाली सेना भागकर रणबहादुरगाह के पास आ गई और नेपाल के लिए सतत युद्ध करनेवाला धीर वीर मत्त तथा राजनीतिज्ञ वामोदर पांडे तथा उसका पुत्र पचडकर बांध लिए गए ।

रणबहादुर स्वामी अथवा प्रशासक के नाम से शासन करने लगा परन्तु वास्तव में वह महाराजा बन गया । महाराजी त्रिपुरा सुदरी ने भी अपने स्वामी का स्वागत किया किन्तु रणबहादुरगाह ने वाराणसी की उत सुकुमार सुदरी की भी बुला भेजा और उतारी बड़े धम्म के साथ अपने रनिवास में रखा ।

फूर रणबहादुर वामोदर पांडे से बदला लेना चाहता था । उधर भीमसेन थापा का पिता अमरसिंह थापा जो वामोदर पांडे का गुरु था और जिसे पांडे ने कद में डाल रखा था, जेठ में पड़ा था । रणबहादुरगाह ने उसे मुक्त कर दिया और उसे अपने घर पालना भेज दिया ।

अमरसिंह थापा ने घीमीसा राजाभा के प्रमुख जुमला राजा पर आक्रमण किया किन्तु जुमला राजा ने गोरखा सेना का पसा कड़ा मुकाबला किया कि गोरखा सेना उसको पराजित न कर सकी । दो वर्षों तक लगातार युद्ध होता रहा किन्तु जुमला राजा अपनी २२ हजार सेना के साथ घहादुरी से युद्ध करता रहा । रणबहादुरगाह दो वर्ष तक युद्ध करते भी सफल नहीं हुआ । अस्त यह हट गया । जुमला राजा ने यह समझा कि अब युद्ध समाप्त हो गया उसने अपनी सेना के अधिकांश सैनिकों को घर जाने की छट्टी दे दी । उसी समय रणबहादुरगाह ने पुन उस पर आक्रमण कर दिया । जुमला राजा पराजित हुआ । रणबहादुरगाह ने ऐसी निदयता और क्रूरता का परिचय दिया कि निदयता भी कांप उठी ।

भीमसेन थापा रणबहादुरगाह को वामोदर पांडे के विरुद्ध भड़काता रहता था । रणबहादुरगाह ने वामोदर पांडे को घह पत्र जो उसने वाराणसी लिखा था बतलाया और उसको मृत्युबन्ध वार यधिकों के सुपुर्ष पर दिया । जब वामोदर पांडे और उसके पुत्र को घघ करने के लिए ले जाया जा रहा था उस समय पांडे के पुत्र ने विरोध करके निकल भागने का प्रस्ताव रखा । पुत्र का प्रस्ताव था कि यह सगिकों से अस्त्र वस्त्र छीनकर युद्ध करें । उनको धारता और साहस को देखते हुए यह सम्भव था कि जो सैनिक उनको घघस्थल पर ले जा रहे थे उनमें से कुछ उनके प्रशंसक और समर्थक थे । किन्तु पिता ने प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया । उसका कारण यह था कि उसे मय था कि यदि उन्होंने विरोध किया तो उनका समस्त परिवार समाप्त कर दिया जावेगा ।

मस्तु, उसने अपने पुत्र को रोक दिया और इस प्रकार उस घोर और साहसी सेनापति का अंत हुआ ।

रणबहादुर इसी से सतपट नहीं हुआ । उसका एक प्रतिद्वन्दी पाल्पा का राजा पृथ्वीपाल था । उसने अपना एक दूत पाल्पा के राजा के पास उसकी बहिन से शादी करन का प्रस्ताव लेकर भेजा । उसने कहलाया कि यदि वह अपनी बहिन का उससे विवाह करव तो वह उसको और अधिक जागीर देगा । पाल्पा के राजा ने अपनी बहिन को अपने छोटे भाई के साथ भेजा । वह स्वयं विदवातपात के भय से नहीं आया । रणबहादुरशाह ने बहिन और भाई का बहुत अधिक स्यागत-सत्कार किया किन्तु राजा के पुरोहित को भेजकर यह कहलाया कि मैं आपके हाथ से ही क्यादान स्वीकार करूंगा । उसने शपथ खाई कि आपके साथ कोई धोखा नहीं होगा । मैं आपको शायों ही आपकी बहिन को स्वीकार करना चाहता हूँ । पृथ्वीपाल काठमांडू आया । उसके साथ जो चारसी सैनिक थे उनके हथियार छीन लिए गए और पृथ्वीपाल को कद खाने में डाल दिया गया । रणबहादुर ने पाल्पा के राज्य को तथा बुटवाल के जिले को जिसे पाल्पा के राजा ने अंग्रजों को सौंप दिया था अपने राज्य में मिला लिया । बुटवाल में मालगुजारी यमूल करने तथा उस पर अधिकार करने के लिए उसने सेना भेज दी । इसी को लेकर दस वर्ष उपरान्त नेपाल और अंग्रजों का युद्ध हुआ । पाल्पा के राजा की बहिन से होनेवाली शादी के बारे में आगे कुछ सुनाई नहीं पड़ा । सम्भवतः पाल्पा के राजा की यह दण्ड इस कारण मिला क्योंकि उसने रणबहादुरशाह को प्रसन्न करने के लिए अपने पुराने मित्र दामोदर पांडे की विधवा और उसके एकमात्र जीवित पुत्र को उस निवधो के सुपुत्र कर दिया था ।

अब रणबहादुरशाह ने अपने अवध भाई गेरबहादुरशाह की बुलाया और उस पर दण्डपत्र में सम्मिलित होने तथा पाल्पा को नेपाल के सिंहासन पर बठाने के प्रयत्न करने का आरोप लगाया । उसको काठमांडू छोड़ने तथा सेना से मर्तो होने के लिए कहा गया । परंतु गेरबहादुर ने आजा की स्वीकार नहीं किया—बहा कि हम दोनों एक ही पिता की सन्तान हैं तुम काठमांडू छोड़कर घसी में भी तुम्हारे पीछे चलना । रणबहादुर क्रोध से पागल हो गया । उसने गेरबहादुर के बंध करने की आज्ञा दे दी । गेरबहादुर ने भी अपनी तलवार निकाल ली और राजा पर नरपूर चार किया । रणबहादुरशाह का गरोर बट गया । प्रसिद्ध जगबहादुर का पिता बलनारासिंह बुकर वहीं खड़ा था उसने अपनी तलवार से गेरबहादुर को मार डाला । जब रणबहादुरशाह मरा तो उसने अपनी ब्राह्मण पत्नी से उत्पन्न अवध पुत्र गिरवान बुद्धविक्रमशाह को भीमसेन पापा के सुपुत्र कर दिया ।

भीमसेन पापा ने बासी रानी की रणबहादुरशाह की चिता पर सती होने के लिए विवश कर उससे दृष्टकारा पाया । अब भीमसेन ने अपने विरोधियों को एक-एक करके समाप्त करमा आरम्भ किया । पचास सेना अधि कारियों तथा अनेक सामन्तों का बंध कर दिया गया । उसने अपने पिता अमर सिंह पापा को पाल्पा पर अधिकारपर उस पर नेपाल के महाराजा के नाम पर शासन करन भेजा । पाल्पा के समीप ही महाराजा पृथ्वीनारायणशाह की पुत्री सालियाना के राजा की ब्याही थी । भीमसेन ने उसको जागीर को बंध कर लिया तथा उसको और उसके पुत्र को बन्दी बनाकर काठमांडू ल आया ।

पृथ्वीपाल का भी उसने वध कर दिया। इस प्रकार उसने अपने सभी विरोधियों को सनातन रूप से अपनी प्रयत्न समयक त्रिपुरा सुन्दरी की दासिना बनाया।

जैसे ही रणयहादुरगाह की मृत्यु हुई वह महाराजा को व्यक्तियुक्त सेना के सामने गया और उनका समर्थन प्राप्त किया। महलों की सेना का समर्थन प्राप्त करके उसने बड़े हाथों घेर लिया जहाँ दरवारी इकट्ठे थे और उन सभी का उसने वध कर दिया जो उसका विरोधी थे। उनको मारने पर बहाना उसने यह प्रकट किया कि वे राजा को मरवाने में गोरवहादुर का सहायक थे।

वह अब नेपाल का प्रधानमंत्री बना और राज्य की समस्त सत्ता और अधिकार उसके हाथ में आ गए। उस दिन सघनतः राज्यसत्ता प्रधानमंत्री के हाथ में आ गई। नेपाल का महाराजा नाममात्र का राजा रह गया। वास्तव में वह अपने सपने में एक सम्मानित कवी की भाँति रहता था। नेपाल के राजा उस दिन से प्रधानमंत्री के बदलाने का कदी बना गए। उस दिन से १९५० तक जबकि महाराजा त्रिभुवन ने प्रधानमंत्री के शासन के विरुद्ध विद्रोह किया नेपाल का महाराजा प्रधानमंत्री के कदीमात्र थे। यही नेपाल का वास्तविक शासक था।

अब राजसिंहासन पर महाराजा गिरवान युद्धविभ्रमगाह बठा परन्तु उसकी सौतेली मा महारानी त्रिपुरा सुन्दरी अभिभावक शासिका थी और भीमसेन थापा प्रधानमंत्री था।

यह घटना १८०४ की थी। उस समय नेपाल अपने विकास की चरम सीमा पर पहुँच चुका था। भीमसेन थापा का पिता राजा अमरसिंह थापा काठमांडू से ६०० मील दूर फागड़ा में युद्ध कर रहा था। नेपाल उस समय पूर्व पश्चिम और उत्तर प्रत्येक दिशा में विस्तार कर रहा था। केवल दक्षिण में अंग्रेजों की शक्ति बढ़ रही थी। उस समय सिक्किम गढ़वाल कुमायूँ, सिटमूर और इन के प्रदेश नेपाल का अधीन आ चुके थे। उधर भारत में अंग्रेज मराठों तथा देशी शासियों से युद्ध कर अपनी शक्ति को बढ़ाने का प्रयत्न कर रहे थे। नेपाल में वेग की देखाते हुए बहुत बढ़ी सीमा थी। प्रत्येक प्रधानमंत्री के लिये उस सेना को काम देने के लिये उसका यहाँ न यहाँ उपयोग करना अनिवार्य था। यदि वह उसको छुट्टी दे देता तो बेकारी फल सकता थी। यही कारण है कि गोरखा युद्ध के उपरान्त अंग्रेजों ने गोरखा घोड़ों को अपनी सेना में भर्ती करना आरम्भ किया था।

यही कारण था कि भीमसेन थापा अंग्रेजों से भी एक बार मोर्चा लेना चाहता था। एक बार उसने मरे दरवार में तरण महाराजास कहा—एक बार चीनियों ने हम से युद्ध किया किन्तु उन्हें विजय होकर सधि करने पड़ी तो फिर अंग्रेज हमारे पहाड़ों में किस प्रकार घुसकर नेपाल पर आक्रमण कर सकते हैं? मरतपुर का छोटा-सा किला जिसका निर्माण मनुष्यों ने किया था उसे तो अंग्रेज विजय कर ही न सके तो हमारे पहाड़ों जिनका निर्माण भगवान ने किया है उसको पार कर के हम पर किस प्रकार आक्रमण कर सकते हैं?

१८०९ में अवध के नयाय पजीर ने गोरखपुर का प्रदेश ईस्ट इंडिया कंपनी को दे दिया था। इस कारण नेपाल और ब्रिटिश राज्य की सीमाएँ एक दूसरे से मिल गई थीं। नेपाल ने जान-बूझकर अंग्रेजों के प्रदेश में घुसना आरम्भ कर दिया। धीरे धीरे नेपाल ने तराई के बहुत-से गाँवों पर अपना अधिकार कर लिया। नेपाल धीरे-धीरे एक के बाद दूसरे गाँव पर अधिकार

भ्रमता था। वे गांव या तो अंग्रेजी राज्य के होते अथवा उस प्रदेश के होते
 जिनके बारे में झगड़ा होता था। सात वर्षों तक यह क्रम चलता रहा। भीमसेन
 को विश्वास हो गया कि अंग्रेज उस ओर अधिक ध्यान नहीं दे रहे हैं। अन्त में
 गवर्नर जनरल चौका। उसे स्पष्ट हो गया कि यदि नेपाल को रोका नहीं गया
 तो यह खतरनाक हो जावेगा। उसने काठमांडू को यह सूचना भेजी कि सीमा
 सबंधी झगड़ों को निपटाने के लिए एक आयोग स्थापित किया जावे और उसमें
 नेपाल का एक प्रतिनिधि रहे। यह आयोग यह तय करे कि नेपाल ने अंग्रेजी
 राज्य की कितनी भूमि पर अनधिकार बर्जता कर लिया है और भविष्य में
 दोनों देशों की सीमा को निर्धारित किया जावे। सीमा आयोग (कमीशन) ने
 सीमा का निरीक्षण किया और अंग्रेजों के दावे को उसने सही मानकर
 स्वीकार कर लिया। परन्तु नेपाल के प्रतिनिधि ने लौटकर भीमसेन को ऐसी
 गलत रिपोर्ट दी कि उसने कमीशन की सिफारिशों को तो अयहेल्ना की
 भविष्य में भी पहले की नीति अर्थात् अंग्रेजी सीमा के गांवों पर अधिकार
 करना जारी रखेगा।

भीमसेन थापा के पिता काजी अमरसिंह थापा जो अंग्रेजों की शक्ति
 से परिचित था और अधिक अनुभवों और यथायथवी था वह यह नहीं चाहता
 था कि नेपाल अंग्रेजों से युद्ध छड़े। उसने प्रधानमंत्री को चेतावनी दी कि
 अंग्रेजों से मित्रता देना हित में नहीं है। परन्तु भीमसेन ने एक न सुनी। यह
 युद्ध की तयारी करने लगा और अंग्रेजी राज्य को भूमि पर बर्जता करता गया।
 लाह मोपरा जो भी विरोध-यत्र भेजता उसका भीमसेन गोलमाल उत्तर देता।
 अन्त में अंग्रेजों ने गोरखपुर के तराई प्रदेश में जिन गांवों पर नेपाल ने अधि-
 कार कर लिया उनको २५ दिन में खाली कर देने की मांग की। उस पर भी
 जब नेपाल ने कोई ध्यान नहीं दिया तो लाह मोपरा ने जिलाधीश को आज्ञा
 दी कि वह नेपालियों को हटाने के लिये सेना भेजे। गोरखा सेना ने कोई
 विरोध नहीं किया और पीछे हट गई।

काठमांडू में बरबार के बाईस सलाहकारों की सभा हुई। प्रातः काल
 ९ बजे से रात्रि के ८ बजे तक बहस होती रही कि युद्ध किया जाय या नहीं।
 बरबारियों ने अन्त में यद्द करने का निश्चय किया। अमरसिंह थापा ने सुझाव
 पश्चिम से लिये कर भेजा हमने अभी तक हिरनों का शिकार किया है और
 यदि हम अब युद्ध करना चाहते हैं तो हमें शेरों से लड़ने के लिये तयार रहना
 चाहिए। भीमसेन जो युद्ध के पक्ष में है और अंग्रेजों को पराजित करना
 चाहता है बरबार में रहा है। उसको युद्ध की यिभीयिका का अनुभव नहीं है।
 उसने सलाह दी कि अंग्रेजों से संधि की जाये और जिन गांवों पर हमने अधि-
 कार कर लिया है उनको वापस कर दिया जावे। भीमसेन इसके लिये तयार
 नहीं था क्योंकि उन गांवों की आय उसको मिलती थी।

अप्रैल १८१४ में उस प्रदेश पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया था।
 मई में स्थिति बिगड़ गई। गोरखा ने सीमा पर बुटवाङ जिसे की तीन चौकियों
 पर आक्रमण कर दिया। अठारह पुलिस के सिपाहियों तथा यहाँ के पानेदार
 को उन्होंने मार डाला। गोरखा सेना के उन गांवों से हट जाने पर अंग्रेजों ने
 वहाँ यह चौकियाँ स्थापित की थीं। बाल यह थी कि तराई में जब भयकर खबर
 रोग फैलता था तो नेपाली वहाँ से हट जाते थे। अस्तु जब अंग्रेजों ने वहाँ
 चौकियाँ स्थापित कर दीं तो नेपालियों ने आक्रमण कर दिया। पानेदार तथा

सिपाहियों के मारे जाने पर अंग्रेजों ने नेपाल को युद्ध की चेतावनी दे दी। उस समय नेपाल के दरबार में युद्ध-समयकों का बहस चल रहा। भीमसेन ने कहा कि यदि अंग्रेज नेपाल से युद्ध करना चाहते हैं तो उन्हें युद्ध मिलेगा। अंग्रेज उसने चीन पर यह प्रभाव डाला कि अंग्रेज इंग्लैंड नेपाल पर आक्रमण करना चाहते हैं कि जिससे वे आगे चलकर तिब्बत और चीन पर आक्रमण कर सकें। उसने ऐसा प्रबन्ध किया कि भागी नेपाल चीन की ढाल बनकर अंग्रेजों के आक्रमण से चीन की रक्षा करना चाहता है। उसने इस आधार पर चीन से सैनिक सहायता मांगी। बल्कि मैं जब अंग्रेजों को इसकी सूचना मिली तो वे चिंतित हुए। उन्होंने चीन का स्थिति स अंग्रेज कराया और गीघ्र ही नेपाल पर आक्रमण करने का निश्चय किया। लाह मायरा न दोनापुर पारा गली, मरठ सहायपुर और लुधियाना में अपनी सनाओं को इकट्ठा किया। दोनापुर से आठ हजार सैनिकों के साथ मारले पाले में विद्यमान ब्रह्म सपा ह्यौरा के दरों से पाठमांहु पर आक्रमण करने के लिये दूध दिया। धाराणसी से जनरल वुड की अधीनता में धार हजार सैनिकों ने सोमा के प्रदेश बुटवाल और शिवराज पर आक्रमण किया। सहायपुर से जनरल गिलस्पी की अधीनता में ४००० सैनिक दून की घाटी पर आक्रमण करने के लिए आगे बढ़े। पश्चिम की ओर जनरल आकटरलोनी की अधीनता में ६ हजार सैनिक सतलज के किनारे अमरसिंह पापा से युद्ध करने के लिये घस पड़े।

उपर भीमसेन पापा ने मा युद्ध की तयारियां की। उसने अपने पिता सपा अपने सेनापतियों की अधीनता में सना को घांकर अंग्रेजों का सेना के मुखावले का तयारी की। १ नवम्बर १८१४ को सतलज में गवर्नर जनरल ने नेपाल से युद्ध की घोषणा कर दी।

अंग्रेजों की चारों सेनाएं आगे बढ़ीं किन्तु सभी क्षेत्रों में नेपालियों ने कड़ा मुखावला किया। यद्यपि अंग्रेजों की सेना तीस हजार थी और नेपाल के पास कुल बारह हजार सैनिक थे किन्तु धीरे नेपालियों ने अपने से दार्द्री गुनी सेना की आगे नहीं बढ़ने दिया। जनरल वुड की भीमसेन के भतीजे उमरसिंह ने पीछे हटने पर विवग कर दिया। अपनी से दगनी सेना की उमरसिंह ने पीछे टक्क किया। उपर जनरल मारले ने अपने क्षेत्र में प्रत्येक चौकी पर पांच सौ सैनिकों को रतकर तीन चौकियां स्थापित करली थीं। कनल रणधीरसिंह ने उन पर आक्रमण कर उन्हें समाप्त कर दिया। मारले भी पीछे हटा। नेपालियों ने उसकी रसी बुग्या कर दी कि उसकी सेना छिन्न निन्न हो गई। जनरल मारले इतना नयमीत हो गया कि किसी को बिना अत साए और बिना पाप दिये वह रात्रि को घोंड़े पर बठकर नाग पड़ा हुआ। गवर्नर जनरल को जब यह मालूम हुआ तो उसे हटा दिया और अगत घोषित कर दिया।

उपर नेपाली सेना में भी थोड़ा अमतीष उत्पन्न हो गया था। अमरसिंह के पास कुल सौ सैनिक थे। जब वह मारले की सेना के सामने पहुँचा तो उसको तुरत आक्रमण करने की आज्ञा दी गई परन्तु अपने से दस गुनी सेना पर आक्रमण करने से यह हिचकिचाया। भीमसेन ने उसे बाठमांहु वापस बुला लिया और सैनिक प्रदालत ने आज्ञा दी कि उसे दरबार में घाघरा पहनकर आने की विवग किया जावे।

उपर अंग्रेजी सनाए पश्चिम में अमरसिंह पापा से अरमोका और

गढ़वाल में लड़ने के लिये आगे बढ़ीं। अमरसिंह पापा का धीर मतोजा बाल बहादुर कार्लुगा के किन्ने में थोड़ी सी सेना को लेकर अंग्रेजों की विंगाल रणवाहिनी को रोके हुए था। जनरल गिलस्पी न चार हजार सैनिकों को लेकर उस पर आक्रमण किया किन्तु धीर नपालियों ने उन्हें पढ़ने नहीं दिया। कई बार अग्रजी सेनाओं ने विल पर आक्रमण किया किन्तु उन्हें नपालियों ने पीछे हकेल दिया। उम युद्ध में जनरल गिलस्पी मारा गया। जब बालबहादुर ने दसा कि भोजन सामग्री किन्ने में समाप्त हा गई तो रात्रि के अथकार में यह अपने घोड़े से सनिकों को लेकर निकल गया। यह घटना गुरखा सनिकों के साहस को प्रकट करती है। जब किले पर तोपों से गोल बरस रहे थे तो एक गोरखा सैनिक भागना हुआ पहाड़ी पर आया। उतने हाथ हिलाया। गोली चलना बंद हो गई। अग्रजी ने उसका अपने निधिर म स्वागत किया। उसका निचला जबड़ा गोली लग पाम से क्षत विक्षत हो गया था। वह अग्रजे सजन के पास चिकित्सा के लिये आया था। अत्र यह अस्पताल से मुक्त कर दिया गया तो उसने पुन अपनी सेना में जाकर अग्रजी से लड़ने की आज्ञा मांगी। अग्रजे नपालिया की बहादुरी से प्रेरित तो थे ही उनकी इस मक्ति से वे आश्चर्य चकित हो गये। गिलस्पी के स्थान पर जनरल माटिमडल को नियुक्त किया गया।

माटिमडल ने अमरसिंह पापा पर आक्रमण किया। मयकर युद्ध हुआ। अग्रजों की एक तिहाई सेना नष्ट हो गई। परन्तु अमरसिंह के पास बहुत कम सेना थी। अंग्रेजों के पास कई गुनी सेना के अतिरिक्त तोपें बहुत थीं। अमरसिंह बगै बहादुरी से प्रत्येक स्थान पर लड़ता रहा। अन्त म मौलान के दुर्ग पर मयकर युद्ध हुआ। अमरसिंह का बहादुर सानायक भागते पापा की हजार गुरखा सनिकों की लकर अग्रजों की विंगाल रणवाहिनी से भिड गया। तापों की भयकर मार से सनिक भी परयाह न पर धीर भागते पापा अग्रजुन रणनीत्य दिखा रहा था। उस दिन ज सा मयानर युद्ध हुआ उससे अग्रजे बग थे। अपने जीवन की परवाह न कर धीर गोरखे अस्थित धियम परिस्थिति में अपनी सग्या से कई गुनी सेना से युद्ध कर रहे थे। उस दिन युद्ध के अन्त में पांच सौ गोरखा धीर सनिक धराशायी हो गये और धीरकर भागते पापा भी सबव के लिये रणभूमि म सो गया।

अमरसिंह की स्थिति दयनीय हो गई। उसने सरबारा की जब ज्ञात हुआ कि अल्मोडा टाय से निकल गया ता वे अमरसिंह पापा के पास आए और उससे सधि करने के लिये कहा। अमरसिंह ने सधि करना अस्वीकार कर दिया। वे लोग उसे छोड कर चले गये। अब अमरसिंह के पास कम दो सौ सनिक रह गये थे वह थोड़े-से सैनिक उस विंगाल दुग को रक्षा नहीं कर सकते थे। भागते पापा मर चुका था। अमरसिंह के सहानुभूत सरदार उसे छोडकर चल गये थे। विदवा होकर अमरसिंह ने आकटरलोनी से सधि की दानों के बारे में पुछाया। आकटरलोनी अमरसिंह की धीरता और देग मक्ति से इतना प्रभावित हो गया था कि वतने पह स्वीकार कर लिया कि अमरसिंह अपने सनिकों के य सगसत्र दो तोपों के साथ तथा अपनी समस्त धनिसागत सम्पत्ति को ले जा सकते है। अथाक में अमरसिंह के पुत्र रणनुरसिंह की भी यही गनेदना स्वीकार किया गया। विता और पुन सङ्घ पर गहाँ घाहे दिन तकने हैं। उन्हें सतारनपुर, हरिद्वार, ममीयाबाव होकर काशी नदी को पारकर नेपाल म जाना था। इतने अति

रिक्त आक्टरलोनी में जो दलें रखी थीं वे बहुत बंदोर थीं। नेपाल को तराई, कुमायूँ और गढ़वाल तथा गिमला के जिले अंग्रेजों को देने होंगे। तिब्बत का यह भाग जो नेपाल ने ल लिया है वहाँ के राजा को सौताना होगा और काठमांडू के दरबार में अंग्रेज रंगोइट को रखना होगा।

मीमतेन थापा ने इस संधि की स्वीकार करने में बेरी की। उसे मालूम था कि अंग्रेजों के मात्र अंग्रेजों से युद्ध की तयारी कर रहे हैं। लाहौर में महाराजा रणजीतसिंह तयारी कर रहे थे। अमीरता के पठान आगरा के समीप से आक्रमण की तयारियाँ कर रहे थे। मराठे भी सक्रिय हो गये थे। नेपाल की सफलता ने ईस्ट इंडिया कंपनी के सभी दंगलों को सक्रिय और आत्मावान बना दिया था। उसने उस संधि की शर्तों की अस्वीकार कर दिया। उसका ऐसा करना ठीक भी था क्योंकि पूव और मध्य में नेपाल की सेनाओं ने अंग्रेजों की सेनाओं को गुरी तरह परास्त किया था। बवल गुरुर पश्चिम में मालीय व युद्ध में अमरसिंह थापा को असफलता मिली थी।

जब अमरसिंह राजधानी काठमांडू में आया तो उसने भी संधि की स्वीकार न किए जाने के पक्ष का नेतृत्व किया। मीमतेन संधि की स्वीकार करने से हिष्कारिता था। लाइ इस्टिंगस तराई को लाना चाहता था। उसके पहले में २० हजार से ३० हजार पीठ प्रति वय क्षमिपुति के रूप में देने की तयार था। मीमतेन तथा उसके सामन्तों को उस प्रदेन से नारी आमदनी होती थी उस कारण वे उस प्रदेन को देने की तयार न थे। अस्तु संधि-वर्षा टूट गई। अंग्रेजों ने शीनापुर में सना संगठिता की और आक्टरलोनी को उसका सेनापति नियुक्त किया गया। नेपालियों ने भी घुरिया घाटी के दर्रे की रक्षा तथा काठमांडू के भाग में पड़ने वाले दुग मकवानपुर की रक्षा का प्रवध किया।

अंग्रेज इतिहासकारों तथा सना विरोधियों ने कहा है कि लाइ बलाइव स लेकर उस दिन तक भारत में अंग्रेजों को ऐसा भयानक और कठिन युद्ध कभी नहीं लड़ना पड़ा। आक्टरलोनी चौदह हजार सेना को सपर सारम स जनवरी १८१६ में आगे बढ़ा। यह जानता था कि घुरिया घाटी के दर्रे की नेपाली अन्त तक रक्षा करेगे। अतएव उसने कोई और मार्ग ढूँढ़ने का प्रयत्न किया। कंटेन विक्सगिल ने एव ऐसा मार्ग ढूँढ निकाला जो लोगों को विरहित नहीं था और बहुत कम ध्यवहार में आता था। रात्रि को आक्टरलोनी ने अपनी सनासहित उस मार्ग से उस पहाड़ को पार कर लिया। गुरुरक्षा सेनापति को प्रात काल ज्ञात हुआ कि अंग्रेजी सना पहाड़ पार कर गईं।

अब रणजुरसिंह हरिहरपुर और मकवानपुर की ओर बढ़ा जिससे कि वहाँ अंग्रेजों को रोका जा सके। मकवानपुर पर घमासान घोर भयंकर युद्ध हुआ। ऐसा भयंकर युद्ध अंग्रेजों ने नहीं देखा था। नेपाली सेनापति किरानमहाबुरराणा ने बढ़ी धोरता से युद्ध किया और मारा गया। अब अंग्रेजी तोपें भयंकर गोलों की मार करने लगीं। परन्तु गोरुरक्षा सनिक माग्ने का नाम ही नहीं लेते थे। उस युद्ध में इतने सनिक मारे गए कि पृथ्वी शकों से ढक गई। मकवानपुर का पतन हो गया। स्थिति की भयानकता को देखकर रणजुरसिंह तथा उसके सार्थियों ने रात्रि के अंधकार में हरिहरपुर के दुग को छोड़ दिया। यद्यपि रण जुरसिंह ने बहुत से युद्धों में अदभुत धोरता प्रदर्शित की थी और वेग की सेवा को भी परन्तु हरिहरपुर को छोड़ने का कलक जीवन भर वह धी न सका।

मीमतेन थापा नहीं चाहता था कि अंग्रेजी सेना नेपाल की घाटी,

में प्रवेश करने । अस्तु उसने पुनः सधि-वर्षा बलाई और ४ मास १८१६ को सिंगौली की सधि पर हस्ताक्षर हो गए । गते पूर्ववत् ही रहें । नेपाल उन शर्तों में क्षुब्ध था । वह अग्रज रजीदत को किसी भी प्रकार सहन नहीं करना चाहता था ।

उस युद्ध के फलस्वरूप आकटरलानी को घोर गुरजों के अबभुत शौर्य का परिचय मिला । उसने गयनर जनरल तथा प्रधान सेनापति को लिखा कि हमें गोरखों को अपनी सेना में भरनी करना चाहिए । ऐम घोर सनिक हमें कहीं नहीं मिल सकते । तभी से गोरखा सनिक अग्रजी सेना में भरती होने लगे ।

गोरखा सैनिकों के सम्बन्ध में जनरल ने १८१६ में लिखा था 'घीरों में सबधेष्ठ घीर' पुनः उसने लिखा मैंने अपने जीवन में ऐसी दृढ़ता और घीरता कहीं नहीं देखी । ब मागने का नाम नहीं लते । उन्हें भरने का माना नय ही नहीं है । जब उनक साथी एक एक कर हमारी तोपों और गोलिधों से घरागायी हो रहे थे वे निर्भय ही युद्ध कर रहे थे ।

आकटरलानी ने लाइ एंस्टिस से कहा था कि गोरखा सनिकों की तुलना कोई सनिक नहीं कर सकता । गुरजा सनिक आध घटे में भोजन कर सझाई के लिए तयार हा जाता है और कई दिनों के लिए भोजन सामग्री अपनी पीठ पर लेकर घस सवता है । नेपाल युद्ध से अग्रजों में नेपालियों की घीरता को पहचाना और तभी से गोरखा सनिक अग्रजी सेना में भरती किए जाने लगे ।

भीमसेन थापा

सलिला त्रिपुरा सुन्दरी के शासनकाल में तथा भीमसेन थापा के मश्रित्वकाल में नेपाल में शक्ति प्राप्त की और विवाह किया । उस तीस वय के लम्बे काल के भीचे लिखे कारण महत्वपूर्ण थे । (१) भीमसेन थापा की बढ़ती हुई शक्ति और अक्षम रत्ता (२) थापा और पांडे परिवारों में पतृक शत्रुता । इस शत्रुता का नतृत्व रामोवर पांडे के एक पुत्र रत्नजग पांडे ने किया जिसको १८०७ में भीमसेन ने छोड़ दिया था । (३) महाराजा राजेन्द्रविक्रमशाह की दोनों महारानीया की आपसी ईर्ष्या और कलह । (४) भीमसेन थापा के छोटे भाई रत्नवीरसिंह थापा का विश्वासघात । तथा (५) काठमांडू के प्रभावशाली तथा शक्तिशाली ब्राह्मणों का असंतोष । इन सारे सघष में केवल भीमसेन थापा का भतीजा भातवरसिंह थापा ही एक ऐसा व्यक्ति था जो निष्ठा और साहस के साथ अपने चाचा के साथ रहकर उसकी सहायता करता रहा । वह उस गद कीघडभरे तालाब में घुड़ और स्वच्छ जल की भांति पवित्र था । रत्नजग पांडे और रत्नवीरसिंह थापा ने इस समस्त पड़्यत्र में घृणित काम किए जिन्हें बसकर लज्जा की नै लज्जा आती ।

नेपाल की राजधानी काठमांडू में सत्ता और शक्ति प्राप्त करने का एक ही माग था और वह था महत्वाकांक्षी ध्यक्ति की श्पिर में स्नान करके आगे बढ़ना । भीमसेन थापा ने भी श्पिर में स्नान किया था और जब वह शक्तिवान बन गया तो वह सत्त सावधानी रखता था । काठमांडू में शक्ति को बनाए रखने के लिए सतत सावधानी की आवश्यकता थी । प्रत्येक सत्तावान ध्यक्ति को यह मूष्य चकाना ही पड़ता था परन्तु यह मूल्य भी कम था ।

१८१६ में महाराजा गिरवान जुद्धविक्रम धंधक से मर गए । वह स्वयं अल्पवयस्क थे । उनकी मृत्यु के उपरांत उनका बालक पुत्र राजेन्द्रविक्रम शाह सिंहासन पर बठा । बालक महाराजा की सौतेली दादी महारानी त्रिपुरा सुन्दरी शासिका (गिजेंट) थी और भीमसेन थापा प्रधानमन्त्री था । भीमसेन थापा की शक्ति अग्रिमिथ थी । वही देश का वास्तविक शासक था । कोई उसकी शक्ति को घुनौती देनेवाला नहीं था । सब उससे भयभीत रहते थे । वह नेपाल का सयशक्तिशाली शासक था । भीमसेन थापा ने अपन शासनकाल में नेपाल का निर्माण किया । उसने विभिन्न तरीकों से नेपाल की आय में वृद्धि की । उसमें एष शक्तिशाली सेना का निर्माण किया । उसने केवल सेना की सत्या ही बस हजार से पदह हजार नहीं बढ़ाई सेना के लिए उत्तम अस्त्र-शस्त्र तथा अन्य सनिक सामग्री की ध्यवस्था भी की और सनिक चकशाप स्थापित किया जिससे आवश्यकता पडने पर युद्ध के समय ४५ हजार सेना को भी युद्ध सामग्री उपलब्ध की जा सके । नगर के पूव में उसने तुन्दीखेल नामक विस्तृत परेड भूमि बनाई वहां सनिकों के लिए घरकें बनाई गईं, शस्त्रागारों का निर्माण कराया गया और सनिक चकशाप खड़े किए गए । वही सौपों के निर्माण

की व्यवस्था भी की गई ।

सच तो यह है कि भीमसेन थापा ने प्रशासन को व्यवस्थित किया और नेपाल की शक्ति को बढ़ाया । उसकी शक्ति और प्रभाव अपरिमित था । शास्त्र में प्रधानमंत्रियों की सर्वोच्च सत्ता का आरम्भ भीमसेन थापा न किया । बाद को राणाओं ने उस सूत्र को और भी अधिक मजबूत कर दिया ।

सिगौली को संधि के कारण १८१६ से नेपाल में अंग्रेजी रजिडेंट आ गया था किन्तु भीमसेन थापा अंग्रेजों रजिडेंट का विश्वास नहीं करता था । अंग्रेज क्रमशः समस्त भारत पर छा गए थे । एक एक करके सारे हिन्दुस्तान के स्वतंत्र दली राज्यों पर अंग्रेजों का अधिकार होता जा रहा था । फिर नेपाल में सत्ता प्राप्त करने के लिए यों ही पड़पत्र होते रहते थे । फिर भीमसेन थापा का साम्राज्यवादी अंग्रेजों से सशक रहना स्वाभाविक ही था । परन्तु अपन अन्तिम वर्षों में वह ब्रिटिश रजिडेंट हाजसन पर विश्वास करने लगा था और ब्रिटिश रजिडेंट उसका मित्र बन गया था ।

१८३२ में महारानी त्रिपुरा सुंदरी की मृत्यु हो गई । वह योग्य, दूरदर्शी और स्थिर तथा दृढ़ बुद्धिवाली शासिका थी । भीमसेन थापा पर उसका गहरा भरोसा और विश्वास था । वह उसका प्रिय था । महारानी त्रिपुरा सुंदरी जब तक जीवित थी उस दिन तक भीमसेन थापा की शक्ति अपरिमित थी । उसकी स्थिति सुरक्षित थी । कोई उसको घनोत्ती नहीं द सकता था । किन्तु त्रिपुरा सुंदरी के मरने के उपरान्त उसका शत्रुओं की शक्ति और सत्ता बढ़ने लगी ।

नेपाल एक सैनिक राष्ट्र था । वहाँ के प्रभावशाली व्यक्ति सैनिक-शक्ति में विश्वास करते थे । नेपालियों की यह मय था कि अंग्रेज भारत के अन्य राज्यों की भांति नेपाल को भी हड़प लेंगे । अस्तु अंग्रेजों से नेपाली सशक और भयभीत थे । साथ ही वे ब्रिटिश भारत के समीपवर्ती सीमा प्रदेश में घुसपैठ कर अपने राज्य का विस्तार करने को भी इच्छुक थे । नेपाली सैनिक बोर थे । उनकी युद्ध करने की परम्परा चल गई थी । पृथ्वीनारायणशाह के समय से उनकी युद्ध करने की प्रवृत्ति बन गई थी । वे युद्ध के द्वारा राज्य-विस्तार और युद्ध की लूट से लाभान्वित होने के अभ्यस्त हो गये थे । अतएव कोई भी प्रधानमंत्री उनकी इस आकांक्षा को अवहेलना नहीं कर सकता था ।

यही कारण था कि भीमसेन थापा अंग्रेजों से अच्छे सम्बन्ध नहीं रखना चाहता था । साथ ही वह ब्रिटिश भारत के सीमाप्रदेश के गाँवों को घेरने रक्षना चाहता था । साथ ही वह ब्रिटिश भारत के सीमाप्रदेश के गाँवों को घेरने घेरे नेपाल में मिलान का प्रयत्न करता रहता था । वह कभी एक गाँव लेता तो कुछ दिनों बाद दूसरे गाँव को ले लेता । जब तक भीमसेन थापा न अधिक गड़बड़ नहीं की तब तक अंग्रेजों ने नेपाल की ओर ध्यान नहीं दिया । परन्तु जब नेपाल ने बहुत अधिक भूमि पर कब्जा करना शुरू कर दिया तो अंग्रेजों से घट्ट हुआ ।

यह दुर्भाग्य की बात थी कि आरम्भ से ही भीमसेन थापा न अंग्रेजों से छड़छाड़ घुस करदी । नेपाल के सैनिक-बल के समान वह भी अंग्रेजों से गहरी घृणा करता था । किंतु उसने अंग्रेजों की शक्ति और सामर्थ्य का गलत अनुमान लगाया । १८१४ में गोरखपुर जिने पर आक्रमण करके उसने भूल की । यदि वह अंग्रेजों से छटपुट संपर्क न करता रहता तो नेपाल में घट्ट संपर्क-बल भी सतुष्ट रहता और अंग्रेजों से बड़ा युद्ध भी न लगता पड़ता ।

साथ ही अंग्रेजों से संधि करते रहने का परिणाम यह तो होता ही कि अंग्रेजों को नेपाल पर अपना प्रभुत्व जमाने का साहम ही नहीं होता। अंग्रेजों को बुरा खन के लिए बहुत बड़े युद्ध की आवश्यकता नहीं थी।

भीमसेन थापा के घोर गानु पांडे परिवार तथा प्रभावशाली ब्राह्मण वर्ग अंग्रेजों का घोर विरोध करते थे। यदि भीमसेन थापा अंग्रेजों की ओर अधिक झुकता तो उसका देश में गहरा विरोध होना। अस्तु अंग्रेजों का विरोध तो उसको करना ही था किन्तु यह बड़े युद्ध की घटा सखता था। यही कारण था कि बाद की भीमसेन अंग्रेजों से संधि तो करता रहा परन्तु उसने कोई बड़ी सजाई की नौबत सिंगौली की संधि के बाद नहीं आने दी।

भीमसेन थापा घतुर राजनीतिज्ञ भी था। सिंगौली की संधि के उपरान्त उसने बड़ी घतुराई से हेस्टिंग्स की इस बात के लिए तयार कर लिया कि तराई का वह प्रदेश जो पूरब में गङ्गा नदी और पश्चिम में धरहनी नदी के बीच में पड़ता था इस प्रदेश के बदले में ईस्ट इंडिया कम्पनी नेपाल को प्रतिवध बीस हजार पाँड बगी। भीमसेन ने हेस्टिंग्स पर यह प्रभाव डाला कि नगल के महाराजा बाला हैं उनकी अल्पवयसता के बाद में हुई संधि स्थायी नहीं होगी। नेपालियों को यह बात नहीं मूलगी कि उनकी तराई का प्रदेश उनमें छिन गया। अस्तु अंग्रेज यदि नेपाल से अच्छे सम्बन्ध बनाये रखना चाहते हैं और यह चाहते हैं कि सिंगौली की संधि स्थायी हो तो उन्हें तराई का प्रदेश वापस कर बना चाहिए। हेस्टिंग्स ने नेपाल को तराई का प्रदेश वापस कर दिया। उस प्रदेश के लिए नेपाल को ईस्ट इंडिया कम्पनी से जितनी वार्षिक रकम मिलती थी उसमें चार गुनी से अधिक आय मिलने लगी यद्यपि यह समझौता एकपक्षीय था। प्रत्यक्ष उससे केवल नेपाल को ही लाभ था किन्तु इसका यह परिणाम अवश्य हुआ कि नेपाल का एक अंग्रेजों की तरफ कुछ नरम हुआ। इतना होने पर भी अंग्रेज रजौडट से नेपाल सरकार कोई सम्बन्ध नहीं रखती थी। उसका एक प्रकार से बहिष्कार होता था और उगम लिए नेपाल के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने के सन्धी भ्रोन बन्द थे। बात यह थी कि उस समय अंग्रेज मराठों विचारियों और धर्मा से युद्ध में पड़े हुए थे। भीमसेन बड़ी सावधानी से स्थिति का अध्ययन कर रहा था। साथ ही वह सैनिक तयारियाँ भी कर रहा था तथा सिंगौली की संधि की अकहेलना करता था।

भीमसेन ने उस समय अपने जीवन की सखम बड़ी मूल की। उसे सेना तथा प्रशासन के लिए अधिक धन की आवश्यकता थी। उसने धनी ब्राह्मणों को जो राज्य से धन मिलता था वह छीन लिया। उनके लिए जो कोष था जागिरे थी वह ले लिए गए। ब्राह्मण प्रभावशाली थे। भीमसेन थापा के वैशुक दानु पांडे परिवार के ये सगे और जाति विरादरी के थे। अभाव पांडे परिवार और ब्राह्मण-वर्ग उसका घोर गत्र हो गए। उसी समय कुछ समय के उपरान्त भीमसेन थापा की हिनकिनी बुद्धिमत्ता महाराणी त्रिपुरा सुन्दरी का स्वयंवास हो गया। अब भीमसेन थापा पर कोई अकुण नहीं रहा। वह निरकुण हो गया। उस समय महाराजा त्रिभुवन की उद्वेक रानी ने पाँड तथा ब्राह्मणों का पक्ष लिया और छोटा महाराणी भीमसेन थापा तथा थापा परिवार के साथ हो गई। एक वय उपरान्त महाराजा राजे शिवभंगनाट बालिग हो गए। शासनधिकार उनका हाथ में आ गया। युवा अवस्था में भोग बिलास में डूबा हुआ महाराजा भीमसेन थापा द्वारा उसका बचाया जाना सहन

नहीं कर सकता था। उसे अपने प्रधानमंत्री भीमसेन का उस पर अक्रुण और प्रभाव बहुत अलगने लगा। वह भीमसेन के प्रभाव और शक्ति को कम करना चाहता था। वह चाहता था कि भीमसेन को नीचा दिखाया जावे और उसकी शक्ति को समाप्त कर दिया जाये। अस्तु वह नी बड़ी महारानी के कारण पांडे तथा ब्राह्मण दल को भोर भुक् गया। पांडे दल का नेता रजजग पांडे था जो दामोदर पांडे का पुत्र था। रणजग पांडे के नेतृत्व में पांडे परिवार के वे सभी उत्तराधिकारी संगठित हो गए जिन पर प्रधानमंत्री भीमसेन थापा के १८०४ और १८०७ में अत्याचार हुए थे। महाराजा राजेद्रविक्रमशाह केवल भीमसेन थापा की शक्ति को कम करना चाहता था। रजजग पांडे अपने धीर पिता दामोदर पांडे का बदला चकाना चाहता था जिसको भीमसेन थापा ने निरयथापूवक मरवा दिया था। ब्राह्मण अपनी जागीरें, धन और धन्य पुन प्राप्त करना चाहते थे और भीमसेन थापा की अधनति दखना चाहते थे क्योंकि उसने ही उनके धन को जब्त कर लिया था। बड़ी महारानी छोटी महारानी तथा उनके समर्थक भीमसेन के प्रभाव तथा शक्ति को नष्ट करना चाहती थी। परंतु किसी का भी यह साहस नहीं होता था कि वह भीमसेन थापा का लुलकर विरोध करे। वे सब के सब गुप्त रूप से भीमसेन को पकड़ कर उसे अपमानित कर उस पर अत्याचार करके उसको मारने का यत्न कर रहे थे।

इसम तनिक भी सदेह नहीं कि उस समय महाराजा की स्थिति अत्यन्त दयनीय और असहनीय थी। वह एक प्रकार से सम्मानित कदीमात्र था। जो स्थिति बाद की राणाओं के काल में नेपाल नरेश की हुई यह उसका पूर्वमास था। ब्रिटिश रजौडट हाजतन ने अपनी सरकार को इस सम्बन्ध में लिखा था राजा अपने महल में बंद रहता है। उसके बाहर वह बिना मंत्री के साथ लिए नहीं जा सकता। वह भी थोड़ी दूर घोंडे पर सवार होकर अथवा गाड़ी में घूमने जा सकता है। उसक महल में ही प्रधान मंत्री तथा उसका माई भी रहते हैं। प्रधानमंत्री का माई महाराजा के सरसक के रूप में रहता है। गत वष महाराजा ने पहाडियों में गिषार खेलने की इच्छा प्रकट की बिन्तु उसको अनेक प्रकार की व्यय की क्विर्दतियां तथा कठिनाइयां बसा कर रोक दिया गया। इस वष वह नवकोट के महल में जाकर कुछ दिन रहना चाहता था जहां उसका पिता गीतवाल म जाकर रहता था। परंतु इस बार भी उसे रोक दिया गया। जहां शक्ति का प्रश्न है उसक पास क्विर्दुमात्र भी शक्ति नहीं है और न वह किसी को कुछ ब ही सकता है। भीमसेन के आदमो उसरो इस प्रकार घेरे रहते हैं कि वह अपने महल में भी एक कंदी की भांति रहता है। न वह कहीं जा सकता है और न अपने सरदारों या भद्र प्रजा से मिल ही सकता है।

ब्येष्ट महारानी की महाराजा की यह दासता अचरती थी और महाराजा की इस कायरता से घट होकर उसने अपने मित्रों और सहायकों से अपना हृद निष्पय प्रकट किया कि वह या तो महाराजा को विवग करेगी कि वह अपनी ध्वजितगत तथा राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए प्रयत्न करे और अपने अधिकार प्राप्त करे शायदा स्वयं से पुत्रों की जननी होने के कारण नेपाल का शासन महाराजा क नाम से स्वयं करने का दावा करेगी। इस प्रकार कय ब्येष्ट महारानी ने महाराजा को लगातार उक्ताया

तो महाराजा ने अधिकार और शक्ति प्राप्त करने के लिए प्रयत्न किया। किन्तु प्रधानमंत्री ने तदण महाराजा को उसका अधिकारों को कम करने तथा अपने अधिकारों को बढ़ाने के प्रयत्नों को विफल कर दिया। महारानी को भीमसेन थापा के विरुद्ध महाराजा को उभारने का अवसर मिल गया। अब उसका पति तदण महाराजा विरोधियों अर्थात् पांडे तथा ब्राह्मणों के पक्ष में हो गया। महारानी ने भीमसेन थापा के विरुद्ध प्रकट रूप से अपना असन्तोष और श्रेय व्यक्त किया और प्रधानमंत्री पर दोषारोपण किया। परन्तु तदण महाराजा राजेश्वरविभ्रमगाह उस समय भी अपने मंत्री का विरोध करने का साहस न कर सका। साधारण जनता को यह आशा नहीं थी कि महारानी प्रधानमंत्री का इस प्रकार तुला विरोध करने का साहस करेगी। तदण महाराजा मन में तो अपने प्रधानमंत्री से अत्यन्त क्षुब्ध था परन्तु प्रकट रूप में अपने उस प्रभावशाली बन्धुवर्ती का विरोध करने का साहस नहीं बटोर पाता था। ज्येष्ठ महारानी उसको उभार रही थी परन्तु उस समय उसने कुछ भी करने का साहस नहीं किया। वह दार्ष्टिक 'पञ्जनी समारोह' की प्रतीक्षा करता रहा। पञ्जनी समारोह प्रति वर्ष होता था। परम्परा के अनुसार उस दिन सभी सावजनिक राजकीय पद और उसके अधिकार महाराजाधिराज मपाल मरेण को सौंप दिए जाते थे और महाराजाधिराज या तो पुराने व्यक्तियों को पुनः उसी पद पर नियुक्त कर देता था या नए अधिकारियों को नियुक्त करता था। उस दिन उसने भीमसेन थापा को प्रधानमंत्री नियुक्त करना अस्योकार कर दिया। जीवन में प्रथम बार महाराजा ने अपने प्रभावशाली और असोम शक्तिवान प्रधानमंत्री के विरुद्ध अपने अधिकार का प्रदर्शन किया। यद्यपि कुछ ही दिनों के उपरांत अनिवाय आवश्यकता के कारण भीमसेन थापा को उसे पुनः बुलाना पड़ा।

अपने प्रधानमंत्री की अवहेलना करके तदण महाराजा ने १८३८ में महाराजा रणजीतसिंह से एक गुप्त सम्झौता कर लिया। उधर उसने एक दूत गुप्त रूप से तेहरान भेजा जहाँ से वह यह पता लगाए कि रूस का भारत पर सम्भवित आक्रमण कब होगा तथा वहाँ सम्बंध स्थापित करे। ब्रिटिश रजिस्ट्रार रजिस्ट्रार को महाराजा की इन सुरभिसयियों का पता था। उसके कारण यह था कि भीमसेन थापा का यह विन्यासनाम बन गया था। सम्भवतः उसके द्वारा ही उसे महाराजा की इन सुरभिसयियों का पता चलता था। उस समय जब कि ब्रिटिश सरकार तिब्बत से युद्ध में फँसी हुई थी और रूस के आक्रमण का भय सिंध पर सवार था नेपाल की ओर से यह बहुत अधिक शक था। १८४० से १८५७ तक अंग्रेज नेपाल को शक और भय की दृष्टि से देखते थे। १८५७ के स्वतंत्रता के प्रथम युद्ध में जब कि भारत में अंग्रेजों के पर उत्तङ्ग गए थे उस समय जब नेपाल ने अंग्रेजों का साथ दिया तब जाकर अंग्रेज नेपाल की ओर से आश्वस्त हुए।

उस समय अंग्रेज विरोधी पांडे दल का महाराजा पर अधिक प्रभाव हो गया था इस कारण पुनः नेपाल ने ब्रिटिश भारत की सीमा पर स्थित गाँवों पर धीरे धीरे अधिकार करना आरम्भ किया। अंग्रेज सरकार उस समय घबरा रही क्योंकि परिस्थिति उसके प्रतिकूल थी।

भीमसेन आने वाली विपत्ति और खतरे का आभास कर रहा था। उसने ब्रिटिश रजिस्ट्रार का समयन और सरक्षण चाहा। वह ब्रिटिश रजिस्ट्रार से

मिल गया। गुप्त बातें उस पर प्रकट करने लगा। ब्रिटिश रजौडट उसका मित्र बन गया। भीमसेन थापा यद्यपि बहुत बड़े खतरे का सामना कर रहा था परन्तु उसके इस काय का कोई भी दगमकत समय नहीं कर सकता। भीमसेन थापा ने ब्रिटिश रजौडट को यह भी चेतावनी दी कि अक्टूबर में यदि नेपाल के महाराजा को यह ज्ञात हुआ कि लाहौर पकिंग तथा आधा क समाचार अनुकूल हैं तो वह अप्रैल के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर देगा। युद्ध का समय ब-बल ब्रिटिश रजौडट को नेपाल से तुरन्त निकालबाहर करने के लिए महाराजा पर जोर डाल रहा था। यद्यपि ब्रिटिश रजौडट हाजसन को अपने जीवन का खतरा था किन्तु वह तनिक भी नयनीत न हुआ और काठमांडू में बटा रहा। मंत्रियों में उसके मित्र विद्वांसपाती मंत्रिया ने उसे बतलाया कि महाराजा ने अपना एक ब्रूत सिक्किम और आसाम के रास्ते बर्मा भेजा है और वह अत्यन्त गुप्त रस से भारत क उद्यपुर जोधपुर, ग्वालियर हैदराबाद मराठों सिक्कों पकिंग (चीनियों), बुल (अफगानिस्तान) तथा तेहरान (ईरान) से अप्रैल के विरुद्ध सधि-बर्चा कर रहा है। हाजसन जानता था कि उसकी रसा करने के लिए भारत से राना नहीं जा सकती थी परन्तु उसने यह तनिक भी प्रकट नहीं होने दिया कि वह नयनीत है। यह दरबार में उसी अहम और गान के साथ जाता और व्यवहार करता मानो उसके पीछे असीम ब्रिटिश शक्ति है। उसने सोचा कि पाँडे दल की शक्ति को कम करने का एक उपाय यह हो सकता है कि गोरखा सनिकों को अधिक से अधिक अप्रैल सेना में भरती किया जाये। उसने अपनी सरकार को लिखा कि हमें ज्ञात मगर, तथा गुरग जाति के गोरखा धोरों को अधिक से अधिक शरपा में अपनी सेना में भरती करना चाहिये उसका परिणाम यह होगा कि नेपाल की सनिक-शक्ति कम होगी और नेपाल के सनिक-वर्ग में जो राज्यविस्तार की लालसा जागृत हो उठी है और जो नेपाली युद्ध करने के लिए तत्पर हैं वे मउ पड जावेंगे। इसक अतिरिक्त उसने नेपाल से भारत और तिब्बत के बीच एक ध्यापारिक मार्ग बनाने की योजना तयार की। उसका परिणाम यह हुआ कि नेपाल का ध्यापार बढ़ा।

उसके उपरान्त उसने नेपाल और अरुण की सीमा निर्धारण की ओर ध्यान दिया। बात यह थी कि १८१६ की सधि के अनुसार तराई का प्रदेश अरुण को दे दिया गया किन्तु बाद की भीमसेन थापा की प्रायना पर पश्चिमी तराई का भाग पुन नेपाल को वापस मिल गया था। इस कारण सीमा निर्धारण आवश्यक हो गया था। नेपाल के प्रधानमन्त्री ने यह स्वीकार कर लिया कि अप्रैल अधिकारी की अध्यक्षता में एक सीमा-आयोग सीमा निर्धारण करे जिसमें नेपाल और अरुण के प्रतिनिधि हों। १८३३ में सीमा निर्धारण का कार्य समाप्त हुआ और सभी दलों ने उगको स्वीकार कर लिया। इस प्रकार नेपालियों द्वारा सीमा-अतिक्रमण का एक कारण दूर हो गया।

रजौडट पिछले कुछ समय से यह प्रयत्न कर रहा था कि भारत और नेपाल में ध्यापारिक-सधि हो। उसने जो प्रस्ताव रक्खा उसको भीमसेन थापा ने तो स्वीकार कर लिया परन्तु भारत सरकार ने उस अस्वीकार कर दिया। रजौडट हाजसन तथा भीमसेन थापा एक दूसरे के मजबूत आ गए थे। हाजसन ने भीमसेन थापा की मृत्यु के उपरान्त उसकी जसो सुने पादों में प्रशंसा की थी वह उसकी भीमसेन थापा के प्रति सच्ची अनिश्चयिता थी। यह स्पष्ट

था कि यह पिछले वर्षों में भीमसेन का प्रयासक और मित्र बन गया था। १८०४ और १८०७ के दुनी संधय और अंग्रेजों के विरुद्ध प्रारम्भिक पत्रों के बावजूद भी हाजतन ने भीमसेन बापा को अन्तिम वर्षों में अपना मित्र बना लिया था।

महाराजा राजेन्द्रबिक्रमशाह अपनी ज्येष्ठ महारानी तथा ब्राह्मणों से प्रोत्साहन पाकर भीमसेन बापा से असंतुष्ट होकर उससे मतभेद और विरोध प्रकट करने लगा। जैसे-जैसे महाराजा और भीमसेन के संबंध बिगड़ने लगे वैसे ही वैसे भीमसेन के शत्रु पाँडे लोग बड़ी महारानी के साथ अधिक घनिष्ठ होते गए। भीमसेन बापा का विश्वासघाती छोटे भाई रणवीरसिंह ने देखा कि शक्ति प्राप्त करने का यह अच्छा अवसर है वह महारानी तथा पाँडों से मिलकर पद संघर्ष में सम्मिलित हो गया और उसने प्रधान सेनापति का पद प्राप्त कर लिया। प्रधान सेनापति बनकर उसने निर्दल किन्तु अहंकारी महाराजा को अपने बड़े भाई को पद से हटाकर उसे प्रधानमंत्री बनाने की तयार कर लिया। जब भीमसेन बापा के विरुद्ध यह सय पत्रों चल रहे थे तब प्रधानमंत्री का भतीजा मायबरसिंह उसकी सहायता और समर्थन के लिए उसके साथ ही गया। मायबरसिंह अत्यन्त वीर, कुशल सेनापति सेना का अत्यन्त प्रिय, साहसी प्रभावशाली और सिद्धी था। पाँडे पक्ष ने अग्र अपने प्रयत्नों की दिशा बदल दी। उन्होंने अपने वीर और देशप्रिय पुत्रज दामोदर की जो देश में प्रतिष्ठा थी उसका उपयोग किया। यद्यपि दामोदर पाँडे की मरे हुए तीस वर्षों से अधिक हो गए थे परन्तु सबसाधारण उसकी भूला नहीं था। नेपाल का सबसाधारण उसकी सम्मानपुष्क पाद करता था। पाँडे परिवार ने महाराजा राजेन्द्रबिक्रमशाह से अपने परिवार की जागीर और प्रतिष्ठा को पुनः प्राप्त देने का आग्रह किया और यह माँग की कि जिहा प्रधानमंत्री ने उनके परिवार की नष्टप्राप्त कर दिया उसको पद से हटाया जाय। महाराजा के सामने अब केवल दो विकल्प थे। उसे भीमसेन बापा तथा उसके विरुद्ध पत्रों पर बनवालों में एक को चुनना था। फिर भी महाराजा राजेन्द्रबिक्रमशाह हिचक रहा था। यद्यपि यह भीमसेन बापा से घृणा करता था उसका मदनान करना चाहता था, किन्तु वह उसका मयभीत था।

पत्रोंपरकारियों ने देखा मायबरसिंह के कारण भीमसेन शक्तिशाली है। उन्होंने मायबरसिंह को भीजे गिराने का प्रयत्न किया। उस पर यह दोषा रोपण किया गया कि उसने अपनी विधवा माँ को भ्रष्ट कर दिया, उसके साथ बलात्कार किया। हिन्दू राजसूनी में यह अशुभ्य अरराध माना जाता था किन्तु इस दोषारोपण को सिद्ध नहीं किया जा सका क्योंकि वह असत्य था। फिर भी जिस व्यक्ति ने दोषारोपण किया था उसके विरुद्ध कोई भी कायदाही नहीं की गई।

१७९२ की संधि के अनुसार १८३७ में नेपाल से पंचवर्षीय प्रतिनिधि मंडल तथा भेंट पत्रों को जातो थी। भीमसेन को प्रतिनिधि-मंडल में जाने वाले लोगों का चुनाव करना था। परन्तु इस बार महाराजा राजेन्द्रबिक्रमशाह ने इस मान पर चल दिया कि यह अधिकार उसका है। अपने अधिकार का आग्रह करके उसने स्वयं प्रतिनिधि मंडल नियुक्त किया। भीमसेन बापा की प्रतिष्ठा को इतना अधिक गिराने का तो वह साहस न कर सका कि वह उसके शत्रु पाँडे को उसका नेता मनोनीत करता। अतः उसने अपने एक

सचेरे भाई को उसका नेता बनाया। परन्तु उससे प्रधानमंत्री का महत्व और प्रभाव गिरने लगा। प्रधानमंत्री का प्रभाव और शक्ति कम होने लगी और थापा परिवार की प्रतिष्ठा का भवन गिरने लगा क्योंकि उस प्रतिनिधि मंडल ने उनके विरोधियों को स्थान दिया गया था। ब्राह्मणों ने महाराजा पर दबाव डालकर अपन एक आदमी को मुख्य न्यायाधीश नियुक्त करवा लिया। पांडे परिवार की जागीर, सम्पत्ति तथा प्रतिष्ठा जिसे भीमसेन थापा ने छीन लिया था रणजग पांडे ने महाराजा से पुन प्राप्त करली। गोरखा प्रान्त के गवर्नर (शासक) पद से भायबरसिंह को हटा दिया गया और दामोदर पांडे के एक दूसरे पुत्र को गोरखा प्रान्त का गवर्नर (शासक) नियुक्त किया गया। किन्तु भीमसेन थापा को पद से हटाने का साहस नहीं हुआ। महाराजा और अय सभी लोग उससे भयभीत थे।

इस सचप का कुछ समय के उत्तरात नाटकीय ढंग से पटाक्षेप हुआ। भीमसेन थापा की घोर शत्रु बड़ी महारानी के सबसे छोटे पुत्र की मृत्यु हो गई। पांडे परिवार ने यह अफवाह फला दी कि भीमसेन थापा ने बड़ी महारानी को विष देकर मार डालने का षडयन्त्र किया था किन्तु षडयन्त्र सफल नहीं हुआ। वह विष लडके में पी लिया। राजधानी में इस काण्ड को लेकर भूचाल आ गया। षडयन्त्र अपनी घरम सीमा पर पहुंच चुका था। रणजग पांडे ने महाराजा राजेन्द्रविग्रम के कान मरने आरम्भ किए कि यहीं समय है कि जब भीमसेन थापा पर चार किया जा सकता है। सेना तथा धनता उसका साथ नहीं दगी। महाराजा ने उसकी बात मानकर भीमसेन थापा को प्रधानमंत्री पद से हटाकर अपमानित कर जेल में डाल दिया। भाय बरसिंह को भी कैद कर उसे धाचा के साथ जेल में रख दिया गया। रणजग पांडे प्रधानमंत्री बना। अय वह भीमसेन से बदला सेना चाहता था। भीमसेन के विरुद्ध गवाहों की कहारत थी। पांडे उससे विरुद्ध गवाहों प्राप्त करने का प्रयत्न करने लगा। उसने धर्यों पर अत्याचार करना आरम्भ किया। उनमें से एक बछ न अत्याचार से घदड़ाकर स्वीकार किया और झूठा बयान दे दिया कि भीमसेन थापा ने उसको विष देने की आज्ञा दी थी। भविष्य में वह अपना बयान न बदल सके इस उद्देश्य से उस बछ को मरवा डाला गया। एक दूसरे गाल पर तब तक जलाया गया जब तक कि हड्डी न दिखाई पड़ने लगी। एक नियार की छाती में गहरा घौरा लगाया गया। उसको काटा गया परन्तु उस बयान का समय न करनेवाला कोई भी दूसरा व्यक्ति नहीं मिला। महाराजा राजेन्द्रविग्रमगाह इस नयकर अत्याचार को बेल रहा था किन्तु बोला नहीं। सन्धन ने लिखा है कि उस घटना के चार वय उपरांत पांडे लोगों ने यह स्वीकार किया कि भीमसेन थापा पर वह मिष्यारोपण था, उसमें कोई सच्चाई नहीं थी।

जब भीमसेन थापा का परामर्श हुआ तो उससे विदवासघाती भाई रणवीरसिंह थापा को भी प्रधान सेनापति के पद से हटाकर बह कर दिया गया। अय सभी राज्य-कर्मचारी भयभीत हो उठे। रणजग पांडे ने ऐसे सभी अधिकारियों को पद से हटा दिया और अपमानित किया जिनकी भीमसेन थापा प्रति थोड़ी भी सहानुभूति थी। उसने उन सभी जमीनों को जो कि उसके पिता के बाब तौर धर्यों के भीतर बिना मासगुजारी के ही धई थी अर्थात् जिन

पर मालगुजारी माफ की, छीन लिया। उसने सामन्तों और सरदारों से जयर वस्ती पन वसूल करमा आरम्भ किया। एक एक सामन्त से भस्ती हजार पौंड तक जबरवस्ती श्रृण वसूल किया गया। चौतरफिया सामन्तों ने अप्पेओं और महाराजा से विरोध किया। जब महाराजा ने देखा कि दरबार के सभी लोग विरोध कर रहे हैं तो उसने रणजग पांडे को परबधुत कर दिया। अब रघुनाथ पांडे प्रधानमन्त्री बना। वह नितान्त प्रभावहीन और दुग्ध था। छोटी रानी लक्ष्मीदेवी ने हस्तक्षेप किया और भीमसेन चापा और माधवरासिंह को छोड़ दिया गया। उनके छूटने पर सेना में प्रसन्नता की लहर फैल गई। सेना ने अपनी प्रसन्नता और ह्य का लूब ही प्रदर्शन किया। महाराजा ने देखा कि सेना पर चापा का बहुत प्रभाव है। भस्तु सेना पर से चापा का प्रभाव हटाने के लिए तथा रणजग को सतुष्ट करने के लिए महाराजा ने रणजग पांडे को प्रधान सेनापति नियुक्त कर दिया। रणजग पांडे ने चापा का सेना पर से प्रभाव समाप्त हो इसका प्रयत्न करना आरम्भ कर दिया।

माधवरासिंह ने अनुकूल अवसर देखकर देश छोड़ दिया। वह लाहौर में महाराजा रणजीतरासिंह के दरबार में गया। सम्भवतः वह महाराजा रणजीतरासिंह की अपने पक्ष में सहायता प्राप्त करने के लिए गया हो परन्तु वह सफल नहीं हुआ। उपर भीमसेन चापा का छोटा भाई बिशवासपाती रणबीर सिंह प्रायः चतस्रद्वय एक साथ की तरह काशीबास करने धला गया और भीमसेन चापा राजनीति से अलग हो एक नागरिक का जीवन व्यतीत करने लगा।

सनकी महाराजा राजेश्वरविष्णुनाथ अब अपने प्रभावहीन प्रधानमन्त्रियों के द्वारा दासता करने का प्रयत्न करने लगा। एक के बाद दूसरा प्रधानमन्त्री बदलता। १८३९ में महस्वार्जाली रणजग पांडे ने पुनः प्रधानमन्त्रित्व को प्राप्त कर लिया। इस बार उसने अपने पुराने शत्रु से बदला लेने का पूरा निश्चय किया था। उसने दो पय पहले का विध वेने का अमियोग भीमसेन पर पन चलाया मुबहूमे का नाटक किया गया, और पुनः उस महान् राजनीतिज्ञ को जेल में डाल दिया गया। भीमसेन चापा को सहलाने की अत्यन्त मम, गंभी, अधरी वायुरहित कोठरी में रखला गया। उन कायरों को उस समय भी यह साहस नहीं हुआ कि उसको मृत्युदण्ड दे देंते। रणजग पांडे ने यह आज्ञा दे दी कि भीमसेन के साथ ऐसा क्रूर तथा भ्रूशस और अपमानजनक व्यवहार किया जावे कि वह निराग होकर आत्महत्या करले। उसी उद्दय से उसके पास एक कुरकी रख दी गई थी फिर भी भीमसेन दृढ़ता से सहता रहा किन्तु उसने आत्महत्या नहीं की। जब उसके शत्रुओं ने देखा कि वह सब कुछ सहन करके भी हड़ है तो उसके पास यह खबर भेजी कि उसकी पत्नी को मगा करके दिन में काठमांडू की सबकों पर चलने को विवश किया गया है। इस खबर ने उसके दिल को तोड़ दिया। उसन कुरकी से अपने गले को काट दिया। ९ दिन तक वह तिसकता रहा। २९ जुलाई १८३९ को उसकी मृत्यु हो गई। नेपाल के एक अत्यन्त बहादुर और राजनीतिज्ञ का इस प्रकार कुलव अन्त हुआ। ब्रिटिश राजीडट ने अपनी सरकार को जो सूचना भेजी उसका सारांश यह है—

“भीमसेन चापा के शव का अग्नि-संस्कार नहीं होने दिया गया। उसके दाव के टुकड़े टुकड़े कर उसका मगर में प्रदर्शन किया गया और उसके उपरांत उसके शव के टुकड़ों को नदी के किनारे फेंक दिया गया जहां कुत्तों और गिद्धों ने उसको खाया।

इस प्रकार नेपाल के उस योग्य वीर और महान् शासक का दुःखद अन्त हुआ जिसने तीस लम्बे वर्षों तक नेपाल पर किसी नरेश से अधिक प्रभाव पूर्ण शासन किया । उसको अपने सभी राजनीतिक कार्यों में जो एकसमान आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त हुई वह उसकी कायसमता तथा बुद्धिमत्ता के अनुरूप ही बनोली थी । मैं घतमान में महाराजा रणजीतसिंह के अतिरिक्त किसी अन्य भारतीय को नहीं जानता जिसकी तुलना नेपाल के जनरल भीम सेन थापा से की जा सके ।

नेपाल की शोचनीय स्थिति और कोट हत्याकांड

महाराजा राजेन्द्रविक्रमशाह भीमसेन थापा के इस प्रकार मारे जाने से इतना घबड़ा गया कि वह ब्रिटिश रेजीडेंट के पास उस मुगस कृत्य की सफाई देने के लिए गया। हाजसम ने रुते ढंग से उसका स्वागत किया और घुप रहा व अपिब बात नहीं की। उसने ब्रिटिश सरकार को अपनी सम्मति लिख भेजी। गवर्नर-जनरल आब्लड ने हाजसम को लिखा कि उसे अपनी और ब्रिटिश सरकार को इस मुगस हत्या के सम्बन्ध में नीचे लिखी सम्मति नेपाल भरेगा तथा सरकार को बतला देनी चाहिए।

नेपाल सरकार ने राज्य के योग्य और वीर प्रधानमंत्री के साथ जसा निर्वयतापुन, अपमानजनक और क्रूर व्यवहार किया है उससे गवर्नर जनरल के मन में अत्यंत घृणा तथा क्षोभ की भावना उत्पन्न हुई है। ब्रिटिश रेजीडेंट ने उस संदेश को अत्यधिकतम साक्षात्कार में महाराजा को बतलाया तो महाराजा राजेन्द्रविक्रमशाह थोड़ा भयभीत हुआ और उसका अपने पर से तथा जो लोग उसके पास थे उन पर से विश्वास हिल गया। वह नय प्रधान मंत्री रणजग पांडे तथा उसके सैनिक दल को शक की दृष्टि से देखने लगा।

उपर प्रधानमंत्री रणजग पांडे तथा उसकी सहायक बड़ी महारानी तथा अन्य युद्ध-समर्थक सहायकों ने अपने उद्देश्य के लिए तयारियां आरम्भ करदीं। राजकीय घोषणा द्वारा मृत प्रधानमंत्री भीमसेन थापा तथा उसके परिवारवालों की भूमि तथा जायदाद जब्त करली गई और पिछले पत्तीस वर्षों में भीमसेन थापा अथवा महारानी त्रिपुरा सुन्दरी ने यदि किसी की भूमि की वह जप्त करली गई। जब महाराजा राजेन्द्रविक्रमशाह रेजीडेंसी से लौटा तो उसको विवश किया गया कि वह उस राज आमा पर हस्ताक्षर करे कि जिसके द्वारा समस्त थापा जाति को सात पीढ़ी तक राज्य के किसी पद को प्राप्त करने अथवा राज्य की नीबरी कर सबने के अधिकार से वंचित कर दिया गया था।

रणजग पांडे समझ गया कि महाराजा उसको ओर से तथा उसके दल की ओर से उदासीन होने लगा है। अतएव उसने यह आवश्यक समझा कि वह नेपाल को अंग्रेजों से युद्ध करने की नीतिको स्वीकार करवा दे। उसने नेपाल की सैनिक शक्ति की एक झूठी गणना करवाई और यह बतलाया कि देश में चार लाख प्रशिक्षित सैनिक हैं। उसने अस्त्र-गस्त्र तथा गोला बारूक बनाने के लिए एक बहुत बड़ा कारखाना स्थापित किया। उसके उपरान्त उसने

ब्राह्मणों की भविष्यवाणी का वेग में खूब प्रचार किया कि 'गोप्र ही भारत में
 अग्रजों की सत्ता और शक्ति का अन्त हो जायेगा। फिर भी वे लोग महाराजा
 की युद्ध की नीति को स्वीकार करने के लिये तयार न कर सके। महारानी
 तथा रणजग पांडे यह जान गए थे ब्रिटिश रजिस्ट्रार उनके विरुद्ध हैं और महा-
 राजा उससे मयमीत और प्रभावित हैं अतएव उन्होंने उसके विरुद्ध पट्टयत्र कर
 उसे अपमानित कर निकालने की युक्ति सोची। हाजसन भीमसेन यापा का
 व्यक्तित्व मित्र ही नहीं था बरन् वह युद्ध विरोधी बल का समर्थक और सहा-
 यक भी था। अस्तु उसकी दृष्टि में हाजसन को हटाना आवश्यक था। बड़ी
 महारानी तथा रणजग पांडे ने बहुत प्रयत्न किया कि हाजसन महला तथा दर-
 वार के पट्टयत्रों में फस जाये किन्तु हाजसन सतक तथा विवेकील था। यह
 दरवार तथा महलों के पट्टयत्रों में नहीं फसा। रणजग पांडे के प्रभाव के कारण
 भीमसेन के परामर्श के उपरान्त पहले ही सीमा पर छटपुट घुसपठ होने लगी
 थी। अब रणजग पांडे के प्रधानमन्त्रित्व में सीमा पर अधिक सक्रियता हो गई।
 नपाल के सैनिकों ने रामनगर पर आक्रमण किया और उसको लूटा। ब्रिटिश
 रजिस्ट्रार हाजसन ने मांग की कि नेपाल सरकार हर्जाना दे, रामनगर से तुरन्त
 हट जावे और गधनर-जनरल से क्षमा याचना करे। बड़ी महारानी तथा रण-
 जग पांडे ने ऐसा पट्टयत्र किया कि बिना उनके उस तुरन्तसधि में लिख हुए
 ब्रिटिश रजिस्ट्रार की हत्या करदी जावे। २१ जून १८४० को बाठमांडू में
 सेना को परेड बुलाई गई और उन्हें यह आज्ञा सुनाई गई कि भारत सरकार
 की आज्ञा से उनका बेतन कम कर दिया जायेगा। सैनिक शुक्य होकर ब्रिटिश
 रजिस्ट्रार के निवासस्थान रजिडसी की ओर दूध कर गए। वहाँ पहुँचकर
 उनका क्रोध कुछ मद्ध पड़ा क्योंकि हाजसन नेपाल के सैनिक वर्ग में विशेष प्रिय था।
 क्रुद्ध सैनिकों ने वहाँ जाकर कानापूसी की और विचार विमर्श कर यह निश्चय
 किया कि इतने बड़े अधिकारी के विरुद्ध कुछ बाधवादी करने के पूर्व महाराजा
 से आज्ञा ले लनी चाहिए। अस्तु वे महल की ओर गए। महारानी ने इससे
 पहले ही राजधानी छोड़ दी थी और वह राजधानी के बाहर घली गई थी।
 महाराजा स्वयं घबरा गया किन्तु फिर भी उसने महल से बाहर निकलकर
 सैनिकों से कहा कि उनका बेतन इसलिये घटाया जा रहा है कि उन्हें भारत
 पर आक्रमण करने के लिये धन चाहिए। महाराजा ने यह कह कर मपकर
 भूस की। यात यह थी कि विछले बीस वर्षों से सैनिकों को युद्ध करने की नहीं
 मिला था। वे युद्ध और लड़ के लिए छटपटा रहे थे। उनके नेताओं ने कहा कि
 सप्तनरु और पटना पर आक्रमण किया जाये और नेपाल राज्य की सीमा का
 गंगा के तट तक विस्तार किया जाये। परन्तु पहले उन्हें रजिडसी पर आक्र-
 मण करना चाहिए और रजिडसी को समाप्त करना चाहिए। परन्तु जब उन्होंने
 यह मांग की कि उन्हें रजिडसी को मारने की आज्ञा प्रदान की जाये तो महाराजा
 का साहस नहीं हुआ। रजिडसी ने महाराजा से कहलाया कि उसे इस पट्टयत्र
 को पहले से ही खबर थी और उसको सूचना देने नपाल से एक सवेगावाहक के
 साथ भारत को निजवा थी। इस पट्टयत्र की सूचना अब नपाल से निकलकर
 भारत के भवानों में पहुँच चुकी है। दीप्र यह सूचना बलवत्ता पहुँच जायेगी।
 इसका परिणाम यह हुआ कि वह पट्टयत्र अतफल हो गया।
 लाइ आर्कलंड गधनर-जनरल अब बीलला उठा। उसने रजिडसी
 को आज्ञा दी कि वह नेपाल सरकार से बहे कि वह रामनगर से तुरन्त अपने

सैनिकों को हटाले अथवा भारत सरकार उनको हटा देगी। साथ ही वह नेपाल सरकार से यह मांग परे कि युद्ध-समयक बल को सत्ता और अधिकार से हटा दिया जाये। ब्रिटिश रजिस्ट्रार हाजसन ने नेपाल सरकार को अल्टीमेटम दिया कि वह सुरन्त रामनगर से अपने समयक सैनिकों को हटाले और युद्ध-समयकों को यद से हटा दे।

नेपाल के दरबार में इस चुनौती को लेकर घोर मतभेद था। यड़ी महारानी ने रामनगर से सुरत चुपचाप अपने सैनिकों को हटा लिया। परन्तु जहाँ तक युद्ध-समयक बल को सत्ता से हटाने का प्रश्न था दरबार में घोर मतभेद था। हाजसन ने उचित अवसर बेलकर इस बार जोर दिया कि प्रधान मंत्री रणजग पांडे को हटा दिया जाये। ब्रिटिश रजिस्ट्रार को नेपाल के अदकनी मामले में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं था परन्तु कूटनीतिज्ञ अंग्रेजों को यह भोति थी कि जबकि राज्य की स्थिति सराब हो तो कुछ बेग प्रोहियों और विन्वासघातियों को साथ लेकर राज्य की स्वतंत्रता को समाप्त कर दिया जाये। भारत के राज्यों के साथ उन्होंने यही किया था और वे उसकी पुनरावृत्ति नेपाल में भी करना चाहते थे। हाजसन को इस प्रकार की मांग करने का कोई अधिकार नहीं था परन्तु उसे नेपाल के एक दरबारी बल का समर्थन प्राप्त था। हाजसन को घमकी का परिणाम यह हुआ कि रणजग पांडे को हटा दिया गया और एक चीतरिया प्रधानमंत्री बना। उसकी अधिकांग ब्राह्मण मूस्थामियों का समर्थन प्राप्त था जो कि राज्य की अस्त-व्यस्त दशा से ऊब गए थे। राजा ने अपने मन्त्रिमण्डल में केवल उन्हीं लोगों को लिया जो नेपाल और भारत में मन्त्रों के समर्थक थे और उसने मन्त्रिमण्डल की सूची हाजसन की स्वीकृति के लिए भेजी। एक प्रकार से ब्रिटिश रजिस्ट्रार हाजसन नेपाल राज्य का अभिभावक बन गया। नेपाल का महाराजा उसकी स्वीकृति से मन्त्रिमण्डल चुनने पर विवग हो गया। जब नेपाल की राजनीति में ब्रिटिश रजिस्ट्रार हाजसन का प्रभाव इतना अधिक बढ़ गया तो उसकी विरोधिनी उषेष्ठ महारानी ने बेग त्याग दिया अथवा था कहना चाहिए कि उसे बेग को छोड़कर जाने पर विवश किया गया। महारानी बेग छोड़कर काशीवास करने चली गई। महाराजा राजेश्वरविष्णुमहाह इस सारी घटना से भयभीत और सन्न हो उठा। उसे अपनी सुरक्षा का खतरा विवश बने लगा। एक प्रकार से ब्रिटिश रजिस्ट्रार उस समय नेपाल का सर्वोच्च बन गया था। महाराजा भी घबराकर बेग छोड़कर महारानी क पीछे-पीछे काशीवास के लिए चल पड़ा।

अंग्रेज गवर्नर-जनरल इस सारी घटना से भयभीत हो उठा। वह जानता था कि महाराजा को बचाकर नेपाल में सब कुछ करवाया जा सकता है। महाराजा को आठ में अप्रज अपना स्वार्थ सिद्ध कर सकते हैं परन्तु महाराजा के न होने पर नेपाल में स्थिति भयावह हो उठेगी और अप्रजों को लम्बा युद्ध करना होगा। अंग्रेज नेपाल की सैनिक-शक्ति को जानते थे इस कारण गवर्नर जनरल ने महाराजा और महारानी को भारत में आने का आता-पत्र (पासपोर्ट) देना अस्वीकार कर दिया। उसने हाजसन को आज्ञा दी कि वह महाराजा को बेग न छोड़ने के लिये समझाने को कहा। इस पर महाराजा और महारानी राजधानी को लौट आए। काठमांडू में महारानी का अमृतपूर्व स्वागत हुआ। जनता ने उसके लौटने पर अपूर्व हर्ष प्रकट किया। इसका परिणाम यह हुआ कि मन्त्री मन्त्रिमण्डल के विरुद्ध जनता में रोष उत्पन्न हो गया। नेपाली

यह सोचते थे कि नवीन मंत्रि-मण्डल ने महारानी को विवश किया कि वह बेशर्याग करे। सवसाधारण की सहानुभूति का महारानी ने अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए उपयोग करना चाहा। उसकी योजना यह थी कि महाराजा पासन करने व अयोग्य हैं, वे अल्पज्ञ निचल और बुद्धिहीन हैं। अतएव उनको सिंहासन से उतारकर अपने पुत्र को राज्यासिंहासन पर बठाये और स्वयं अग्नि भायक शासिका बनकर नेपाल पर शासन करे।

परन्तु उसका यह प्रयत्न विफल हो गया। उसकी योजना के असफल हो जाने पर उसे अपनी सुरक्षा की आशका हो गई। अतएव वह एक धार पुनः काग्यी की ओर चल पड़ी। परन्तु इस धार तराई के भयकर पर्वर से वह पीडित हो गई और ६ अक्टूबर १८४१ को उसकी मृत्यु हो गई।

महारानी की मृत्यु के साथ ही युद्ध समयक बल की आगों तिरों हित होगई क्योंकि महारानी मराठा सरदारों, सिक्खों राजपूत राजाओं और अफगान के अमीर से अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध छेड़ने के सबब में पत्र-व्यवहार कर रही थी और यह अंग्रेजों के विरुद्ध एक संगठित मोर्चा बनाने का प्रयत्न कर रही थी। उसक मरते ही यह आगा कि अंग्रेजों व उन शत्रुओं की नेपाल को सहायता मिल सकगी समाप्त हो गई और युद्ध समयक बल शक्तिहीन हो गया।

अब नेपाल की नीति एकदम बदल गई। महाराजा ने अंग्रेज गवर्नर जनरल को लिखा कि यह अपनी सेनाओं की अफगानिस्तान और बर्मा के विरुद्ध अंग्रेजों की सहायता के लिए भेजने को तयार है। यद्यपि अंग्रेजों ने नेपाल की इस सैनिक-सहायता को स्वीकार नहीं किया परन्तु उससे भावी अंग्रेजों और नेपाल की मित्रता का आरम्भ हुआ। आरम्भ में अंग्रेजों के मन में नेपाल की ओर से थोड़ी शका थी परन्तु १८५७ में जब भारत में अंग्रेजी शासन को उलटकर स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए सशस्त्र क्रान्ति हुई उस समय जब नेपाल ने अंग्रेजों की सहायता की तो अंग्रेजों को नेपाल पर पक्का विश्वास हुआ।

यद्यपि नेपाल की बाहरी राजनीति में बहुत अधिक अन्तर आ गया था पर अंग्रेजों की घोर शत्रु बड़ी महारानी मर चुकी थी और युद्ध-समयक बल शक्तिहीन होकर विद्यति हो चुका था किन्तु नेपाल की आन्तरिक राजनीति में कोई अन्तर नहीं आया था।

बड़ी महारानी के मरने के उपरान्त उसका पुत्र राग्य का उत्तराधिकारी बना। महाराजकुमार सुरेन्द्र को छोटी महारानी से अपनी रक्षा करने के लिए सतत समय करना पड़ रहा था। छोटी महारानी बड़ी महारानी की मृत्यु के उपरान्त शक्तिशाली हो गई थी। उसने बड़ी महारानी का स्थान ले लिया था और उसका हृदय निश्चय था कि उसका पुत्र नेपाल के राजसिंहासन पर अपने पिता के बाद बैठेगा। मही कारण था कि महाराजकुमार सुरेन्द्र को अपने जीवन की रक्षा के लिए मत्क रहना पड़ता था। छोटी महारानी का कहना था कि महाराजकुमार सुरेन्द्र निर्मल मस्तिष्क का और शासन करने के अयोग्य है। एक ही घटनाएँ ऐसी हुई जिनसे महाराजा और महाराजकुमार सुरेन्द्र के बारे में लोगों की यह भावना हृदय हो गई कि वह शासन करने के योग्य नहीं है।

एक अत्यन्त मनोरञ्जक घटना घटी जिसके फलस्वरूप महाराजा और महाराजकुमार सुरेन्द्र की प्रतिष्ठा कम हो गई। भारत में एक समाचार

पत्र में यह समाचार प्रकाशित हुआ कि बड़ी महारानी को जहर देकर मार डाला गया। महाराजा राजेन्द्रावब्रह्मगह इस खबर से इतना क्रुद्ध हुआ कि यह खबर रंजीतसि ने भी सुनी थी और यह मांग की कि उस बर्तनाम करनेवाले व्यक्ति को मृत्युदण्ड दिया जाये। उन दिनों बड़ी महारानी की मृत्यु के कारण दरबार में शोक था। शोक के दिनों मघोड़े पर बठना बजित था। अतएव महाराजा और महाराजकुमार को बृद्ध व्यक्तियों के बंधों की काठी पर बठकर रंजीतसि पहुँचे। शोध में भरे हुए महाराजा ने हाजसन से कहा 'यवनर जनरल को कहिए कि उन्हें उस आदमी को जिसने यह बात लिखी है मुक्त बना ही होगा। मैं उसकी जिंदा पाल लियेयाऊंगा और मरने तक उस पर ममक और नीचू रगड़याऊंगा। गवनर जनरल से कह दीजिए कि यदि वह व्यक्ति हमारे सुपुत्र नहीं पर दिया जाता तो नेपाल और अंग्रेजी सरकार में पुद्ध होगा। महाराजकुमार सुरेंद्र को अपने पिता के इस व्यवहार से क्षोभ हुआ और उसने हस्तक्षेप किया। महाराजा शोध में मरा था। वह महाराजकुमार पर शपटा। दोनों में पक्षों की लड़ाई होने लगी। लड़ते हुए दोनों अपने मानवीय धोड़ों पर से गिर पड़े और रंजीतसि के फाटव के समीप लड़क गए। पुत्र ने पिता को पराजित कर दिया और उसे रंजीतसि से अपनी व्यवहार के लिए क्षमा मांगने पर विवग किया। कुछ समय के उपरान्त पुन पुत्र को अपने पिता को लाडना देनी पड़ी। उसने अपने पिता को विवग किया कि वह रंजीतसि में ब्रिटिश भारत के निवासी कागीनाथ को, जिसने यहां शरण ली थी उसको कंध करे। उस समय राजा एक सेना लेकर रंजीतसि गया। रंजीतसि हाजसन फाटक पर राजा से मिलने आया। राजा ने कागीनाथ को उनके सुपुत्र कर देने के लिए कहा। रंजीतसि ने दृढ़तापूर्वक उसकी मांग को अस्योकार कर दिया। इस पर राजा ने दौड़कर कागीनाथ को पकड़ना चाहा। रंजीतसि ने उस व्यापारी को धिपटा लिया और तेजी से राजा से कहा कि तुम हम दोनों को कंध कर सकते हो। मैं उसको अबले कंध नहीं होने दूंगा। राजा का यह साहस नहीं हुआ कि वह दोनों को कंध करता। महाराजकुमार सुरेंद्र अपने पिता से पहले आप्रह करता रहा कि उसको कंध कर लिया जाये और बाद को उसने पिता के घु से मारे। परन्तु पिता का साहस नहीं हुआ कि वह उन दोनों को कंध करता। जबकि यह क्षण्डा चल रहा था तो हाजसन के मित्र धौतरिया उसके फान में कहते थे कि तुम धय और दृढ़ता से काम लो, सब ठीक हो जायेगा। सब कुछ तुम पर निर्भर करता है।

सभी पक्षों के लोग महाराजा से ऊब गए थे और नेपाल की स्थिति ठीक नहीं थी। हाजसन नेपाल के दामन में परिवर्तन के पक्ष में था किन्तु उसी समय लार्ड आक्लैंड ने अपने पद से अवकाश ले लिया और लार्ड ऐलेनबरो उससे स्थान पर गवनर-जनरल बना। हाजसन के विरुद्ध यह बात तो स्वयं सिद्ध थी कि वह नेपाल के आन्तरिक मामलों में बहुत हस्तक्षेप करता था। अस्तु उसने पहले तो उसे नेपाल से वापस बुलाने की आज्ञा निकाल दी परन्तु उच्च अधिकारियों की सलाह मानकर उसने उसे वापस तो नहीं बुलाया परन्तु उसके अधिकारों को बहुत अधिक सीमित कर दिया और नेपाल के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने की आज्ञा दे दी।

बड़ी महारानी के मरने पर महाराजकुमार सुरेंद्र ने अपनी माता का स्थान ले लिया। वह भी अंग्रेजों का घोर विरोधी था। अब हाजसन नेपाल

के मामले में हस्तक्षेप नहीं कर सकता था। महाराजकुमार मनमानी करता था वह अपने पिता को भी परवाह न करके मनमाने ढंग से काम करता था। राजकाज में महाराजा का कोई दखल नहीं था। राजकुमार उस पर और उसकी प्रजा पर अत्याचार करता था। १८४२ में सामत लोग तथा सबसाधारण विद्रोही हो उठे। लोगों का कहना था कि वे दो स्वामियों की आत्मा नहीं मान सकते। उन्होंने ऐसे-ऐसे बहुत से उदाहरण दिए जिनमें पिता की आत्मा मानने पर पुत्र ने उन्हें बण्ड दिया और पिता उसका प्रतिभार नहीं कर सका। महाराजकुमार प्रजा पर जो अत्याचार करता लोगों को अपमानित करता उनको दंड देता महाराजा उनम से एक का भी प्रतिभार करने में असमर्थ था। अतः सभी वर्गों और दल एक हो गए और उन्होंने महाराजा को शासन-अधिकार छोड़ने पर विवश किया। महाराजा ने शासन-अधिकार छोड़ दिए। अब शासन अधिकार छोटी महारानी लक्ष्मी देवी को प्राप्त हुए।

५ जनवरी १८४३ को राजेन्द्रविक्रमशाह ने अपनी प्रभुसत्ता छोटी महारानी को सौंप दी। राज्य के प्रमुख अधिकारियों के सामने महाराजा धिराज ने घोषणा की 'आप सबों को ज्ञात होना चाहिए कि यह राजापा और हमारी इच्छा है और प्रसन्नता है कि आज से आप लोग महारानी लक्ष्मी देवी (राज्य लक्ष्मी देवी) की आत्मा मानें। वे ही नेपाल की अधीश्वरी होंगी। उन्हें प्राणदण्ड जीवनदान नियुक्ति और बरखास्तगी का शाही परिवार के लोगों को छोड़कर सभी पर अधिकार होगा। वे युद्ध और सधि कर सकेंगी। हम निष्ठा के साथ बचन देते हैं कि हम बिना उनकी सहमति और आत्मा के कुछ नहीं करेंगे।

महारानी लक्ष्मी देवी घोर महत्याकांक्षी स्त्री थी। उसका कोई सिद्धांत नहीं था। वह पांडे और चौतारियों की विरोधी थी और घापा परिवार की मित्र थी। उसको अपने शत्रुओं पांडे परिवार और उनका सहायक अपने सीतेले पुत्र महाराजकुमार को समाप्त करने का अवसर मिल गया। शासन अधिकार हाथ में आते ही उसने शीघ्रता से काय किया और राज्य-भयस्या में यकायक परिवर्तन हुआ। प्रधानमंत्री भीमसेन पापा का निर्वासित नतीजा मायबर्साह प्रधानक बाठमांझू में प्रगट हुआ। सेना और जनता ने हय और उल्लास के साथ उसका स्वागत किया। मायबर्साह अत्यन्त सुखर आक्यक और मध्य व्यक्तित्व का घोर पुरुष था। वह गिमला में अग्रजों की पंशन पर रहता था। छोटी महारानी के सकेप पर ही वह आया था। मायबर्साह के पवारकृ होते ही एकवार फिर नेपाल दरवार में रुधिर यहा और बरयारियों ने रुधिर में स्नान किया। छोटी महारानी और महाराजा ने मायबर्साह को पांडे परिवार का समूल नाश करने की छुट्टी द दी जिससे कि आगे चलकर उसे कोई कठिनाई न हो। यह संहार बड़ी सतर्कता से किया गया। पांडे लोगों का वय किया गया। वे स्वयं अपनी कुरुरी को तेज करके लाते थे जिससे उनसे गले साफ कट जावे व अधिक कष्ट न हो। रणजग पांडे तो प्राकृति रूप से ही मरणासन्न था जब यह वषट्यल पर लाया गया। उसने अतिरिक्त कुरवान पांडे कुवराई पांडे को विन्वासपाती घापा इन्द्रवीर और रणजाम, तथा बनबसित्त मारन न्यायापीण जिसने यिना मुकदमा मुने ही भीमसेन पापा को मृत्युदण्ड दिया था—ने तिर काट दिए गए। योउमान यादरी की नाक और होठ काट दिए गए तथा बसतराम बसतत की नाक काट दी गई। इसने बरले में मायबर्साह

को उन घोरतरिया मन्त्रियों को समाप्त करना था जिन्हें महाराजा और महारानी पृथा की दृष्टि से बलते थे ।

१८४३ में जिस वय पाँडे वय हुआ उसी वय में हाजसन रिटायर हो गया और हैनरी सारस उसके स्थान पर सिटिंग रंजीडट बना । उसी वर्ष मायबरसिंह नेपाल का प्रधानमंत्री बना । वास्तव में मायबरसिंह बहुत ही साहसी और मर्यादावादी हो गया । सभी यह नेपाल छोटा और अपने राज्य के शासन की यागडोर को उसने अपने हाथ में ले लिया । भीमसेन थापा की जैसी बुलब मृत्यु हुई उसे देखते कोई अन्य व्यक्ति नेपाल यापस थापर उसका प्रधानमंत्री बनने का साहस नहीं करता । वह अपने मतीजे जगवहादुरकुंवर को साथ लाया था । जगवहादुरकुंवर उसके साथ उसकी सेवा में था ।

दो वर्षों तक चाचा और मतीजे ने नेपाल सरकार का निर्वहन महाराजा के उत्तराधिकारी महाराजकुमार सुरेन्द्रविक्रम के शासन के अधीन किया । तब तक महाराजा राजेन्द्रविक्रमगाह में प्रशासनिक अधिकार महाराज कुमार को सौंप दिए थे । वास्तविक स्थिति यह थी कि पिता और पुत्र दोनों ही काठमांडू के बड़े दरबार हाल में साथ बैठते थे । वहाँ अधिकारियों और मन्त्रियों की प्रायनाए सुनते और निर्णय करते थे । औपचारिक रूप से वे निणय महाराजा के होते थे परन्तु वास्तव में वे होते पुत्र के थे । जगवहादुर दरबार में साधारण पोशाक में उपस्थित होता था । पिता अत्यंत निबल और प्रशासनिक योग्यता की दृष्टि से निरम्मा था । महाराजकुमार विलासी, धरित्रहीन था जिसमें नतिक्ता की बहुत कमी थी । महारानी ने मायबरसिंह थापा को इस कारण प्रधानमंत्री बनाया था क्योंकि उसकी धारणा थी कि यह बड़े अनुसाह काय करेगा और इस प्रकार उसका शासन पर गहरा प्रभाव होगा । उसकी यह आंतरिक अभिलाषा थी कि महाराजकुमार सुरेन्द्र विक्रम का नेपाल के राजसिंहासन पर अधिकार स्वीकार कर दिया जाय और उसका पुत्र नेपाल के राजसिंहासन का उत्तराधिकारी स्वीकार किया जाय । परन्तु मायबरसिंह थापा ने उसको स्वीकार नहीं किया । न तो मये प्रधानमंत्री को यह स्वीकार था कि महाराजकुमार सुरेन्द्रविक्रम को राजसिंहासन के उत्तराधिकारी होने से वंचित किया जाये और न यह महारानी के पुत्र को उत्तराधिकारी स्वीकार किए जाने के पक्ष में था । यही नहीं प्रधानमंत्री मायबरसिंह थापा ने महा राजकुमार सुरेन्द्रविक्रम के साथ अपना घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित कर लिया और उसका समर्थक और सहायक बन गया । महाराजकुमार सुरेन्द्रविक्रम महारानी का घोर विरोधी और शत्रु था तथा उसके मतीजे जगवहादुर को मृत्युदण्ड विलानेवाला था । यदि मायबरसिंह महारानी के बड़े अनुसार आधरण करता तो उसको महारानी के मन्त्रियों की हत्या में सहायक तो अवश्य ही होता मड़ता ।

महाराजा निबल शासक हो पड़्यंत्रकारी महारानी जिसका एक प्रेमी हो, और महाराजा और महारानी का विरोधी प्रधानमंत्री हो तो उसका परिणाम यही हो सकता था कि नेपाल के महलों में फिर एक बार अधिर-स्नान हो । जब महारानी मायबरसिंह को अपनी इच्छा के अनुसार काय करने के लिए राजी न कर सकी तो उसने यह निश्चय कर लिया कि उसके स्थान पर ऐसे व्यक्ति को लाया जाय जो उसके कहे अनुसार काय करे । राजसिंह की मायवता थी कि वही ऐसा व्यक्ति है कि जो महारानी की इच्छाओं को पूरा कर

सकता है। अतएव वह यह चाहता था कि किसी प्रकार भी मायबरसिंह चापा को हटाकर वह प्रधानमन्त्री बन जाये। अतएव वह ऐसे किसी पदयन्त्र में सम्मिलित होने को तयार था जो मायबरसिंह को हटाने के लिए किया जाने वाला हो। उसने महारानी को सलाह दी कि वह महाराजा से कहे कि मायबरसिंह महाराजा को अपने पुत्र महाराजकुमार सुरेन्द्रविक्रम के पक्ष में सिंहासन छोड़ने के लिए विवश करने का पदयन्त्र रच रहा है। यही नहीं उसकी योजना का केवल प्रथम चरण सुरेन्द्रविक्रम को राजसिंहासन पर बिठाना है। उसके उपरांत वह स्वयं राजसिंहासन हथियाकर राजवश हो समाप्त कर देना चाहता है। उसको अपने पति महाराजा राजेन्द्रविक्रम को इस बात के लिए तयार कर लेना चाहिए कि वह इस क्षत्रनाश प्रधानमन्त्री को मृत्युवण्ड की आज्ञा दे दे। महारानी ने महाराजा को मायबरसिंह के लिए मृत्युवण्ड की आज्ञा देने के लिए राजी कर लिया। महारानी तथा गगनसिंह की योजना यह थी कि प्रधानमन्त्री के समाप्त होते ही सारी शक्ति उन दोनों के हाथों में आ जावेगी। परन्तु प्रश्न यह था कि मायबरसिंह की हत्या कौन करे।

महारानी और महाराजा ने इस कृत्य के लिए जगवहादुर को चुना। उन दोनों ने जगवहादुर को अपने चाचा की हत्या करने के लिए क्यों चुना, यह कहना कठिन है। साप ही यह कहना भी कठिन है कि उन्हें यह कैसे अनुमान हुआ कि जगवहादुर इस कार्य को करने के लिए तयार हो जावेगा। महाराजा ने जगवहादुर को बुला भेजा और उसे अपने चाचा को मारने की आज्ञा दी। साथ ही यह धमकी भी दी कि यदि वह इस कार्य को करना अस्वीकार करेगा तो उसकी मरवा दिया जायेगा। महाराजा ने जगवहादुर से कहा कि जो भी हो मायबरसिंह की मृत्यु निश्चित है उसको जीवित नहीं रहने दिया जा सकता।

जगवहादुर अपने चाचा की हत्या के लिए तुरन्त तयार हो गया। 17 मई 1885 को महाराजा ने प्रधानमन्त्री को महारानी के महल में बुला भेजा। महाराजा ने स्वयं अपने हाथों से मरी हुई चट्टक जगवहादुर के हाथ में पकड़ाई और उसको पर्व की आड़ में छिप रहने के लिए कहा। उसके साथ ही गगनसिंह तथा कामी कुलमानसिंह-याग भी पर्व की आड़ में छिप गए। जैसे ही मायबरसिंह कमरे में घुसा जगवहादुरसिंह ने गोली मारदी और वह मर कर महारानी के चरणों में गिर पड़ा। उरने गव की पिड़की से बाहर फेंक दिया गया। उसका उपरान्त उसके गव को सड़कों पर धसोटा गया और पनुपतिनाथ से जाया गया।

जगवहादुर ने अपने दो भाइयों उदीप और बमवहादुर को शीघ्र बुला भेजा और उनसे मायबरसिंह के दोनों लकड़ों की नपाल की घाटी के सुदूर गांव में सेजाकर उन्हें भारत भेज देना आदेश दिया। महारानी की केवल मायबरसिंह की मरणाकर ही सतोष नहीं हुआ। वह उन सभी को मरवा देना चाहती थी जो उसकी तीव्र ईर्ष्या अपने पुत्र को नपाय के राजसिंहासन पर घटान का विरोध करते थे। मायबरसिंह का स्थान ग्रहण करनेवाला कोई नहीं था। बात यह थी कि महल में सब एकमत नहीं थे कि किसको प्रधानमन्त्री बनाया जाने और कोई भी उस पद के लिए दावा करने का साहस नहीं कर रहा था। महाराजा और महारानी की सम्मति से जगवहादुर गायन शाय बनान लगा। उसकी कोई कथानिक स्थिति

महीं थी क्योंकि उसे प्रधानमंत्री नियुक्त नहीं किया गया था। महारानी अपने प्रेमी और अपने पुत्रों के शिक्षक गगर्नासिंह को प्रधानमंत्री बनाना चाहती थी। महाराजा गगर्नासिंह को प्रधानमंत्री बनाने के लक्ष्य को जानता था। अस्तु उसने गगर्नासिंह को प्रधानमंत्री बनाना स्वीकार नहीं किया। निराश और हताश होकर उसने घोरतया फतहजगगाह को बुला भेजा। परन्तु उसको महाराजा महारानी के रोप के कारण प्रधानमंत्री बनाने का साहस न कर सका। वह गगर्नासिंह को किसी प्रकार भी प्रधानमंत्री बनाने के लिए तयार न था। वह फतहजग के द्वारा महारानी के प्रेमी गगर्नासिंह को मरवा डालना चाहता था। हृदय निश्चय न कर सकने के कारण उसने एक ऐसा समझौता स्वीकार किया जिससे कि कोई भी माराज न हो। प्रधानमंत्री पद के लिए चार प्रार्थी थे जिन्हें विभिन्न दलों का समर्थन प्राप्त था उसने उन चारों को ही प्रधान सेनापति नियुक्त कर दिया। गगर्नासिंह के अधीन सात रेजीमेंट, फतहजग, जग बहादुर, और अभिमानसिंह में से प्रत्येक के अधीन तीन-तीन रेजीमेंट रखी गई। फतहजग के अधिकारों और शक्ति को कम करके उसे प्रधानमंत्री बनाया गया। दोष तीनों प्रमाण उसके बाद अधिकारी थे। फतहजग और अभिमानसिंह महाराजा के आत्मीय थे गगर्नासिंह महारानी का आदमी था, और सघने अधिक आश्रय की बात यह थी कि जग बहादुर महाराजकुमार का आदमी था। राजनीति में कथ्य कोई किसी का मित्र और दायु होता है यह कहना कठिन है। नेपाल में तो यह कहा और भी कठिन था।

फतहजग प्रधानमंत्री बना। परन्तु जगबहादुर की सेना को क्षाय निकट से प्रभावित करने और उसके अनुशासन में सुधार करने का कार्य सौंपा गया। जगबहादुर सैनिकों का प्रिय और स्वाभाविक नेता था। उसे उसका मनचाहा वाप मिला गया। जगबहादुर की सेना के सुधार का कार्य सौंपकर महारानी तथा अन्य तीनों ने भयकर मूल की। उन्होंने यह नहीं सोचा कि जगबहादुर सैनिकों का आदमी है व सेना में सर्वप्रिय है। उसकी सेना का क्षायनिकरण करने का काम सौंपकर वे उनकी शक्ति को घटा रहे हैं।

१८४५ में सिक्ख सेनाओं ने सतलज नदी पार की और अंग्रेजों से युद्ध छिड़ गया। महाराजा रणजीतसिंह मर चुके थे और परस्पर लड़नेवाले सेनापति शक्तिवान थे। लाहौर दरवार ने नेपाल से सहायता मांगी। नेपाल की काउंसिल में यह प्रश्न विचाराय उपस्थित हुआ। फतहजग और अभिमानसिंह ने महाराजा को सलाह दी कि वह पालसा (सिक्खों) की सहायता करे। जगबहादुर और गगर्नासिंह ने उसका विरोध किया। जगबहादुर पंजाब में रहा था। सिक्खा के बारे में उसकी धारणा ऊंची नहीं थी। उसने अंग्रेज सेना के बारे में और अंग्रेज सैनिक अफसरों के बारे में जो कुछ सुना था उससे वह अंग्रेजों से अधिक प्रभावित था। मालाम युद्ध के सेनानी अमरसिंह ने जो कुछ अंग्रेजों के बारे में कहा था और महान् राजनीतिज्ञ भीमसेन थापा ने अंग्रेजों के बारे में जो कुछ कहा था जगबहादुर मूला नहीं था। महाराजा और महारानी ने बीच का मार्ग अपनाया। उन्होंने सिक्ख दरवार से कहला भेजा कि जैसे ही बहली के बिल पर सिक्खों की विजय होगी नेपाल को सैनिक सहायता पक्ष जायेगी। परन्तु धीमे ही सिक्खों की पराजय हो गई और नेपाल को इस सम्बन्ध में कोई निर्णय करने की आवश्यकता नहीं पड़ी।

जगबहादुर यही ही सावधानी से सतरनाक मार्ग का अवलम्बन कर

रहा था । यद्यपि अपने चाचा मायबर्साह की भांति वह महाराजकुमार सुरे
द्रविक्रम के पक्ष में आ गया था परंतु वह महारानी और उसके प्रेमी गगनसिंह
के गिविर में भी अपना एक कब्रम रखता था । यद्यपि यह माग खतरनाक था
किन्तु उसने बड़ी धतुराई से उसको नियाहा ।

नपाल में हत्या करना साधारण बात थी । जिस प्रकार सवतापा
रण खाने और पीने के अन्वयत होते हैं उसी प्रकार नपाल में राजनतिक हत्यायें
एक साधारण-सी बात थी । प्रत्येक महत्वपूर्ण व्यक्ति को खतरा था कि वह बिन
उसका अंतिम दिन हो सकता है ।

जगबहादुर इतना शक्तिशाली था कि कोई उस पर खुले रूप में
आक्रमण नहीं कर सकता था । परंतु बहुत से उसको गुप्त रूप से मार डालने
के इच्छुक थे । अस्तु वह जहाँ भी जाता अपने मरोसे के बीर अगरसकों को
साथ रखता यहाँ तक कि वह गिबार में भी अगरसकों को साथ ले जाता ।

१२ सितंबर १८४६ को महाराजा राजेन्द्रविक्रम ने अपने दो पुत्रों
सुरेन्द्रविक्रम और उपेन्द्रविक्रम को आजा दी कि वे महारानी के नीच बग के
प्रेमसी महारानी ने उसे जनरल और प्रथम सेनापति बना दिया । उपेन्द्र को जब
महाराजा ने प्रथम सेनापति को मारने की आज्ञा दी तो उस काय की गुस्ता
के मार से दबकर यह प्रथमपत्री से सलाह करने गया । फतहजग ने अपने
सहयोगी अभिमानसिंह तथा काउंसिल क पांडे सवस्य धीरकिशोर से सलाह की

और उन्होंने उपेन्द्र को यह सलाह दी कि वह गगनसिंह को मारने के लिए किसी
को किराये पर तयार करे । उसका कारण था कि उपेन्द्र अनी लडका था और
सुरेन्द्रविक्रम सक्ती और निबल था । उन्होंने महाराजकुमारों के लिए एक
ब्राह्मण लाल झा तयार कर दिया । दो दिन पश्चात् लाल झा ने गगनसिंह के
मकान के पास के एक दूसरे मकान की छत पर से, जब गगनसिंह पूजा कर
रहा था उसे गोली से मार दिया । कुछ लोगों का मानना यह है कि जगबहादुर
ने ही वास्तव में गगनसिंह को मरवाया था ।

महारानी ने जब अपन प्रेमी की हत्या का समाचार सुना तो वह
क्रोध से जल उठी । सुरन्त ही वह अपने प्रेमी के मकान पर गई और उसकी
तीनों विधवा स्त्रियों को उसने उसकी चिता पर सती होने से मना कर दिया ।
वह नहीं चाहती थी कि य उसकी चिता पर सती होकर उसको विधिवत धम
पत्नी होने का दावा करें । उसके उपरान्त उसने सभी मुख्य ५ राज्य अधिका
रियों को बोट में बुला भेजा । जगबहादुर अपनी तीनों रजौमेंटों के साथ वहाँ
गया । साथ ही पर अपने सभी भाइयों और सन्धियों को भी साथ ल गया ।
उसके पास अपने घर की एक सेना ही गई । बाटमांडू में होने के कारण वह
सबसे पहले अपनी सेना के साथ पहुंचा । महारानी इससे नाराज हुई और
उनकी सेना लाने का कारण पूछा । धतुर जगबहादुर ने न केवल उसके मय
और शका की ही डूट कर दिया बरन् उजाते एन आता पर हताहार भी करवा
लिए जिससे उसने अन्य सभी सेनापतियों को बोट में अपनी सेना लाने क लिए
मना करवा दिया था । तब तक जगबहादुर के सनिकों ने बोट की इमारत
को घेर लिया । अनएक उस समय वहाँ जगबहादुर ही सवर्गस्तिमान बन
गया । जगबहादुर ने अपनी युक्ति में अपने सभी प्रतिद्वन्द्वियों को ही नहीं अपनी

मित्र-महारानी को भी मना कर दिया । सभी सनिक तथा सिविल अधिकारी कोर्ट में पहुँचने लगे । महारानी कोष में इतनी अधिक भरौ हुई थी कि वह कोई घातघात करने के लिए तैयार नहीं । वह तो केवल अपने प्रती की श्रापु का बखला लेना चाहती थी ।

जब कोष कोर्ट में इकट्ठे हो गए तो उसने अपनी अगुसी पाँडे बीर किंगोर की ओर उठाकर कहा कि यह हत्यारा है और उसने अहिंसात्मकता को आगा दी कि उसको कब कर लिया जावे । अहिंसात्मकता ने पाँडे बीरकिंगोर को पकड़ लिया । बीरकिंगोर ने साहस और तेजी के साथ इस अपराध को अस्वीकार किया । महारानी की घमस्त्रियों से भी वह नहीं डरा और उसने अपराध को स्वीकार करने से साफ मना कर दिया । कोष से महारानी की आँखें लाल हो रही थीं । उसने अहिंसात्मकता को धाजा दी कि यह कैदी बीरकिंगोर का उसी स्थान पर तार बाँट दे । महाराजा राजेश्वरविक्रम ने हस्तक्षेप किया कि बिना मुकदमे के प्राणबन्ध नहीं दिया जा सकता । अहिंसात्मकता ने भी इस सिद्धांत का प्रतिपादन किया । महाराजा घबड़ा गया । वह महारानी से भयभीत था । अस्तु वह बहाना बनाकर बाहर निकल गया और घोड़े पर सवार होकर तेजी से प्रधामंत्री फतहजग के भवन पर पहुँचा । उसने प्रधान मंत्री को कोर्ट जाने का आदेश दिया । प्रधानमंत्री को कोर्ट भेजकर वह अंग्रेज राजीवसी में गरण (सुरक्षा) प्राप्त करने के लिए गया । ब्रिटिश राजीवसी इस आतिथिक मामले में पटना नहीं चाहता था । अस्तु उसने महाराजा राजेश्वर विक्रम से मिलना अस्वीकार कर दिया । निराग होकर वह फिर कोर्ट लौट कर आया । वहाँ आकर उसने बसा कि फाटफ तया नातियों में शिघ्र घट रहा है तो वह फिर फतहजग के भवन को चला गया ।

उस समय कोर्ट में जगबहादुर की स्थिति सबसे अधिक भयङ्कर थी क्योंकि उसकी सेना और उसके सैन्य सबको यहाँ मौजूद थे । वह यह कहता था कि अहिंसात्मकता में गणसिंह की हत्या करवाई है । अस्तु जैसे ही फतहजग अंदर आया, उसने उसे रोका और कहा कि या तो बीरकिंगोर और अहिंसात्मकता को मृत्युदण्ड देना होगा अथवा महारानी को कैद करना होगा । उस समय तक महारानी को यह ज्ञात हो गया था कि जैसा मैं चाहती हूँ सारी बात उसी तरह नहीं हो रही और उसकी आवाज लोगों की सुनाई नहीं दे रही है साथ ही अपनी सुरक्षा के ध्यान से वह मर्लों के अंदर चली गई और लिङ्की से भाँपकर उसने उसजित मोड़ को देखा और उसने घिसकर फतहजग से पूछा कि वह बतलाए कि हत्या कितनी की है । फतहजग ने चिल्लाकर कहा कि यह जानने में समय लगेगा । जगबहादुर के कान में फतहजग ने धीरे से कहा कि उसकी भी यही राय है कि महारानी को कब कर लेना चाहिए । किन्तु उसको कब करने का यह समय अनुकूल समय नहीं था । इस पर कुछ महारानी बीसलाई हुई नीचे उतर आई और उसने मोड़ को धीरे धीरे अपने हाथ में तलवार लेकर बीरकिंगोर को स्वयं मार डालना चाहा । लेकिन जग बहादुर ने धतुराई से बिना महारानी को नाराज किए उसे बीरकिंगोर को मारने से रोक दिया । स्थिति उस समय जगबहादुर के हाथ में थी । वह जो चाहे कर सकता था किन्तु वह उस समय महारानी को नाराज नहीं करना चाहता था क्योंकि वह महारानी का उपयोग करना चाहता था ।

अब उसके पास यह सूचना आई कि अहिंसात्मकता और फतहजग

साह बिना उसको पूछे और विश्वास में लिए परामर्श कर रहे हैं। वह तुरन्त समझ गया। जीना घड़कर महारानी के पास गया और उससे बाबा किया कि अभिमानसिंह के सनिक उसके समयकों को परामर्श कर उसको कब करने के लिए आ रहे हैं। क्या वह तुरन्त अभिमानसिंह को कब करने की आज्ञा देगी ? महारानी ने अभिमानसिंह को कब करने की आज्ञा दे दी। जैसे ही अभिमानसिंह अपने सनिकों से जिन्हें उसने बुला भेजा था मिलन के लिए जान लगा तो सतरी ने उसे रोका। अभिमानसिंह ने पूछा कि किसरी आज्ञा से तुम मुझे रोक रहे हो ? संतरी ने कहा कि महारानी ने काजी जगवहादुर के द्वारा उसे रोकन की आज्ञा दी है। अभिमानसिंह न स्थिति को समझ लिया और उसन सतरी को हटाकर निकलना चाहा। सतरियों के नायक ने उसको रोका तो वह क्रोधित हो उठा। यह सुनकर कि अभिमानसिंह उसनी आज्ञा की अवहेलना करना चाहता है महारानी न रक्षकों को आज्ञा दे दी कि यदि अभिमानसिंह जबरदस्ती निकलना चाह तो वे अपन गर्तों को काम में लायें।

यह दृढ़ चल ही रहा था कि जनरल अभिमानसिंह राणा बहुत उत्तेजित और बड़ हो गए। सतरी भी उत्तेजित हो उठा। उसन बड़क उठा भी और अभिमानसिंह को छानो में अपनी किच घमंड दी। अभिमानसिंह मर्मान्तक पीडा क कारण गिर गया। जब वह मरने लगा तब उसन चिल्लाकर कहा कि स्वयं जगवहादुर ने गगनासिंह की हत्या की है। फतहजग के सबसे बड़े लड़के सरकविक्रम ने यह सुनकर चिल्लाकर कहा कि जगवहादुर ने हम सबको धोखा दिया और विश्वासपात किया है। अस्त सभी को उसके साथ मिलकर आव्यरता हो तो अपना जीवन उत्सर्ग करन के लिए तयार हो जाना चाहिए।

जगवहादुर क छोटे भाई कृष्ण ने उससे मुह बंद करने और धुप रहने को कहा। सरक न उसी पर अपनी तलवार ने धार किया। कृष्ण ने हाथ से धार को बचाया किन्तु उसका अगूठा कट गया। सरक न दूसरा धार करने क लिए अपनी तलवार उठाई। परंतु जगवहादुर के दूसरे भाई न हुस्त क्षेप किया और उसके सर पर गहरा घाव लगा। जगवहादुर का तीसरा भाई धीरगामोर जो तलवार चलाने में प्रतिद्वेष था, पास ही था। तब तक उसने अपनी तलवार (सोरा) निकाल ली थी। एक धार म ही उसन सरकविक्रम के दो टुकड़े कर दिए। सब और सम्राटा छा गया।

जगवहादुर फतहजग क पास गया और कहा कि सरकविक्रम ने जगवहादुर को मार दिया था। बिना से उस भाई को भूल जान और क्षमा कर देने के लिए कहा। उसत बात न सरक फतहजग तथा अन्य मंत्रों महारानी के पास रोके। जगवहादुर न उन्हें रोका और कहा कि गगनासिंह की मृत्यु के मामले में वह सबथा निर्दोष है। परंतु फतहजग ने उसनी घटना द किया और वह अपने साथी मंत्रियों के साथ महारानी के पास जाने क लिए आगे बढ़ने लगा। जगवहादुर ने उस जीन (सीड़ियों) की रक्षा के लिये जो रक्षक सनिक नियुक्त किए थे उसन नायक न आता दी। सनिकों न गोलियां चला दीं और तीनों मंत्रों मर कर गिर गए।

सोरा क विनाश प्रांगण में एक ओर दूर पर जगवहादुर के भाई अताय भाई उदीप को एक धौनरिया मार रहा था। जगवहादुर के भाई अताय भाई ने इस कारण उनर विरोधी अनजाने में मार करने लगे। जगवहादुर

और कृष्ण ने अब देखा कि उनका भाई उदीप रातरे में है तो उन्होंने अपनी तलवारें निकाल लीं और वे अपन भाई की सहायता के लिए झपटे और चीत रिया की घरागायी कर दिया ।

फतहजग के भाई ने जब देखा कि उसका भाई प्रधानमंत्री मारा गया तो उसने घिस्लाकर कहा कि राजपूत कभी पीठ नहीं दिखाते आओ हम घरियों से बढला लें । प्रत्येक व्यक्ति ने जो भी अस्त्र उसके हाथ में आया लहर वार करना आरम्भ कर दिया । जगबहादुर की ओर कुछ लोग झपटे । उसी समय यकायक जगबहादुर की सेना की एक कम्पनी बाहर से उस प्रांगण में घस आई और जो भी जगबहादुर के शत्रु उसके सामन आए उनका सफाया कर दिया । घोररिया भय के मारे दीवार के साथ बन हुए मकानों में घुस गए अथवा उनकी दीवारों पर चढ़ गए । उस समय भयकर नरसंहार हुआ । सबकों की सख्या मे सामत, उच्च अधिकारी इत आम-बत्स में मारे गये । उसी समय महाराजा राजेन्द्रविक्रम रंजीडसी से निराग होकर थापस आया और उसने फाटक तथा मालियों से दधिर बहते हुए देखा और लोट गया । इत भयकर हत्याकांड मे फतहजग, सरकश्रम अभिमानासह मंत्री बलबदानासह पांडे जैधक युद्ध का वीर रणभुर थापा मारे गए ।

जगबहादुर ने फतहजग के भाई की जान बचाई और उसको सुर सित बाहर निकाल दिया । जब यह युद्ध चल रहा था और दधिर बह रहा था तो उस समय जगबहादुर महारानी की रक्षाय उसके समीप ही खडा रहा । महारानी ने उसी समय उसकी प्रधानमंत्री और प्रधान सेनापति पद पर नियुक्त कर दिया ।

जब वह भयकर हत्याकांड समाप्त हो गया तो महारानी ने महा राजकुमार सुरेन्द्रविक्रम को बुलाया जिससे वह इतना भयभीत हो गया कि वह भी अपने पिता के साथ बनारस चले जाने की बात सोचने लगा किन्तु जग बहादुर महाराजकुमार को अपनी मुट्ठी से बाहर नहीं जान देना चाहता था । यह महाराजकुमार से मिला और उसको समझाया कि उसके सारे शत्रु मारे जा चुके हैं और वह उसकी रक्षा करेगा । अस्तु उसे नेपाल छोडकर नहीं जाना चाहिए । सुरक्षा का आश्वासन पाकर महाराजकुमार सुरेन्द्रविक्रम काठमांडू में ही ठहरा रहा । जब सुरेन्द्रविक्रम जगबहादुर के हाथ की बंधुतली था । वह उसका उपयोग भयानक महारानी के विरोधी के रूप में करना चाहता था ।

महाराजकुमार सुरेन्द्रविक्रम और उपेन्द्रविक्रम की महारानी से रक्षा के लिए जगबहादुर ने अपने विपस्त सनिकों की टुकड़ियों को उनके मकानों पर नियत कर दिया । महारानी यह घमकी दे रही थी कि यदि महाराजा ने उसके पुत्र रानेन्द्र को सिंहासन पर नहीं बठाया तो ऐसा भयानक हत्याकांड होगा कि जिसके सामन कोट-हत्याकांड नगण्य हो जायेगा ।

जब महाराजा राजेन्द्रविक्रम ने सुना कि फतहजग मारा गया तो वह उसके मकान से हनुमानघोक महल चला आया जहां महारानी भी आ गई थी । हनुमानघोक महल मे जगबहादुर नये प्रधानमंत्री के रूप मे उसका अभि वादन करने पहुँचा । जब महाराजा ने पूछा कि यह हत्याकांड किसकी आज्ञा से हुआ तो उसने सारा दोष स्वयं महाराजा पर डाल दिया । उसने कहा महा राज, यह सब महारानी की आज्ञा से हुआ जिनको आपने महाराजा के संपूण अधिकार दे दिए थे । महाराजा चुप हो गया ।

महाराजा राजेन्द्रविक्रम द्रतना घबडा गया और भयभीत हो गया कि वह काठमांडू छोड़कर पाटन चला गया और वहां से कागो जाने की तयारियां करने लगा ।

अब सारी सत्ता जगबहादुर के हाथ में आ गई थी । उसने पूरी तरह अपनी सत्ता को अप्रुण्य बनाने के लिए तेजी में काम किया । जो भी सामंत और ऊंचे अधिकारी उस हत्याकांड में मारे गए थे या जो भाग गए थे, उनके परिवारों को उसने दंग से निर्वासित कर दिया और आज्ञा दे दी कि यदि वे फिर कभी नेपाल में थापस आए तो उनको मृत्युवण्ड दिया जावेगा । जबकि वार्षिक पंजनी समारोह हुआ और सब पद और अधिकार राजा को समर्पित कर दिए गए तो उसने ऐसे एक भी अधिकारी को पुनः नियुक्त नहीं होने दिया जिससे उसको यह भासका हो कि वह उसका विरोध करेगा । उनके स्थान पर उसने अपने समर्थकों को नियुक्त करवाया । उसने अपने नाइयां और सभ्यियों को सभी महत्वपूर्ण राजनयिक पदों पर नियुक्त कर दिया ।

जगबहादुर ने मदान में एक विशाल सैनिक परेड कराई और उसने स्वयं सावजनिक घोषणा की कि मैं नेपाल का प्रधानमंत्री और प्रधान सेनापति हूँ । १८४६ में उसने अपने लिए और अपने सैनिकों के लिए गौरवपूर्ण राणा उपाधि धारण की । महाराजा ने उसको तथा उसके सैनिकों की राणा की गौरवमयी उपाधि प्रदान की थी । अब जगबहादुर राणा जगबहादुर हो गया । उसकी शक्ति और सत्ता अपरिमित थी । नाममात्र की वह केवल प्रधानमंत्री था । वास्तव में यही नेपाल का स्वामी और शासक बन गया ।

ब्रिटिश राजीशेंट हेनरी लारम ने इस सम्बन्ध में कहा था कि यह कौन विश्वास करेगा कि जिस देश के राजदरबार में आए दिन शक्ति-स्तान होता हो वहां के लोग बिना उत्तमता और अशांति के रहते हैं । नेपाल में जहां राजदरबार में यह घटनाएँ घट रही थीं सब-साधारण शक्तिपूर्वक थे ।

राणा शासन की स्थापना—

राणा जगबहादुर

१७४२ में जब पृथ्वीनारायणगाह न अपने स्वर्गीय पिता का दाह सस्कार कर गोरसा भ घोखोताल को वापस लौटा तो उसके साथ उसका मुख्यमंत्री अहिरामकुंवर था जो पास जाति का था। अहिरामकुंवर पहाड़ी राजपूत था। अहिरामकुंवर का पुत्र रामहृण था जो पृथ्वीनारायणगाह का अत्यन्त विश्वासपात्र साहसी और वीर सेनापति था जिसने धोबीसा और बाईसा राग्यों को विजय किया। रामहृण का पुत्र रणजीतकुंवर भी अपने पिता की भाँति ही वीर और साहसी था। उसने कांगडा और घटीली के युद्धों में बहुत पराक्रम प्रदर्शित किया था और यंग बनाया था। रणजीतकुंवर के तीन पुत्र थे। स्पेष्ठ पुत्र बलनारसिंहकुंवर था जिसने दोरगहादुर को दरबार में ही मार डाला था जबकि उसी अपने सौतेले भाई महाराजा रणबहादुर को १८०७ में भरे दरबार में अपनी तख्तार से काट डाला था। उसके फलस्वरूप बलनारसिंहकुंवर की दरबार में बहुत अधिक प्रतिष्ठा बढ़ गई थी। उसको महाराजा के सामने अपनी हाल से गान का अधिकार प्राप्त हुआ और उसको बंग-परम्परागत काजी (मन्त्री) की उपाधि प्राप्त हुई।

बलनारसिंह ने प्रधानमंत्री मीमतेन थापा की मनोनी से विवाह किया। उससे बलनारसिंह के सात पुत्र हुए। जगबहादुर उसका दूसरा पुत्र था। वह १८ जून १८१७ को पैदा हुआ। उसने माता पिता न उसका नाम बिरनारसिंह रखा था किन्तु उसके चाचा मायबरसिंह ने कहने पर उसका नाम जगबहादुर रखा गया। जगबहादुर उसी अपने चाचा मायबरसिंह के साथ १८४३ में काठमांडू वापस लौटा।

जगबहादुरसिंह के बचपन की बहुत-सी कहानियाँ प्रसिद्ध हैं। उसका पिता काजी बलनारसिंह उत्तर पश्चिमी जिले का सैनिक कमांडर था। इस कारण जगबहादुर तथा उसके भाइयों को बचपन में काठमांडू (राजधानी) से दूर रहना पड़ा। जगबहादुर के अग्र छह भाई बमबहादुर बरीनरसिंह कृष्णबहादुर राजा जदीपसिंह जगतशमशेर और धीरगमशेर थे। जगबहादुर साहसी वीर धर्मवान परिस्थिति के अनुसार साधन जुटानेवाला सिद्धांतहीन व्यक्ति था। इन पुत्रों के साथ उसमें स्नेह और ममता नहीं थी और वह एकान्तप्रिय था। उसके विचार करने थे वह अपने विचारों को किसी पर प्रकट नहीं करता था। दूसरों में मतभेद और बमनस्य उत्पन्न करान में उसे प्रसन्नता होती थी। यद्यपि वह दुबला था परन्तु वह बहुत कुर्तौला और शक्तिशाली था। सब मिलाकर

वह बहुत समझ नहीं था किन्तु उसके चेहरे से गीब और हड़ता समझती थी । उसके स्वभाव में कठोर प्रशासन की जगजाग कठोरता थी । वह बाप में सैनिक भी डीलडाल पसंद नहीं करता था । योद्धा से नूल होने पर क्रुद्ध हो उठता था और घबरा जाता था । वह सैनिक भी विरोध सहन नहीं कर सकता था । वह निश्चित नहीं था यह कहना चाहिए कि वह अनिश्चित था । परन्तु सप्ताह के घटनाक्रम की यह जानकारी रखता था । इंग्लैंड और भारत के समाचार पत्रों को वह पढ़ाकर सुनता था । वह बहुत मितव्ययी और सादा था । शान्त-गोबत से घन ध्वज नहीं करता था । वह एक महादुर सैनिक था । उसकी विनयधर्या बहुत अनिश्चित थी । कभी बहुत जल्दा उठ जाता, तो कभी बहुत धर से उठता । इसी प्रकार उमक सोने का समय भी निश्चित नहीं था ।

जगबहादुर जब सेना में भर्ती हुआ तो उसका अपने अधिकारियों से झगड़ा हो होता रहा । सभी उसको जानते थे कि वह अनुशासन में नहीं रह सकता क्योंकि वह एक प्रतिष्ठित घराने (बाजी परिवार) का पुत्र था इस कारण सभी अधिकारी उसको जानते थे । उसकी अनुशासनहीनता की चर्चा काठमांडू में सच प्र होती थी । उसका पिता भी अपने इस स्वतंत्रताप्रिय स्वच्छन्द पुत्र को अकुण में नहीं रख सकता था । वह स्वतंत्र था । किसी कायदे कानून को नहीं मानता था । उसका कानून स्वयं उसकी इच्छा थी । वह परिणाम की चिंता न कर मनमाने काय करता था । परन्तु सेना में साधारण सैनिक का वह प्रिय और विश्वासपात्र था । साधारण सैनिक उसकी प्रतिष्ठा करते थे । वह नेपाल सेना के कायदों और नियमों को अचूकता करता था अपने से उच्च अधिकारियों की आज्ञा उल्लंघन करता था, परन्तु फिर भी उसका व्यक्तित्व ऐसा प्रभावशाली और आकर्षक था कि सैनिक उसको चाहते थे । वह एक साहसी गतान था । वह घोर जुआरी था और जीवन भर जुआ खेलता रहा । सैनिकों का प्रिय नेता और विश्वासपात्र था । वह एक अत्यन्त कशल गिकारी था । कुशल और सिद्ध हस्त गिकारी के माते उसकी कौनि सभी पर विदित थी ।

१८३७ में जब बीमतेन यादा का पतन हुआ तो दलनारसिंह और उसका पुत्र राज्य-मेवा से निकाल दिए गए क्योंकि यह यादा परिवार के थे । जगबहादुर ने सोचा कि यह अपना जीवन-यापन तथा जुए के श्रेण को बचाने के लिए तराई में हाथियों को पकड़ने का काम करेगा । मस्तु वह तराई के जंगलों में घसा गया । परन्तु आर्थिक दृष्टि से यह निरान्त असफल रहा । भाग्य था उसकी सेना में पुन शीघ्र वापस बुला लिया गया और उसके जीवन-यापन का प्रश्न हल हो गया । हाथियों से उसे विनोप लगाव था । वे उसके आश्रय का केन्द्र थे । हाथियों के पकड़ने में उसकी धतुराई और गति काम आती थी । एक बार काठमांडू में एक हाथी 'मस्त' हो गया । जब हाथी मस्त हो जाता है तो वह अत्यन्त भयावह हो जाता है । अनुभवो महावत इस अस्थायी पक्षी के बिठ पहचानते हैं और अस्त होने का पूर्व ही उसके परों को बोहरी मोटी लोहे की जालों से बांध दते हैं । उस मस्त हाथी ने अपने महावत को मार डाला था और वह काठमांडू से भयकर खौत्कार करता गाँवों की ओर भाग गया और वहाँ उसने सभी को भयभीत कर दिया । कोई उसकी पुन पकड़ने का साहस नहीं करता था । जब जगबहादुर को यह खबर मिली तो वह अचला उसकी पकड़न गया । वह हाथी प्रतिदिन एक ही रास्ते से आता था और उसी क्षेत्र में फिरता था । जब वह प्राप्त काल आता तो एक गाँव के पास से निकसता था ।

जगबहादुर ने दाही महावत को पास ही लड़ा रहने की आज्ञा दी और सड़क के पास एक पेड़ पर चढ़कर उसकी दाहों पर हाथों की प्रतीक्षा करता रहा। जब पागल हाथी उसका नीचे से निजला तो वह धीरे से उसकी गदन पर कूद पड़ा। हाथी अब उसकी बीच फँक देने के लिए प्रयत्न करने लगा। जगबहादुर के लिए यह जीवन-मरण का सघष था। यदि हाथी उसको अपनी गदन पर से फँक देने में सफल हो जाता तो फिर उसकी मृत्यु निश्चित थी। किन्तु जगबहादुर जोंक की तरह घिपट गया। दाही महावत डोडा और उसने हाथों की एक टांग में सोहे की खंजीर डालकर उसे पेड़ से बांध दिया। जगबहादुर ने फिर पेड़ की डाल को पकड़ लिया और पेड़ पर से उतर गया।

जगबहादुर जैसे साहसी और महारानीसी युवक के लिए नेपाल की छोटी-सी सेना में विशेष उन्नति के लिए अवसर नहीं था। अस्तु उसने सेना छोड़ दी। उसने बिना अवकाश के ही अवकाश ले लिया। पाँडे लोगों की दृष्टि उस पर थी। वे उसको छतरनाक व्यक्ति मानते थे। अस्तु उसने देश ही छोड़ दिया और लाहौर चला गया। लाहौर में उसने क्या किया और वह किस उद्देश्य से गया यह नहीं कहा जा सकता। यदि उसका उद्देश्य महाराजा रणजीतसिंह को अंग्रेजों के विरुद्ध उभारना था तो यह अमफल रहा यदि उसका उद्देश्य उसकी सेना में कोई उच्च पद प्राप्त करना था तो भी वह सफल न हुआ। लाहौर में सफल न होने से उसकी आशिया दगा गिर गई। उसके पास का धन जब समाप्त हो गया तो बिना किसी हिचक के वह नेपाल आया और अपनी सेना में शामिल हो गया। नेपाल सेना में उसे कोई बड़ा नहीं दिया गया परन्तु उसकी पदोन्नति हो गई। उसके पिता काजी बलनार की भी जेल से मुक्त कर दिया गया। नेपाल सेना के अधिकारियों ने सोचा कि सिक्ख सेना में रहकर जगबहादुर नवीन रण-कौशल की शिक्षा लेकर लौटा है।

जगबहादुर ने लौटने पर पाया कि यह बड़े ही अनुकूल समय पर लौटा है क्योंकि उसी समय महारानी ने उसका चाचा मायबरसिंह को वापस बुला भेजा था। मायबरसिंह को महारानी ने दण के सर्वोच्च पद (प्रधानमंत्री) पर नियुक्त किया था। घटपत्रों के बीच मायबरसिंह प्रधानमंत्री बना था। उसको एक विश्वासनाम सहायक की आवश्यकता थी। उसने अपने भतीजे जगबहादुर को जो साहसी, वीर और दृढ़ विचारवाला था अपना सहायक बना। जगबहादुर ने एक बार फिर सेना को छोड़ा और अपने चाचा के साथ काठमांडू आ गया। आरम्भ में जगबहादुर अधिक सक्रिय नहीं हुआ। वह केवल नेपाल की राजनीति को बल और परस रहा था।

जगबहादुर के प्रारम्भिक कूटनीतिक अनुभव अधिक सुखद नहीं थे। मायबरसिंह चाचा अंग्रेजों से प्रसन्न नहीं था। उसने अंग्रेजी कम्पनी की शक्ति का सही अंदाज नहीं लगाया। मायबरसिंह पुन सिक्किम, गढ़वाल और कुमायूँ को सेना चाहता था तथा भवान के उसी भाग को हड़पना चाहता था। लाहौर-बरवार रणनीतिसिंह भी अंग्रेजों पर आक्रमण करना चाहता था और क्योंकि मायबरसिंह का लाहौर-बरवार से परिचय था अस्तु सिक्ख राय और नेपाल में अंग्रेजों के विरुद्ध बुरािमसिंध चलने लगी। सिक्ख प्रतिनिधि मंडल बनारस पहुँचा और मायबरसिंह ने जगबहादुर को उससे बात करने के लिए भेजा। नेपाल सरकार तथा सिक्ख एक बार सभी स्वतंत्र शासकों की सगठित कर अंग्रेजों को देश से निकालबाहर करना चाहते थे। बनारस में सभी मिसकर, अंग्रेज

विरोधी अभियानकी योजना बनाना चाहते थे। धनारस के स्थानीय अप्रज अधिकारी बहुत सतर्क थे। उन्होंने नेपाली मिशन तथा सिक्ख प्रतिनिधि-मंडल को मिलने ही नहीं दिया। विवश होकर जगबहादुर तथा नेपाली मिशन को लौटना पड़ा। गवनर जनरल ने नेपाली मिशन को धनारस तुरन्त छोड़ देने की आज्ञा दी और सिक्ख मिशन को सम्मान के साथ लाहौर के लिए विदा कर दिया गया। नेपाल तथा सिक्खों का दृश्यत्र सफल न हो सका।

जगबहादुर काठमांडू लौटकर पुन फौज में काम करने लगा। महा राजा बुद्धिहीन और शासन में प्रभावशाली हस्तक्षेप करने के अयोग्य था। वह दंग की राजनीति में प्रभावहीन था। महारानी थापा परिवार की मित्र थी। उसका मित्र और प्रेमी गगनसिंह प्रधानमन्त्री के प्रभाव को सदह की दृष्टि से बलता था और उससे ईर्ष्या करता था। महाराजकुमार सुरेन्द्रविक्रम पहले की भांति पांडों का समर्थक और जिद्दी था। जगबहादुरसिंह परिस्थितिवश माय बर्रासिंह का आवसी था। महाराजकुमार सुरेन्द्र जगबहादुर की बढ़ती हुई शक्ति को बेलकर ईर्ष्या करता था और उसको अपना शत्रु मानता था। यदि जगबहा दुरसिंह सावधान और सतर्क नहीं रहता तो उसके जीवन का अन्त शीघ्र ही हो जाता। सुरेन्द्रविक्रम उसको मार डालना चाहता था। यह उसको गहरी घृणा से बलता था।

एक बार जगबहादुर महाराजकुमार सुरेन्द्रविक्रम के साथ घोड़े पर सवार चल रहा था। वर्षा के दिन थे सभी नदी नालों में भयंकर बाढ़ आ रही थी तो वे एक भयंकर नासे के समीप आए जिस पर लकड़ी का पुल था। उस पर केवल दो लकड़ी के लट्ट पड़े थे। सुरेन्द्रविक्रम ने अपने अंगरूक जगबहादुर को उन लट्टों के पुल को पार करने की आज्ञा दी। जगबहा दुर आगे बढ़ा। जब महाराजकुमार सुरेन्द्रविक्रम ने बलता कि यह उस भयंकर बुर आगे बढ़ा। जब महाराजकुमार सुरेन्द्रविक्रम ने बलता कि यह उस भयंकर जल-पारा में न गिरकर पार निकल जावेगा तो उसने आज्ञा की कि वह बीच से ही लौट आवे। भयंकर सतरा था। तनिक भी विचलित होने पर उसका अन्त समीप था। परंतु जगबहादुरसिंह अत्यन्त कुशल अंगारोही था। नेपाल में उससे अच्छा कोई अंगारोही नहीं था। उसने घोड़े को बुदाकर उसका मुँह पीछे की मोड़ दिया और उसने आध बीच से पीछ की ओर पुल पार कर दिया। महाराजकुमार सुरेन्द्रविक्रमसिंह का यह वार खाली गया।

उसके कुछ समय उपरान्त महाराजकुमार सुरेन्द्रविक्रमसिंह ने महा राजा से जगबहादुर को कुए में फिक्काकर मार डालने की आज्ञा प्राप्त करली। उसने जगबहादुरसिंह पर कोई झूठा दोषारोपण किया। उस झूठे दोषारोपण के बहाने का कोई प्रयत्न नहीं किया। यह भी सम्भव है कि वह विषण हो इस स्थिति में न हो कि उसको सहायता कर सक्ता।

जगबहादुरसिंह को सम्भवत आनेवाली विपत्ति का अनुमान था। उसने काठमांडू के सभी बंधों का अध्ययन किया। उन्हें घस कर बसा और उनमें बूढ़ने का अभ्यास किया। यह हो सक्ता है कि उसने उस कुए को ही पसंद किया हो जिते वह मलीनांति जानता था अथवा जतने अपनी मृत्यु का यह तरीका स्वीकार किया क्योंकि उससे बंध निकलने की सम्भावना थी। जो भी हो उसको कुए में फेंककर मार डालने की आज्ञा ब बी गई। जब जग बहादुरसिंह कुए पर लाया गया जिसमें फेंककर वह मारा जानेवाला था तो

उसने दत्ता कि महाराजकुमार तथा उसके अंगरक्षक इत्यादि उसकी मृत्यु की बेइतने प लिए एकत्रित हैं। जगबहादुरसिंह ने महाराजकुमार से प्रायना की कि उसे कुछ म पेंकबर अपमानित न किया जाये। वह स्वय ही उनमें बूद पड़ेगा। महाराजकुमार ने अपनी उदारता प्रदर्शित करने के लिए उसे स्वय बूदने की आज्ञा दे दी। जगबहादुर कुछ म बूद गया। दशक लोग अपने-अपने स्वामों की सौट गए।

जब जगबहादुर एक घार पानी के ऊपर आया तो उसने कचे की डोवार के निकल हुए पत्थरों की दृढ़ता से पकड़ लिया और पानी की तेजी से वह उसको पकड़ रहकर अपने को डूबने से बचाए रख सका। रात्रि पकड़न पर उसके मित्र आए और उन्होंने रस्ती लटकारी। जगबहादुर उस रस्ती के सहारे ऊपर आ गया। कुचे से निकलते ही उसने काठमांडू छोड़ दिया। वह अज्ञात घास म चला गया और अनुकूल अवसर की प्रतीक्षा म छिपा रहा। वह उस समय प्रकट होना चाहता था जब पापा-वग का प्रभाव बहुत अधिक हो और महाराजकुमार प्रभावहीन हो जायें। कुछ समय के उपरान्त अनुकूल अवसर बसकर वह अपने पुत्र स्थान म निरुत्तर प्रकट हो गया।

ऐसी परिस्थितियों में जबकि जगबहादुरसिंह को सब तरफ से खतरा था और धारों और स गत्रों से घिरा हुआ था तो यदि वह स्वभाव से सहिष्णु और गान्त व्यक्ति होता तो भी उसका शांत और सहिष्णु बने रहना सम्भव नहीं था। परन्तु जगबहादुर जस असहिष्णु और स्वच्छद प्रकृति के व्यक्ति की इन परिस्थितियों ने उसे और सगर्क अज्ञात और कठोर धमा दिया। यदि वह चाहता तो काठमांडू को जहाँ पड़्यत्र हरया तथा क्षिप्र स्नान आए दिन की यात भी छोड़ कर अपने पनूक गृह को जा सकता था। यदि वह ऐसा करता और भविष्य में कमी पांडे शक्तिगालो हो जाते तो उसके सम्पूर्ण परिवार का विनाश अवश्यम्भावी था। उसको खतरा होते हुए भी उसे उस खतराक स्थिति में रहना था। यदि वह राजनीति की तिलांजलि देकर काठमांडू छोड़ जाता तो उसकी मृत्यु और परिवार का विनाश अवश्यम्भावी था।

जगबहादुर राणा

जगबहादुर राणा में जब नेपाल का शासन-भूत्र सम्हाला तो उसके उपरान्त नेपाल का इतिहास उसका जीवनकाल में वास्तव में उसका व्यक्तिगत इतिहास बन गया। वह सर्वशक्तिमान था परन्तु वह स्वय अपना परामर्शवाता था। वह किसी से परामर्श करके कोई काम नहीं करता था। जगबहादुर राणा का अक्ष तक का जीवन-वृत्तान्त उसके धरित्र की कोई धृष्ट उज्ज्वल रूप में प्रकट नहीं करता। उसने अपने उस चाचा को जिसने उसको भागे बढ़ाया मार डाला। लोग कह सकते हैं कि महाराजा के क्रोध के भय से और अपने जाबज्ज की रक्षा के लिए उसने अपने चाचा को मारना स्वीकार कर लिया। परन्तु जगबहादुर ऐसा कायर नहीं था कि वह महाराजा के भय से ऐसा जघन्य कार्य करता। उसने कोट हरयाकांड द्वारा नेपाल में अपनी सत्ता को स्थापित किया था वह कांड भी उसके पश की बढ़नेवाला नहीं था। कोट-हरयाकांड के सम्बन्ध में राणा जगबहादुर की मृत्यु पयन्त यह मान्यता थी कि उसका एकमात्र कारण महारानी का उच्छल और वीमत्स आचरण था। परन्तु विचारवान व्यक्तियों की मान्यता थी कि उसने अपनी सत्ता स्थापित करने के लिए ऐसा किया था।

1. महारानी उस समय भी नेपाल की गान्तिका (रिजेंट) थी।
 हनुमानघोक महल से वह गान्तिका के अधिकारों का प्रयोग करती थी। काठ
 मांडू में जगबहादुर के कठोर और दृढ़ शासन के कारण कुछ दिनों तक गान्ति
 रही। जबकि उसका अभागा पति महाराजा राजे द्रविक्रम बागी-यात्रा के लिए
 प्रत्यान करने ही वाला था उसने एक दार फिर प्रहार किया। महाराजा का
 स्वामिभक्त सेवक नवानीसिंह जो अपने स्वामी के पास हाथी पर बठा था महा
 रानी की आज्ञा से मार डाला गया। काठमांडू में आतंक और भय छा गया।
 राणा जगबहादुर ने सेना को सजग और सतक रखा क्योंकि यह नेपाल को
 घाटी को एक दूसरे भयकर क्षिप्र-स्नान से बचाना चाहता था। महारानी
 को अब भी विश्वास था कि राणा जगबहादुर उसके कहे अनुसार करेगा अतएव
 यह उस पर विश्वास करती थी। उसने राणा जगबहादुर से धनवरत मांग
 करना आरम्भ करबी कि महाराजकुमार सुरेन्द्र तथा उसके भाई को मारकर
 उसके पुत्र को राजसिंहासन पर बठाया जाये। राणा जगबहादुर से जब भी
 वह इस सम्बन्ध में बात करती तो वह मन्त्रतापूर्वक उसके विचार से अपना
 मतनेद प्रकट करता। बात यह थी कि राणा जगबहादुर जानता था कि महा
 रानी अत्यंत भयकर है। यदि उसको परामृत नहीं किया गया तो वह उसके
 लिए क्षतरनाक हो जायेगी। अस्तु यह भी कारण था कि उसने उसकी इच्छा को
 पूरा नहीं किया। यदि महाराजा राजे द्रविक्रम सनकी और बुद्धिहीन था तो
 महारानी राक्षसी स्वभाव की थी। राणा जगबहादुर ने धीरे धीरे महारानी
 के कुट्टियों तथा पदचित्रों के प्रमाण इकट्ठा करना आरम्भ किया और उस रक्त
 की प्यासी महारानी की शक्ति को समाप्त करने की योजना तयार करली। एक
 दिन प्रातःकाल जब कि महारानी अपनी भयानक योजना पर सोच विचार कर
 रही थी कि उसको राणा जगबहादुर का एक पत्र मिला। उसमें लिखा था—
 'शुभा साधना की पत्र मिला जितम मुझे इस बाय को करने का आवेग दिया
 गया है जिसे मैं जघन्य अपराध मानता हूँ। मैं मन्त्रतापूर्वक भीमती के इस
 आवेग का विरोध करता हूँ क्योंकि यह अत्यंत अजायबपूर्ण बात होगी कि बड़े
 लड़के के अधिकार को छोड़कर छोटे को सिंहासन पर बठाया जाये। न तो
 यह न्यायसंगत है न यह हमारे परम्परा ही है और यह सभी कानूनों के विरुद्ध
 है। फिर चाहे वे मानवीय कानून हों या बड़ी नियम हों। इसके अतिरिक्त
 महाराजकुमारों की हत्या, आत्मा तथा धर्म के विरुद्ध भयकर पाप है। इन
 कारणों से मुझे खेद है कि मैं भीमती की आज्ञा नहीं मान सकता। गान्तिका के
 रूप में मरा जो आपके प्रति कृतव्य है उसके अतिरिक्त मेरा अपने दंग और
 राज्य के प्रति भी कृतव्य है और यदि बोना कृतव्यों में टक्कर होगी तो राज्य
 के प्रति कृतव्य व्यक्तित्व सम्बन्ध से ऊपर होगा। राज्य के प्रति मेरा कृतव्य
 मुझे आवेग देता है कि यदि साम्राज्यी मुझ पुत्र ऐसी आज्ञा देंगी तो भीमती
 को राज्य के कानून के अनुसार हत्या का प्रयत्न करने के लिए बग के कानून द्वारा
 दंडित किया जावेगा।

उस पत्र को पढ़कर महारानी को बहुत शोक आया। उसने देखा
 कि राणा जगबहादुर ने आरम्भ में तो मन्त्रता से अपना विरोध प्रकट किया
 था किंतु पत्र के अंत में दृढ़ता और क्रूरता का परिचय दिया। महारानी
 ने देखा कि निरा व्यक्तित्व पर उतने अनोखे विश्वास किया था जिस ऋचा
 उठाकर भयानक का सर्वोच्च पर प्रदान किया और जिसके कहने पर उसने कोट

मे हत्याकांड करवाया और जो उस समय उसकी रक्षा के लिए छाया की तरह उसके पास ही पड़ा रहा या वही उसे हत्या के प्रयत्न के लिए बग के कानून द्वारा दंडित करने की धमकी दे रहा है। महारानी को तो एक ही कानून याद था अर्थात् जो उसका विरोध करे उसको मरवा देना। अस्तु उसने राणा जग बहादुर को मरवा डालने का निश्चय कर लिया। वह भूल गई कि राणा जग बहादुर अत्यन्त घुत धतुर, स्थिति की नाप तोल करनेवाला और कूटनीतिज्ञ था। उसको मरवाना सरल नहीं था। उसने अपनी योजना को बड़े गुप्त रूप से तयार किया था। उसका विश्वास था कि उसकी गुप्त योजना का किसी को पता नहीं घसेगा। उसने एक व्यक्ति विरघोज बसनत को राणा जगबहादुर को मारने के लिए तयार किया। उसने उसको पवित्रतम शपथ दिलाकर कि वह इस पद्यत्र को गुप्त रखेगा राणा जगबहादुर की हत्या करने को नियुक्त किया। उसका पुरस्कार भी अनोखा था। महारानी ने उसको यग-परम्परागत प्रधान मंत्री का पद देने का वचन दिया था। कहने का तात्पर्य यह कि प्रधानमन्त्रित्व उसी के यग में रहेगा। प्रधानमंत्री पद पर बने रहने के लिए यदि आवश्यकता हो तो उसको तथा उसके यगजों में से प्रत्येक को सात सून माफ के अर्थात् प्रत्येक यगज को सात व्यक्तियों की हत्या करने की छूट थी। उसको कोई बण्ड नहीं दिया जा सकता था। अग्न्य ही राजयग के किसी सदस्य की वह हत्या नहीं कर सकता था। उस रक्त पिपासु महारानी तथा उस दक्षिण और सत्ता के छाएची विरघोज बसनत में यह अप्रुथ सोदा हुआ।

महारानी की योजना यह थी कि विरघोज बसनत जगबहादुर और उसके ६ भाइयों को दोनों महाराजकुमारों के महलों में रहने के लिए राजी करे और इस प्रकार वे दोनों राजकुमारों के महलों में ही सोयें। एक रात्रि को बसनत का दल उस महल में घुसकर उन दोनों महाराजकुमारों को और यदि उसका पति भी वहां मिल जाय तो महाराजा को मार डाले। जगबहादुर राणा और उसके भाइयों पर यह बोधारोपण किया जाये कि उसने दोनों महाराज कुमारों और महाराजा को मारा है शतएव उनको प्राणबण्ड दे दिया जाय। इस प्रकार एकसाथ ही सब यगजों का सफाया कर दिया जाय। उनको यह योजना छोड़नी पडी। राणा भाई कोई मूख और बुद्धिहीन नहीं थे जो इस पद्यत्र के गिहार हो जाते। दूसरी योजना तयार की गई। उस योजना के अनुसार बसनत किसी प्रकार राणा जगबहादुर को हजुमानघोक महल के एक एकांत कक्ष में बुला ले जहां महारानी भी उपस्थित रहे और जगबहादुर को मारनेवाले उपयुक्त स्थान पर छिपे रहें।

महलों में राजघराने के बच्चों के लिए एक शिक्षक था उसका नाम विजयराज था। वह विद्वान परंतु मीठ पुरुष था। विरघोज बसनत ने उसे सफलता प्राप्त होने पर राजपुरोहित बनाने का वचन देकर जगबहादुर को हनुमानघोक महल में निश्चित कक्ष तक किसी प्रकार लाने के लिए तैयार कर लिया। विजयराज राणा जगबहादुर को बुला लाने के लिए गया और बसनत तथा उसके साथी उपयुक्त स्थान पर छिपकर जगबहादुर के आने की प्रतीक्षा करने लगे। बहुत समय व्यतीत हो गया किन्तु न तो राणा जगबहादुर ही आया और न विजयराज ही लौटा।

विजयराज कुछ घबड़ाया हुआ-सा महाप्रभावशाली प्रधानमंत्री के महल लगभगदोल में घुसा। उसको राणा जगबहादुर ने सुरत बुला लिया।

विजयराज ने महारानी का सदश कह सुनाया। जगबहादुर ने उसे ऊपर-नीचे अल्पन्त रुले ढग स गम्भीर होकर देखा और धुड़ककर कहा कि तुम्हारा इस प्रायना से वास्तविक उद्देश्य क्या है? विजयराज मोरु पड्यत्रकारी था। वह घबडा गया उसने इस घडकी का यह अप लगाया कि प्रधानमत्री को पड यत्र का पता लग गया है। मय के कारण उसने समस्त पडयत्र का भडाफोड कर दिया। तुरत ही जगबहादुर न अपनी सेना की ६ कम्पनियों को साथ ले हमानघोक महल को प्रस्थान पर दिया।

विरधोज ने भी मूलों की माति ध्यवहार किया। वह यह न समझ सवने के कारण कि राणा जगबहादुर अभी तत्र क्यों नहीं आया और न उसका पडित सवगवाहक ही लौटा घोड पर चडकर तेजी से सबक पर प्रधानमत्री के मयन लगलटोल की ओर चल दिया। यह सीधा जगबहादुर की सेना के सामने पहुँच गया। फिर भी यह सीधा आगे बढ़ा चला गया। पीछे मुडकर अपने साथी पडयत्रकारियों को भाग जान की चेतावनी भी उसने नहीं दी। कृष्णबहादुर ने उसे दखा और उसे पकड लिया। उसके अस्त्र-शस्त्र छीन लिए और उसे अपने भाई राणा जगयहादुर के सामने ले गया। बिसनत ने महामहिम प्रधानमत्री को अभिवादन किया और उससे कहा कि महारानी उससे तुरत ही महल मे मिलना चाहती हैं। प्रधानमत्री ने उत्तर दिया यह क्योंकर होगा प्रधानमत्री तुम हो न कि मैं! महारानी ने सुगुँ प्रधानमत्री घनाया है न कि मुझ। उगुँ मुझसे मिलने की अभिलाषा क्यों है? प्रधानमत्री ने इतना कहकर सबैत किया वह बिसनत की मृत्यु का सकेत था। विरधोज मार दिया गया और जगबहादुर सेनासहित आगे बढ़ा। महल मे पहुँचकर जगबहादुर की सेना ने बिसनत के सहयोगियों को घेर लिया। जिगुँने विरोध किया उगुँ मार दिया गया। जिगुँने अपने हथियार बे दिये उगुँ पकडकर जजीरों से बाप दिया गया।

जगयहादुर बिना बायें बायें वले सीध मटाराना के रहने के कमरों में तेजी से चला गया। महारानी ने मयभीत होकर दखा कि जिस ब्यक्ति को वह मरे हुए के बराबर समझती थी वह मगुँ तक घोड पर चडकर आया है और महाराना से मिलना चाहता है यही नहीं यह महाराना स अकेल मे तुरन्त ही बिसने की इच्छा प्रकट करता है। उसने कुछ अपने सदेगवाहक भेजे। जगबहादुर ने उनको और मुकुटी घडाकर सीधे दखा तो वे लोग मय भीत हो उठे। यह महल मे टटने लगा और इस यात की माँग की कि उसे तुरन्त महाराना के पास ले जाया जाय। महारानी जान गई कि पडयत्र अस्त फल हो गया। परन्तु फिर भी उसने पराजय स्थीकार नहीं की। वह महाराना के पास चली गई और उसको बगल में बठ गई जिससे कि जगयहादुर महाराना से अकेल में न मिल सके। महारानाकुमार सुरेन्द्रबिधम उनके समीप ही सडा था।

महारानी ने हस्तक्षेप करना घाटा बिन्दु उसने मूक घृणा के साथ उसकी जपेसा की और अपनी पगड़ी सिहासन के पाये के पास रखकर स्पष्ट बायों मे बिना किसी उजसजना के गम्भीरतापूर्वक महारानी को तुरन्त वेगनिकाले और मपाल स बाहर भेज दिए जाने की आज्ञा देने की माँग की। उसने अपने सनिकों की ओर देखा। महारानी की वहाँ से ले जाया गया और उसके निज के कमरों में बड कर दिया गया। प्रधानमत्री मगुँ से बापस चला गया।

वापस आकर उसने राय परिवद (बीसिल) को बुलाया और खुनी महारानी के बारे में निणय किया। महाराजा और महाराजकुमार ने महारानी के अपराधों को सूची पर और उसके विरुद्ध राज्य परिवद ने जो निणय किया था अपनी नुहर लगादी। औपचारिक रूप से उसको दायिका (रिजेंट) के पद से हटा दिया गया। उसका विरुद्ध इन शर्तों में निणय दिया गया। 'तुमने सबकुछ व्यक्तिमों को मरवा दिया और अपनी प्रजा को घात यत्रणा ही प्रजा को घोर बध्ट दिए और उनका घोर अहित किया उनका बध्टों का तय तक अन्त नहीं होगा जब तक कि तुम बेग में रहोगी ऊपर लिये अपराधों के बण्ड स्वरूप तुम्हें माफ़ा ही जाती है कि तुम बेग से बाहर निकल जाओ और सुरत वाराणसी जाने की सपारो करो।

महारानी के सारे पश्यत्र अतफल हो चुके थे। उसको देश से बाहर निकल जाने की आज्ञा मिल चुकी थी। उसने इस बात पर यल दिया कि वह अपने दोनों पुत्रों रानेन्द्र और धोनेन्द्र को नपाल में छोड़कर अपने साथ ले जावेगी। वह उन्हें काठमांडू में वहीं छोड़ जावेगी जहां उनका जीवन का खतरा है। जग बहादुर को इच्छा थी कि उनको मां के साथ न जान दिया जाय जिससे कि महारानी बाहर से पश्यत्र न कर सके। किन्तु महारानी अपने पुत्रों को साथ ले जाने पर तुंग गई। अंत में जगबहादुर को अनिच्छापूर्वक राजकुमारों का उसके साथ जाना स्वीकार करना पडा। उसने नियत महाराजा को भी यह घोषणा करने के लिए बियोग कर दिया कि वह भी पबित्र गंगा के तट पर वाराणसी में रह कर अपने पापों को धोना चाहता है। अस्तु वह भी महारानी के साथ वाराणसी जावेगा। महारानी जानती थी कि महाराजा को अपनी मुट्ठी में रखकर फिर भी वह नपाल की राजनीति में थोडा बहुत दखल दे सकती है। जगबहादुर ने महारानी के उस बल के साथ अपनी सेना की छ दुर्बलियों को सीमा तप पहुँचाने की भेगा जिससे कि कदाचित् महारानी वापस म लौट आये। महाराजा का परिवार २१ नवम्बर १८४६ को बेग छोड़कर भारत की ओर चल दिया। राज्य परिवद ने महाराजकुमार सुरेन्द्रबिक्कम को महाराजा की अनुपस्थिति में शासक (रिजेंट) नियुक्त कर दिया। बनारस में नपाल से निर्वासित दलयहादुर को महारानी ने अपना मया प्रमी स्वीकार कर लिया। अपने नये प्रेमी के साथ मित्रकर वह नपाल के वर्तमान शासन के विरुद्ध पश्यत्र रचने की कल्पना करने लगी।

जिस दिन महाराजा और महारानी नपाल छोड़कर वाराणसी गए (२३ नवम्बर १८४६) और जिस दिन नवम्बर १९५० में राणाशाही का अन्त हुआ उस लम्बे सौ वर्ष से अधिक समय में नपाल पर राणाओं का एकछत्र शासन रहा। महाराजा अपने प्रधानमंत्री के हाथ की कठपुतली था। यही नहीं महाराजा की स्थिति तो कवी की सी थी। वह केवल अपने महल में भोग विलास भर कर सकता था। शक्ति के नाम पर वह बेघारा शून्य और मगध था।

महाराजा और महारानी के नपाल छोड़कर चल जाने के उपरांत समस्त संसा राणा जंगबहादुर में केन्द्रित हो गईं। राणा जंगबहादुर प्रधानमंत्री था और उसके भाई भतीजे तथा अन्य सम्बन्धियों के अधिकार में नपाल के सभी महत्वपूर्ण पद थे। सेना उसके भाई के अधिकार में थी। सुरेन्द्रबिक्कम जो शीघ्र ही महाराजा बननेवाँसा था नाममात्र के शासक से भी कम प्रभावशाली था।